हार्दिक श्रद्धांजलि

-: लेखक :-

पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

हार्दिक श्रद्धांजलि

लेखक

जिनशासन के अजोड़ प्रभावक,
महाराष्ट्र देशोद्धारक स्व. पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रामचंद्रसूरीश्वरजी महाराज के तेजस्वी शिष्यरत्न, बीसवीं सदी के महान् योगी,
नवकार महामंत्र के अजोड़ साधक निःस्पृह शिरोमणि, पूज्यपाद पंन्यासप्रवर
श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य के चरम शिष्यरत्न, प्रवचन-प्रभावक,
मरुधररत्न, हिन्दी साहित्यकार पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

218

प्रकाशक

दिव्य सन्देश प्रकाशन

C/o. सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेंबर्स, 507-509, जे.अेस.अेस. रोड,
चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E), मुंबई-400 002.
Cell : 8484848451 (only whatsapp)

आवृत्ति : प्रथम • **मूल्य** : 190/- रुपये • **प्रतियां-** • **दि.** 25-5-2021
विमोचन स्थल : पुरुषादानीय पार्श्वनाथ जैन मंदिर-जैन संघ-बल्लारी (कर्णाटक)

आजीवन सदस्य योजना

आजीवन सदस्यता शुल्क - 3000/- रु.

- आप जैन धर्म के रहस्य-जैन इतिहास-जैन तत्त्वज्ञान-जैन आचार मार्ग, प्रेरणादायी कथाएँ आदि का अध्ययन करना चाहते हों तो आज ही आप दिव्य संदेश प्रकाशन मुम्बई की आजीवन सदस्यता प्राप्त कर लें। सदस्य बनते ही अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि स्व. पूज्यपाद पंन्यासप्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य**श्री एवं उन्हीं के चरम शिष्यरत्न प्रवचन प्रभावक परम पूज्य ***आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.*** सा. द्वारा लिखित उपलब्ध 10 पुस्तकें दी जाएगी और अर्हद् दिव्य संदेश मासिक तथा भविष्य में हिन्दी भाषा में प्रकाशित पुस्तकें (Open Book Exam साधु–साध्वी उपयोगी पुस्तके एवं पुनः मुद्रित पुस्तक को छोडकर) घर बैठे प्राप्त होंगी। आप आजीवन सदस्यता शुल्क मुंबई या बैंगलोर के पते पर दिव्य संदेश प्रकाशन-मुंबई के नाम से चैक व ड्राफ्ट से भेजें।

प्राप्ति स्थान

1. चेतन हसमुखलालजी मेहता
भायंदर (M.S.)
M. 9867058940

2. प्रवीण गुरुजी,
C/o. श्री आत्म कमल लब्धिसूरि जैन पुस्तकालय
श्री आदिनाथ जैन टेंपल,
चिकपेठ, बेंगलोर-560 053.
M. 9036810930

3. राहुल वैद,
C/o. अरिहंत मेटल कं.,
4403, लोटन जाट गली,
पहाड़ी धीरज, सदर बाजार,
दिल्ली-110 006.
M. 9810353108

4. चंदन एजेन्सी
मुंबई, M. 9820303451

आजीवन सदस्यता शुल्क
Rs. 3000/- भिजवाने का पता एवं पुस्तक-प्राप्ति-स्थान :

(1) दिव्य संदेश प्रकाशन

C/o. सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेंबर्स, 507-509, जे.ओस.ओस. रोड, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E), मुंबई-2. Mobile : 8484848451 (only whatsapp)

(2) दिव्य संदेश प्रचारक

प्रकाश बड़ोल्ला, 52, 3rd Cross, शंकरमाट रोड, शंकरपुरा, बैंगलोर-560 004. Tel. (O.) 4124 7478 M. 8971230600

प्रकाशक की कलम से...

नमस्कार महामंत्र के बेजोड़ साधक, नि:स्पृह शिरोमणि **पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न हिन्दी साहित्यकार **पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** द्वारा आलेखित–संपादित 218 वीं पुस्तक का प्रकाशन करते हुए हमें अत्यन्त ही हर्ष हो रहा है ।

प्रस्तुत पुस्तक में स्व. अध्यात्मयोगी पूज्यपाद गुरुदेव श्री एवं उनके शिष्य आदि स्वर्गस्थ महात्माओं की संक्षिप्त जीवन झांकी प्रस्तुत की है ।

मैत्री आदि चार भावनाओं से अपने जीवन को सुवासित कर जगत् के जीव मात्र के साथ जिन्होंने आत्मीयता का नाता जोड़ा था ।

पूज्यपादश्री के आदर्श जीवन से प्रेरित होकर उनके कई शिष्यरत्नों ने साधना व समाधि का एक श्रेष्ठ आदर्श प्रस्तुत किया था ।

पूज्यपाद श्री के अनेक शिष्यों ने वर्धमान तप में खूब-खूब प्रगति की थी इसी के फलस्वरूप अनेक महात्माओं ने वर्धमान तप की 100 ओलियां पूर्ण की थी ।

पिछले 100-150 वर्ष के इतिहास में श्रमण संख्या में से सर्वप्रथम वर्धमान तप की 100 ओली करनेवाले पूज्यपाद श्री के शिष्य **पूं.पं. श्री हर्षविजयजी म.** थे ।

तो **पू.पं. श्री जिनसेनविजयजी म.** ने 100 + 100 + 48 वीं वर्धमान तप की 248 ओलियाँ भी की थी ।

प्रस्तुत पुस्तक में स्व. अध्यात्मयोगी पूज्यपाद गुरूदेवश्री के स्वर्गीय शिष्य-प्रशिष्य व आश्रितगणों का यत् किंचित् परिचय दिया गया है ।

अध्यात्मयोगी पूज्य गुरूदेवश्री अध्यात्म जगत् के कुशल माली थे, उन्होंने अथक प्रयास कर अपने आश्रितगण के जीवन बाग को संवारने काम किया था । इसी के फलस्वरूप कई आदर्शभूत आराधक व साधक व त्यागी तपस्वी महात्माओं का सर्जन हुआ ।

जिन्होंने भयंकर शारीरिक वेदना, रोग व पीड़ा में भी अत्यंत समाधिपूर्वक देह का त्यागकर एक सुंदर आदर्श प्रस्तुत किया है । उन उत्तम आत्माओं के आदर्श जीवन को जानकर अन्य आत्माओं को भी कुछ प्रेरणा मिले, इसी ध्येय को लक्ष्य में रखकर यह संकलन तैयार किया है ।

उन महात्माओं के आदर्श जीवन व परमोच्च समाधि से प्रेरित होकर हम भी उन्हीं के आदर्श मार्ग पर चलने के लिए प्रयत्नशील बनेंगे तो लेखक पूज्य आचार्य भगवन्त का यह श्रम अवश्य सफल व सार्थक बनेगा ।

लेखक की कलम से...

मात्र 25 वर्ष की युवावस्था में आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का स्वीकार करनेवाले तथा 4 वर्ष के पुत्र व पत्नी का त्यागकर 28 वर्ष की भर युवावस्था में भागवती दीक्षा अंगीकार कर भगवानदास में से **मुनि श्री भद्रंकरविजयजी** बनकर हजारों को सन्मार्ग की राह दिखाने वाले पुण्यनामधेय अध्यात्मयोगी, निःस्पृह शिरोमणि, नमस्कार महामंत्र के बेजोड़ साधक–चिंतक एवं अनुप्रेक्षक पूज्यपाद परमाराध्यपाद स्वनाम धन्य परम **गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के नाम-काम से भला कौन अपरिचित होगा ?

ज्योतिष मार्तण्ड **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय दानसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से कार्तिक वदी 3 वि.सं. 1987 में जिनकी भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई थी और चारित्र चुडामणि **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराजा** तथा व्याख्यान वाचस्पति **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा** की शुभ निश्रा में जिनका जीवन निर्माण हुआ था ।

जिन्होंने वर्षों तक नमस्कार महामंत्र का गहन चिंतन–मनन एवं अनुप्रेक्षा कर महामंत्र की विशिष्ट आराधना-साधना द्वारा विशिष्ट आत्म बल विकसित किया था । उसी प्रकार पूज्यश्री के अनेक शिष्यों ने भी अपने गुरूदेव की राह पर मृत्यु की अंतिम पलों में संयमबाधक किसी अपवाद मार्ग का सेवन न कर उत्कृष्ट संयम धर्म का पालन एवं आदर्श स्थापित किया था ।

सिंह सत्त्व से चारित्र धर्म का स्वीकार व उसका पालन कर मृत्यु की अंतिम पलों को भी, 'मृत्यु का भी महोत्सव में बदलनेवाले इन उत्तम आत्माओं के जीवन प्रसंगों से खूब खूब प्रेरणाएं मिलती है ।'

केंसर की भयंकर बीमारी में भी अपूर्व सत्त्व को धारण करनेवाले **पू.तत्त्वज्ञविजयजी, पू. महानंदविजयजी म., मु. श्री उदयरत्नविजयजी म.** के समता गुण की भूरि भूरि अनुमोदना ।

हार्ट की तकलीफ में भी 100 वीं ओली का पराक्रम दिखलाने वाले **पू. कल्याणप्रभविजयजी म.,** हार्ट की वेदना में भी देहातीन दशा का अनुभव करनेवाले **पू.पं.श्री हर्षविजयजी म.** हार्ट की वेदना में भी प्रभु भक्ति में मग्न रहनेवाले **पू. खांतिविजयजी म., पू. पुण्यभद्रविजयजी म.** के शौर्य की भूरि भूरि अनुमोदना ।

शारीरिक रुग्नावस्था में भी वाहन का प्रयोग न कर समाधिमृत्यु का स्वागत करने वाले सत्त्वशाली **पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.** को कोटि कोटि वंदन ।

दोनों कीडनियाँ Fail होने पर भी अपवाद मार्ग का स्वीकार न कर मृत्यु को महोत्सव बनानेवाले **पू. कुंदकुंदसूरिजी म.सा.** के सत्त्वधर्म की भूरि भूरि अनुमोदना ।

स्वर्गस्थ महात्माओं के जीवन प्रसंगों को संकलित करने में अनेक कल्याण, दिव्यदर्शन आदि मासिक तथा आत्मीय **आचार्य हेमप्रभसूरिजी** का विशेष सहयोग रहा है–मैं उन सभी के प्रति कृतज्ञ है ।

काल के प्रवाह से वर्तमान में धीरे-धीरे संयम में मंदता नजर आ रही है ।

आज से 50 वर्ष पूर्व के इन पवित्र–उत्तम महात्माओं के जीवन प्रसंगों पर नजर करते है, तब उनकी संयम दृढ़ता, निर्दोष भिक्षा वृत्ति, कठोर तप–त्याग और साधना के प्रत्यक्ष दर्शन होते है ।

उनके प्रेरणादायी जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर अपने संयम जीवन को ऊपर उठाने का प्रयत्न करेंगे तो यह संकलन अवश्य सफल व सार्थक माना जाएगा ।

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ट नं.
1.	**पूज्यपाद पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य ...**	1
	शिष्य परिवार	
1.	पं. श्री हर्षविजयजी गणिवर्य	24
2.	पू.मु. श्री पद्मप्रभविजयजी म.	37
3.	पू.मु. श्री चरणविजयजी म.	39
4.	पू.मु. श्री महानंदविजयजी म.	42
5.	पू.मु. श्री चंद्राननविजयजी म.	45
6.	पू.आ.श्री वि. कुंदकुंदसूरीश्वरजी म.सा.	47
7.	पू.मु. श्री कनकप्रभविजयजी म.सा.	59
8.	पू.मु. श्री चंद्रयशविजयजी म.सा.	61
9.	पू.मु. श्री कैलाशप्रभविजयजी म.सा.	64
10.	पू.मु. श्री कल्याणप्रभविजयजी म.सा.	66
11.	पू.मु. श्री धर्मरत्नविजयजी म.सा.	70
12.	पू.आ.श्री वि. जिनप्रभसूरीश्वरजी म.सा.	72
13.	पू.पंन्यास श्री पुंडरीकविजयजी म.सा.	86
14.	पू.उपा. श्री महायशविजयजी म.सा.	89
15.	पू.मु. श्री कीर्तिकांतविजयजी म.सा.	93
16.	पू.मु. श्री भद्रविजयजी म.सा.	96
17.	पू.मु. श्री वारिषेणविजयजी म.सा.	97
18.	पू.मु. श्री महासेनविजयजी म.सा.	100
	प्रशिष्य आदि	
1.	पू.आ.श्री वि. प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.	111
2.	पू.मु. श्री खांतिविजयजी म.	119
3.	पू.मु. श्री हीरविजयजी म.	124
4.	पू.मु. श्री चंद्रांशुविजयजी म.	125
5.	पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.	128
6.	पू.आ. श्री वि. मल्लिषेणसूरीश्वरजी म.सा.	142
7.	पू.मु. श्री अजितसेनविजयजी म.	147
8.	पू.मु. श्री कलाभूषणविजयजी म.	148
9.	पू.मु. श्री सोमप्रभविजयजी म.	149
10.	पू.मु. श्री चारित्रप्रभविजयजी म.	151
11.	पू.मु. श्री प्रेमप्रभविजयजी म.	152

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ट नं.
12.	पू.मु. श्री मेरूप्रभविजयजी म.	153
13.	पू.मु. श्री वीरसेनविजयजी म.	154
14.	पू.मु. श्री पुण्यसेनविजयजी म.	157
15.	पू.मु. श्री धन्यसेनविजयजी म.	161
16.	पू.मु. श्री दिव्यसेनविजयजी म.	163
17.	पू.मु. श्री हर्षसेनविजयजी म.	165
18.	पू.मु. श्री उदयरत्नविजयजी म.	167
19.	पू.मु. श्री कनकसेनविजयजी म.	175
20.	पू.मु. श्री पुण्यभद्रविजयजी म.	178
21.	पू.मु. श्री मुक्तिसेनविजयजी म.	180
22.	पू.मु. श्री कीर्तिरत्नविजयजी म.	182
23.	पू.मु. श्री नयविजयजी म.	185
24.	पू.मु. श्री यशोभद्रविजयजी म.	187
	पू.पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. के निश्रावर्ती	
1.	पू.मु. श्री भावविजयजी म.	188
2.	पू.मु. श्री रोहितविजयजी म.	190
3.	पू.मु. श्री महाभद्रविजयजी म.	193
4.	पू.मु. श्री विभाकरविजयजी म.	197
5.	पू.मु. श्री चंद्रसेनविजयजी म.	201
6.	पू.मु. श्री मित्रविजयजी म.	203
7.	पू.मु. श्री तत्त्वज्ञविजयजी म.	206
8.	पू.मु. श्री जयंतभद्रविजयजी म.	207
9.	पू.मु. श्री जयमंगलविजयजी म.	211
	पू.पंन्यास श्री वज्रसेनविजयजी गणिवर्य के निश्रावर्ती	
1.	पू.मु. श्री हितविजयजी म.	213
2.	पू.मु. श्री मनोबलविजयजी म.	214
3.	पू.मु. श्री तपोधनविजयजी म.	215
4.	पू.मु. श्री सुव्रतविजयजी म.	216
5.	पू.मु. श्री पंकजरत्नविजयजी म.	218
6.	पू.मु. श्री विमलरक्षितविजयजी म.	220
7.	पू.मु. श्री मेघरत्नविजयजी म.	221
	श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य श्री का शिष्य परिवार	222

पूज्यपाद गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री के जीवन की संक्षिप्त झाँकी

जन्म : मार्गशीर्ष सुद-3, संवत्–1959

जन्म–स्थल : फोफलियावाड़ा–पाटण (उ.गु.)

जन्म–नाम : भगवानदास

माता का नाम : चुन्नीबाई

पिता का नाम : हालाभाई मगनभाई

भाई : 1. वीरचंदभाई 2. लहेरुभाई 3. भोगीलाल

बहन : मेनाबहन

व्यावहारिक अभ्यास : 16 वर्ष में इन्टर

संतान : जितेन्द्रभाई

धार्मिक संस्कार : माता–पिता सुसंस्कृत होने से सुसंस्कारों का सिंचन। बाल्यवय से प्रभु–पूजा में राग, रात्रि–भोजन, कंदमूल, अभक्ष्य आदि का त्याग।

धार्मिक–अभ्यास : छोटी वय से धार्मिक–अभ्यास प्रारम्भ। तीव्र स्मरण शक्ति के कारण 12 वर्ष की छोटी वय में पंच–प्रतिक्रमणादि सूत्र और योगशास्त्र के 4 प्रकाश कण्ठस्थ। 125, 150 व 350 गाथा के स्तवन कण्ठस्थ।

ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार : वि.सं. 1984

वैराग्य भावना : यौवन के प्रांगण में प्रवेश से ही विरक्तता। तत्कालीन पूज्य मुनिश्री रामविजयजी म.सा. (बाद में आचार्यदेवश्री) के प्रवचन–श्रवण से वैराग्य पुष्टि।

धार्मिक जीवन : ज्ञान के साथ क्रिया का सुमेल। `नवपद आराधक समाज' की स्थापना में अग्रेसर। नवपद के परम आराधक। एक बार नियमित छह मास तक आयंबिल किये। संवत् 1980 में अट्ठाई तप की आराधना। वर्धमान तप की 52 ओलियाँ की।

दीक्षा उम्र	:	28 वर्ष
दीक्षा–ग्रहण	:	कार्तिक वद-3, संवत् 1987, भायखला (बम्बई)।
दीक्षा–दाता	:	सकलागमरहस्यवेदी आचार्यदेव श्री दानसूरीश्वरजी म.सा.।
गुरुदेवश्री	:	परम पूज्य पंन्यास श्री रामविजयजी गणिवर्य।
नामकरण	:	मुनिश्री भद्रंकरविजयजी।
सह–दीक्षित	:	मुनिश्री मलयविजयजी, मुनिश्री वल्लभविजयजी, मुनिश्री हंसविजयजी और मुनिश्री हंससागरजी म.।
दीक्षा दिन पद प्रदान	:	परम पूज्य अनुयोगाचार्य पंन्यासजी प्रेमविजयजी म. को उपाध्याय पदवी और परम पूज्य व्याख्यान वाचस्पति मुनिश्री रामविजयजी म.सा. को पन्यास पदवी।
शास्त्र–अध्ययन	:	पूज्य आचार्यश्री हरिभद्रसूरीश्वरजी म. तथा पूज्य न्यायचार्य उपाध्यायश्री यशोविजयजी म. के अनेकानेक ग्रन्थों का सूक्ष्मता से वाचन, मनन और चिन्तन। षडदर्शन–अध्यात्म और योग के स्वपर–दर्शन के शास्त्रों का गहनता से अभ्यास। आगम–ग्रन्थों और पूर्वाचार्य कृत अनेकानेक ग्रन्थों का गहन–अभ्यास।
बाह्य व अभ्यन्तर तप	:	वर्धमान तप की 52 ओली। दीक्षा के बाद वर्षों तक नित्य–एकासना। स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग की अपूर्व–साधना।
अनुप्रेक्षा	:	नमस्कार–महामंत्र, लोगस्स–सूत्र और उवसग्गहरं स्तोत्र के महान् अनुप्रेक्षक।
चिन्तन	:	नमस्कार महामंत्र, मैत्री आदि भावना, यति–धर्म, अष्ट प्रवचन–माता, मुक्ति और मुक्ति मार्ग आदि विषयों के महान् चिन्तक और लेखक।
शिष्य आदि परिवार	:	स्वयं के 20 शिष्य, प्रशिष्य–प्रप्रशिष्य : 101 निश्रावर्ती : 19, कुल परिवार : 140 आचार्य : 10, उपाध्याय : 2, पंन्यास : 8, कालधर्म : 62

पंन्यास पदवी	:	महासुद-12, संवत् 2007-पालीताणा ।
विहार क्षेत्र	:	मारवाड़, गुजरात, काठियावाड़ (सौराष्ट्र), हालार, अहमदाबाद, बम्बई तथा महाराष्ट्र, कर्णाटक के अनेक क्षेत्र आदि ।
शारीरिक–लक्षण	:	सौम्य व प्रशान्त मुख-मुद्रा, विशाल भाल, गौर–वर्ण, लगभग जानुपर्यंत हाथ, मुख पर ब्रह्मचर्य का महान्–तेज लक्षणोपेत आकर्षक और प्रभावक मुख-मुद्रा ।
अशाता का उदय	:	वर्षों से किसी–न–किसी रोग का हमला । पिछले तीन वर्षों में अशाता का तीव्र उदय ।
साधना	:	नमस्कार महामंत्र, नवपद आदि के उत्कृष्ट साधक ।
समाधि	:	अशाता के तीव्रोदय में भी सर्वोच्च समाधि ।
अन्तिम–चातुर्मास	:	स्वगुरुदेव व्याख्यान–वाचस्पति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. के साथ पाटण में ।
दीक्षा पर्याय	:	49½ वर्ष
उम्र	:	77 वर्ष
समाधि–मृत्यु	:	वैशाख सुद-14, सं. 2036 की रात्रि में आठ बजकर दस मिनट । नगीनभाई पौषधशाला–पाटण (उ.गु.) ।
अग्नि संस्कार	:	वैशाख सुदी-15, सं. 2036 भद्रंकर सोसायटी के सामने–पाटण
वर्तमान में पूज्यपादश्री के परिवार का आज्ञा–साम्राज्य	:	1) प्रवचन प्रदीप, गच्छाधिपति पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय पुण्यपालसूरि म. 2) समतामूर्ति पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री वज्रसेनविजयजी म.
विद्यमान परिवार	:	शिष्य–2, प्रशिष्य–72, निश्रावर्ती–4, कुल–78

स्व. पूज्यपादश्री की 41वीं पुण्य तिथि पर

बीसवीं सदी के महानयोगी, अध्यात्मयोगी, निःस्पृह शिरोमणि, अनंतोपकारी पूज्य गुरुदेव **पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** को भावभरी श्रद्धांजलि !

हे भवोदधि तारक गुरुदेव !

मोहमाया के दलदल में फंसी हुई मेरी आत्मा को बाहर निकालकर मुझ जैसी तुच्छ आत्मा को आपने संयम मार्ग में स्थापित किया, उस उपकार का वर्णन शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता !

उस उपकार को अभिव्यक्त करने के लिए शब्दकोष में कोई शब्द नहीं है ।

वि.सं. 2031 में **पू.मु. श्री मनमोहनविजयजी म.** (बाद में आचार्य) की भागवती-दीक्षा के बाद जब वे कैलाशनगर से विहारकर लुणावा आए तब आपने उन्हें कहा, **'तुम्हारा काम हो गया, अब राजु का बाकी है ।'**

दीक्षा ग्रहण में मुझे बहुत अंतराय थे, परंतु आपकी कृपा से ही मेरे अंतराय दूर हुए है ।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

❀ दि. 6 जनवरी 1977 के शुभ दिन पू. पिताजी के साथ जब मैं लुणावा में आपश्री के वंदनार्थ उपस्थित हुआ था, तब मुझे स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी, कि आज मेरी दीक्षा का मुहूर्त निकल जाएगा ।

पिताजी दीक्षा के लिए सम्मत थे परंतु तत्काल दीक्षा के लिए सम्मत नहीं थे ! उनकी भावना 2 वर्ष बाद दीक्षा दिलाने की थी, परंतु आपके मुखारविंद से पिताजी को कहे वे शब्द, **'राजु अब तैयार हो गया हैं, देरी करने जैसी नहीं है ।'**

गुरुदेव के इन शब्दों ने चमत्कार कर दिया और पिताजी ने तत्क्षण `हाँ' भर दी ।

◆ पूज्य गुरुदेवश्री अपने अंतिम वर्षों में (15) किसी को अपना शिष्य नहीं बनाते थे, वे अपने किसी भी शिष्य-प्रशिष्य के नाम से ही दीक्षा देते थे ।

आपने अपने गुरुदेव सुविशाल गच्छाधिपति **आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** को लिखे पत्र में भी मेरी दीक्षा अपने प्रशिष्य के नाम से ही करने का लिखा था, परन्तु अपने ही प्रथम शिष्य **पू.पं.श्री हर्षविजयजी म.** की बात को ध्यान में रखकर आपने मुझे अपना अंतिम शिष्य भी बनाया !

मात्र 3¼ वर्ष के मेरे दीक्षा पर्याय में आपश्रीने विदाई ले ली–परंतु आप मेरे हृदय में होने से मुझे कभी भी गुरु-विरह का अहसास नहीं हुआ ।

हे गुरुदेव ! आप जहां भी हो वहां से अपने बाल का योगक्षेम करते रहे, यही मेरा हार्दिक प्रार्थना है ।

वि.सं. 2007 सुरत चातुर्मास

तार्किक जवाब

चारों ओर रेडियों का प्रचार हो चूका था । घर बैठे देश-दुनिया के समाचार सुनने में आते थे ।

साध्वाचार में भी कहीं कहीं शिथिलता आने लगी थी । कुछ महात्माओं के प्रवचन रेडियों पर प्रसारित होने लगे ।

उस समय सुरत के एक सज्जन ने पूज्यश्री को प्रश्न किया, ***'2-3 कि.मी. दूर से वाहन के माध्यम से उपाश्रय में आकर प्रवचन श्रवण करे, उसमें जीव विराधना भी होती है तो इसके बजाय घर बैठे ही रेडियो से प्रवचन श्रवण कर ले तो नहीं चल सकता ?***

प्रश्न सुनकर अत्यंत ही प्रशांत भाव से पूज्यश्री ने कहा, `उपाश्रय में आकर गुरुवंदन कर गुरु के सामने विनयपूर्वक बैठकर जो प्रवचन श्रवण किया जाता हैं, उसका लाभ कुछ और ही हैं–

1) उपाश्रय का वातावरण एकदम पवित्र होता हैं, जहां एक मात्र आराधना ही होती है और एक भी पाप नहीं होता हैं, जब कि घर में वैसा वातावरण नहीं होता है ।

2) उपाश्रय में करुणा सभर गुरुदेव का तेजपूंज आंखों के सामने होता है ।

3) उपाश्रय में गुरुदेव श्रोताओं की भूमिका व रुचि प्रमाण उपदेश देते हैं, रेडियों में कोई श्रोता प्रत्यक्ष नहीं देता है ।

4) उपाश्रय में प्रवचन दरम्यान श्रोताओं को कोई प्रश्न खडा हो तो वे प्रश्न भी कर सकते हैं और जवाब भी प्राप्त कर सकते है । जबकि रेडियों से प्रवचन में यह संभव नहीं है ।

5) उपाश्रय में प्रवचन दरम्यान शांति होती है, जबकि घर में किसी के आने जाने व बालक के रुदन आदि से विक्षेप भी पडता है ।

6) शत्रुंजय के प्रत्यक्ष दर्शन व फोटो दर्शन में जो अंतर है वह प्रत्यक्ष गुरु की वाणी श्रवण और परोक्ष श्रवण में है ।

7) उपाश्रय में गुरुवंदन कर, भूमि पर नीचे बैठकर, मौन पूर्वक विवेक पूर्वक धर्मश्रवण होता हैं, अतः उसके लाभ का कोई पार नहीं है ।

8) उपाश्रय में साधर्मिकों के साथ बैठकर जो धर्म श्रवण होता है, उससे सामूहिक ऊर्जा पैदा होती है, उसकी भी विधेयात्मक असर होती है ।

पूज्यश्री के मुख से तर्क संगत जवाब को सुनकर अनेक श्रोताओं के दिल में रही इस शंका का समुचित समाधान हो गया ।

(वर्तमान में भी कई महानुभाव टी.वी. पर प्रवचन श्रवण का समर्थन करते है, उनके लिए भी यह जवाब समुचित है ।)

वि.सं. 2008 सिनोर (गुज.) चातुर्मास

औचित्य-पालन

प.पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. की आज्ञा से **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का वि.सं. 2008 का चातुर्मास गुजरात के बडौदा जिले के सिनोर गांव में निश्चित हुआ ।

बडौदा जिले का यह छोटासा गांव पहले `सैन्यपूर' के नाम से प्रसिद्ध था । नर्मदा नदी के तट पर आया हुआ छोटासा गांव धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत था । **स्व. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.** ने अपने संयम जीवन के दूसरे ही वर्ष में सर्व प्रथम प्रवचन सिनोर गांव के उपाश्रय में ही दिया था ।

`हितोपदेश माला'** ग्रंथ में **`औचित्य पालन' गुण पर खूब भार दिया गया है ।

आत्मा जब अपुनर्बंधक अवस्था प्राप्त करती हैं, तभी से यह गुण देखने को मिलता है ।

जीवन में अन्य गुण हो परंतु औचित्य पालन न हो तो वे गुण शोभा नहीं देते है ।

वि.सं.2008 में पू. पंन्यासजी म. सिनोर में चातुर्मास हेतु पधार चूके थे । उसी समय सिनोर संघ को समाचार मिले कि पंजाब केसरी **पू.आ.श्री वल्लभसूरीश्वरजी म.सा.** वहां पधार रहे है । संघ के अग्रणी असमंजस की स्थिति में आ गए । संघ में आगमन के प्रसंग पर उनका सामैया करे या न करे ! संघ के अग्रणी पूज्य पंन्यासजी म. के पास आए ।

पूज्य पंन्यासजी म. ने सलाह देते हुए कहा, ``यद्यपि आपके संघ एवं **पू.आचार्य भगवंत** के बीच कुछ विचार भेद हैं, फिर भी औचित्य पालन की दृष्टि से संघ में प्रतिष्ठित उनका सामैया करना चाहिए ।''

पूज्यश्री की सलाह को सर्वमान्य कर संघ ने पूज्य आचार्य भगवंत का सामैया किया ।

पूज्य पंन्यासजी म. भी आचार्य भगवंत को लेने के लिए सामने गए और साथ में प्रवचन भी किया । पूज्यश्री औचित्य पालन में कभी चूकते नहीं थे ।

卐 卐 卐 卐 卐

पूज्यश्री के सिनोर चातुर्मास में नूतन दीक्षित 9 वर्षीय **बाल मुनि श्री धुरंधरविजयजी म.** भी साथ में थे ।

पूज्यश्री ने बालमुनि को प्रेरणाकर वर्धमान तप का पाया डलवाया और सरस्वती देवी के बीज मंत्र का 1¼ लाख बार जाप भी करवाया ।

वि.सं. 2009 लालबाग-मुंबई चातुर्मास

निःस्पृहता

वि.सं. 2009 में लालबाग जैन संघ-मुंबई की हार्दिक विनंति का स्वीकार कर पूज्यश्री चातुर्मास हेतु लालबाग पधारे । पूज्यश्री के प्रेरणादायी चिंतनात्मक प्रवचनों से लोगों का उत्साह बढता गया ।

एक दिन पूज्यश्री अपने आसन पर बिराजमान थे, तभी श्रेष्ठीवर्य

दामजीभाई पूज्यश्री के पास आए और बोले, ***'मुंबई राज्य के मुख्य मंत्री मोरारजी देसाई के साथ मेरे घनिष्ट संबंध है, आप अनुमति दे तो मैं उन्हें यहां बुला सकता हूँ !'***

दामजीभाई की यह बात सुनकर आसपास खडे लोग खूब प्रभावित हो गए ।

सभी लोग पूज्यश्री के प्रत्युत्तर की राह देखने लगे ।

तभी पूज्यश्री ने कहा, `मोरारजी देसाई को यहां बुलाने की आवश्यकता नहीं है । हाँ, उन्हें अध्यात्म के विषय में कुछ जानने की जिज्ञासा या कोई शंका हो तो जरुर मैं उन्हें कुछ मदद कर सकता हूँ, बाकी वे बहुत बडे नेता हैं, तो उस दृष्टि से मुझे कोई अपेक्षा नहीं है ।'

पूज्यश्री के इस निःस्पृहता भरे जवाब को सुनकर स्वयं दामजी भाई मंत्रमुग्ध हो गए ।

...आज जहां राजकीय नेताओं को बुलाने की होडसी लगी है और उनके आगमन में अपना बड़प्पन समझते है । ऐसे काल में ऐसे निःस्पृही महात्मा का व्यक्तित्व सचमुच, साधु-संस्था के लिए आदर्श ही है ।

संस्मरण

अध्यात्ममूर्ति **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.** आदि 10-12 ठाणा का मुंबई से वि.सं. 2013 की साल में शंखेश्वर की ओर विहार था । **मु. मित्रानंदविजयजी म.सा.** भी साथ में थे । शंखेश्वर में उपधान तप की आराधना दीक्षा आदि शुभ प्रसंगो की पूर्णाहूति के बाद पाटण होकर चैत्र मास की ओली के लिए भिलडियाजी गए । जहां 1500 आराधकों ने ओली की आराधना की । वहां से राधनपूर गए ।

◆ चातुर्मास भूजपूर (कच्छ) में निश्चित हुआ था । बीच में वागड देश आता था, उस समय वहां के लोग चाय नहीं पीते थे । भूजपूर के पंडित आणंदजीभाई ने वागड के गांव गांव में पत्र द्वारा समाचार दिए कि **'गुजराती साधु भगवंत वागड होकर भूजपूर आ रहे हैं, अतः उन्हें चाय का खप होगा, अतः चाय का उपयोग रखना ।'**

वागड के पहले ही गांव में पूज्य पंन्यासजी भगवंत को इस बात का

पता चला । उन्होंने साधुओं को कहा, **'हमें ऐसी (दोषित) चाय पीने की क्या जरुरत हैं ? चाय का त्याग कर दे तो अच्छा है ।'** पूज्यपाद सहित कुल छ ठाणा थे । सभी ने चाय का त्याग किया ।

पूज्यश्री ने कहा, `वागड में गुड का उपयोग ज्यादा होता है, अतः गुड सुगमता से मिल जाएगा । गुड के पानी के साथ खाखरे वापरने से काम चल जाएगा ।' इस प्रकार वागड देश का विहार चाय के त्याग पूर्वक गुड के पानी आदि के उपयोग से जिनाज्ञा पालन पूर्वक निर्दोष आहार चर्या से हुआ । निर्दोष आहार चर्या की दृढतावाले महात्मा लूखी रोटी और पानी, खाखरे और पानी, अजैनों के वहां से रोटी, रोटले, छाश, दूध, चावल तथा स्वामी नारायण संप्रदायवालों के घरों से कंदमूल रहित दाल, कढी, शाक आदि लाकर शरीर को पोषण देते थे ।

पू.पं. भद्रंकरविजयजी म.सा. अनेक बार कहते थे कि दोषित आहार यह बलहरणी भिक्षा (पौषधनी) है । हमें तो सर्व संपत्करी भिक्षा से इस साधु देह को टिकाकर आराधना करने की है ।

कोटि कोटि वंदन हो, इन महात्माओं के चरणों में ।

◆ वि.सं. 2013 में पूज्यपाद **पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के साथ **(मित्रानंदविजयजी) कल्याणप्रभविजयजी, जयपद्मविजयजी, कीर्तिकांतविजयजी** तथा **तत्वानंदविजयजी** का भूजपूर (कच्छ) में चातुर्मास था ।

भूजपूर में चातुर्मास कराने के लिए मुंबईवासियों का खूब आग्रह था, वहां के लोगों की भी खूब भावना थी । असाढ़ मास में चातुर्मास प्रवेश हुआ । वहां अंचलगच्छ–तपागच्छ, स्थानकवासी–छ कोटि, आठ कोटि तथा नानी पक्ष के जैन रहते है ।

पूज्य पंन्यासजी भगवंत के तात्त्विक–सात्त्विक और मार्मिक प्रवचनों से सभी को आकर्षण पैदा हुआ । व्याख्यान हॉल पूरा भर जाता था । पर्युषण में 15-20 दिन बाकी थे, `प्रवचन में गडबड न हो' इस भावना से कुछ जैन युवको कों विचार आया कि व्याख्यान में प्रभावना बंद कर दी जाय ।' उन्होंने एक प्रस्ताव रखा `गांव में ऐसे महान् गुरुदेव पधारे है, धर्म प्रेरक प्रवचनों की वर्षा हो रही है । प्रभावना से प्रवचन में गडबड होती हैं, अतः इस बार

प्रभावना बंद रखी जाय ।' इस प्रकार निर्णयकर गांव में लोगों के हस्ताक्षर लेने चालू किये । 40-45 हस्ताक्षरों के बाद उनका काम रुक गया । उनको लगा, `अपना कार्य सिद्ध नहीं होगा ।' उन्होंने पूज्य पंन्यासजी भगवंत के पास आकर उनकी सलाह अनुसार आगे बढने का निर्णय किया ।

वे पूज्यश्री के पास आए और बोले, `आपको दुःख होता हो तो हम यह बंद कर दे ।'

पूज्य पंन्यासजी भगवंत ने कहा, `जब से हमने दीक्षा ली, तब से हमें सुख–दुःख की उपेक्षा ही करने की है, परंतु जैन शासन में चली आ रही साधर्मिक भक्ति स्वरुप और प्रभावना लेनेवाले के दिल में दान–भावना की प्रतिष्ठा स्वरुप प्रभावना बंद नहीं होनी चाहिये । प्रभावना बंद करने से बडा पाप लगता है । `व्याख्यान में गडबड न हो' यह तुम्हारा भाव अच्छा हैं, इसके लिए बालकों को दूसरी जगह प्रभावना देने की व्यवस्था हो सकती है ।'

इस प्रकार पूज्य पंन्यासजी भगवंत के मार्गदर्शन अनुसार `जिनालय के पास के वंडे में व्याख्यान बाद बालकों को प्रभावना दी जाएगी ।' इस प्रकार की घोषणा की गई ।

बालक वंडे में खेलने लगे । व्याख्यान बाद उन्हें प्रभावना दी जाने लगी ।

इस प्रकार इस महापुरुष के मार्गदर्शन से प्रभावना का महान् धर्म चालू रहा । व्याख्यान में आवाज–गडबड बंद हो गई । बालकों को भी प्रभावना मिलने लगी । विरोध शांत हो गया और सब खुश हो गए ।

`प्रभावना के संबंध में गांव में क्या प्रवृत्ति चल रही हैं ?' पूज्य पंन्यासजी भगवंत अच्छी तरह जानते थे, परंतु उनकी गंभीरता गजब की थी । युवक उनके पास आए, उनकी बात भी उन्होंने शांति से सुनी । सौम्यता से **'शासन प्रभावना'** तत्त्व का रहस्य समझाया और योग्य मार्ग दर्शन किया ।

शासन के ऐसे महान् ज्योतिर्धर के चरण कमल में वंदन हो ।

नवकार श्रद्धा

राधनपूर के प्राचीन 24 जिनालयों के दर्शनकर पूज्यश्री वि.सं. 2013 के भूजपूर चातुर्मास हेतु कच्छ की ओर विहार कर रहे थे ।

थराद गांव से आगे बढ रहे थे । वैशाख के भयंकर ताप के कारण सडक पर रहा डामर भी पिघल चूका था । भयंकर गर्मी से संतप्त एक सांप बिल में से बाहर आया और उस डामर में फंस गया ।

पूज्य पंन्यासजी म. ने उस सांप को डामर में फंसा देखा । सांप की वेदना को देख उनका हृदय पिघल गया ।

अपने शिष्यों की ओर ईशारा करते हुए बोले, `किसमें वह हिम्मत हैं, जो सांप के पास जाकर नवकार सुनाए ?'

उसी समय उनके शिष्य **पू. श्री कल्याणप्रभविजयजी म.सा.** तैयार हो गए ।

सांप के नजदीक जाकर उन्होंने नवकार सुनाना चालू किया । जैसे ही उनके 12 नवकार पूर्ण हुए, वह सांप जोर से उछला और पास में रही जंगल की झाडियों में अदृश्य हो गया ।

कच्छ की धन्यधरा पर छोटी-मोटी पंचतीर्थी की यात्रा कर पूज्य पंन्यासजी म. आगे बढ रहे थे ।

विहार की निर्जन भूमि पर दो रास्ते आए । सच्चा मार्ग कौनसा है, यह जानने के लिए दूर-सुदूर तक नजर डाली, परंतु उस निर्जन भूमि में कोई दिखाई नहीं दिया, तभी पूज्य पंन्यासजी म. वृक्ष के नीचे शांत चित्त से 12 नवकार गिनने लगे, फिर अंदर से जो आवाज आई, उस रास्ते की ओर आगे बढ गए ।

सचमुच, वह मार्ग सही निकला ! पूज्य श्री को नवकार पर अटल श्रद्धा थी । **`नवकार के स्मरण से जो दिशा मिलेगी, वह सही ही होगी ऐसा उन्हें पूर्ण आत्म विश्वास था ।'**

वि.सं. 2013 में भूजपुर चातुर्मास प्रवेश पर प्रस्तुत गीत

(राग : सुणो चंदाजी !)

अहो स्वर्ग समी दिव्य भूमि कैं दीसे भुजपुर गामनी..
बोले जयजयकार - बाल वृद्ध सहु भद्रंकरना नामनी,
चातुर्मासे भुजपुर पधार्या, धर्म नादे जनताने जगाड्याः,
ज्ञान भक्ति सुधारस रेलाव्या, अहो स्वर्ग समी...

मुनि कांचन-कामिनीना त्यागी, तप संयम स्थिरताना रागी,
शाश्वत सुखनी लगनी लगी, अहो स्वर्ग समी...
परमेष्ठी पांच जेनुं जीवन छे, श्वासोच्छवासे अे ज आराधन छे,
मुनि भविजनना उद्धारक छे, अहो स्वर्ग समी...
तेजस्विता सूर्य समी जेहनी, शीतलता चंद्र समी तेहनी,
दिव्यता दीसे निरूपम अेहनी, अहो स्वर्ग समी...
जेनी मुद्रा शांत ने सौम्य भरी, नही विषय कषायनो तंत्र जरी,
ओजस सर्वांगे रहे नीतरी, अहो स्वर्ग समी...
जेनी वेधक दृष्टि जागृत छे, चिंतन जेनुं अपरिमित छे,
जेनुं निरीक्षण न्याय प्रत्ये रत छे, अहो स्वर्ग समी....
मन–वच–काया मुनि गोपे सदा, पांचे समितिनी रक्षा न चूके कदा,
निज भावमां ज रमण करे सर्वदा, अहो स्वर्ग समी...
जेनी जगत जीवो परनी करूणा, वहे सरिता नीर गंगा यमुना,
जाणे प्रगट्यां ऋषि वाल्मिकी अधुना, अहो स्वर्ग समी...
पुण्योदय भुजपुरना जाग्या, अज्ञान तिमिर दूरे भाग्याः
आतम ज्योति तणा डंका वाग्या, अहो स्वर्ग समी..
वंदन मुनिने निशदिन करीये, अेनी कृपाने लायक सहु बनीये,
अेनुं स्मरण कदी नव वीसरीये, अहो स्वर्ग समी...

आराधी अरिहंतने उरमंही, स्वानंदमां महालता,
मैत्री मार्ग जणावी आ जगत ने क्लेशादिने टालता,
जे आध्यात्मिक पूज्यना प्रवचनो मिथ्यात्वने तोडता,
ते भद्रंकर रामनंदन नमुं, कर द्वय ने जोडता ।

जीवन परिवर्तन की अद्‌भूत कला

मुंबई में रहे एक धनाढ्य श्रेष्ठी के पुत्र को जुएँ का व्यसन लग गया ।

पिता के पास धन की कमी नहीं थी, अतः दिन–प्रतिदिन उसका वह व्यसन बढने लगा ।

पिता ने अपने बेटे को समझाने की खूब कोशिश की, परंतु उनका सारा प्रयत्न निष्फल गया ।

'व्यसन एक बूरी बला हैं' एक बार लागू हो जाने के बाद उससे बचना बहुत मुश्किल हो जाता है ।

जुएं की लत में सेठ का बेटा खूब धन हार गया !

योगानुयोग उन दिनों में पूज्य पंन्यासश्री भद्रंकरविजयजी म. का वहां आगमन हुआ ।

महान् योगी पुरुष के आगमन को जानकर सेठ को थोडा आश्वासन मिला, शायद उनकी कृपा से मेरे बेटे का जीवन सुधर जाय ।

सेठ ने गुरुदेव से बात की, `गुरुदेव ! मेरे बेटे को सुधारने के लिए आप ही कुछ रास्ता निकाल सकते है ।'

पूज्यश्री ने कहा, `उसको अकेले ही मिलने के लिए कहना ।'

दूसरे दिन सेठ का बेटा गुरुदेवश्री के वंदन के लिए आया !

पूज्यश्री ने उसे प्रेम से नहला दिया । उसके जीवन में रही अन्य विशेषताओं की अनुमोदना की, परंतु उसके जीवन में रहे जुएँ के दोष के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा ।

वह प्रतिदिन प्रभु दर्शन तो करता ही था, उसे देव दर्शन के साथ गुरुवंदन की भी प्रेरणा की, जिसे उसने तुरंत स्वीकार ली ।

दूसरे दिन जब वह सेठ का बेटा पूज्यश्री को वंदन के लिए आया तो उसे उतना ही कहा, `देव दुर्लभ ऐसा मानव जन्म अपना व्यर्थ नहीं जाना चाहिए । यहां से हमारी ऊर्ध्व गति होनी चाहिए परंतु अधो गति नहीं !

उसने कहा, ऊर्ध्वगमन का उपाय ?

पूज्यश्री ने कहा, **'अपना जीवन व्यसन मुक्त होना चाहिए ! तुम्हारे जीवन में तो किसी प्रकार का व्यसन नहीं होगा, क्योंकि तुम्हारे माता-पिता कितने संस्कारी है !'**

उसने कहा, `गुरुदेव ! मेरे जीवन में एक ही व्यसन हैं ।

गुरुदेव ने पूछा ! किसका ?

उसने कहा, `एक जुएँ का व्यसन है ! छोडना चाहता हूँ परंतु छोड नहीं पाता हूँ !'

`सच में तुम्हें इस बात का गम है ?

`हाँ गुरुदेव ! इस व्यसन से तो मैं भी परेशान हूँ और मेरे कारण माता-पिता भी परेशान है ।'

`क्या तुम इस व्यसन से मुक्त होना चाहते हो ? यदि हाँ ! तो मैं तुझे बहुत ही सरल उपाय बताता हूँ ।'

वह कौनसा उपाय है ?

`बस, एक बार भी जुएँ का विचार किए बिना सिर्फ 108 नवकार गिनना है ।'

`क्या नवकार गिनने से मेरा जुआँ छूट जाएगा ?'

`हाँ ! अवश्य छूट जाएगा । सिर्फ जुएँ के विचार बिना 108 नवकार गिनना है ।'

`और कदाचित् विचार आ जाय तो ?'

`यदि जुएँ का विचार आ जाय तो पुनः एक से नवकार गिनना प्रारंभ कर देना ।'

`ओहो ! यह तो बहुत सरल उपाय है । आज से ही मैं नियम स्वीकार करता हूँ, जिससे मेरा जुआँ जल्दी छूट जाएगा ।'

`नियम लेने के बाद उसे तोडना मत ।'

`नहीं गुरुदेव ! किसी भी हालत में नहीं तोडूंगा ।'

और गुरुदेव ने उसे नियम दे दिया । सेठ का बेटा अपने घर गया और घर के कोने में जाकर 108 नवकार गिनने लगा ।

`सोचा था, 10 मिनिट में ही 108 नवकार पूरे हो जाएंगे । परंतु यह क्या ?

मानव मन की सबसे बडी कमजोरी है कि वह जिसे भूलना चाहता है, वह उसे ज्यादा याद आता है और जिसे ज्यादा याद रखना चाहता है, वह जल्दी भूला दिया जाता है ।

`सेठ के बेटे ने 10 नवकार गिने...और अचानक बिजली की भांति जुएँ का विचार दिमाग में आ गया ।

उसने पुनः 1 से नवकार गिनना चालू किया । फिर 20 नवकार गिने और पुनः जुएँ का विचार आ गया ।

इस प्रकार जुएँ के विचार को रोकते रोकते 3 घंटे बीत गए, परंतु 108 नवकार पूरे नहीं हुए ।

वह शाम को गुरुदेव के पास में आया और बोला, `10 मिनिट में पूरी होनेवाली नवकारवाली 3 घंटे में भी पूरी नहीं हो पाई है । अब क्या करना ?'

गुरुदेव ने कहा, `नियम लिया है तो उसका पालन तो करना होगा । परंतु एक उपाय हैं, `तुम जुआँ खेलना छोड दोंगे तो उसके विचार स्वतः बंद हो जाएंगे ।

सेठ के बेटे ने उसी दिन से जुआँ छोडने का संकल्प कर लिया । इसके साथ उसका जाप भी चालू हो गया और जुएँ के विचार भी बंद हो गए ।

किस व्यक्ति को किस ढंग से सन्मार्ग में प्रेरित करना, यह कला पूज्यश्री के पास में थी । इसी का परिणाम था कि भयंकर व्यसनी भी उनके संपर्क में आकर पतित में से पावन बन गए ।

प्रभु आज्ञा-प्रेम

एक बार पूज्यश्री की तारक निश्रा में बहुत ही भव्य जिन भक्ति महोत्सव चल रहा था ।

महोत्सव दरम्यान फोटोग्राफर पूज्यश्री का फोटो लेना चाहता था । पूज्यश्री को अपने नाम व रुप का कोई आकर्षण नहीं था ।

फोटोग्राफर ने कहा, ``आप खिडकी के पास प्रकाश में इधर नजर करते हुए बैठे ।'

फोटोग्राफर की इस सूचना का जवाब देते हुए पूज्यश्री ने सस्मित कहा, **`तुम कहो वैसा करुं या भगवान कहे, वैसा करुं ?'** `मैं तो इस शरीर का ट्रस्टी हूँ । यह तो सिर्फ मेरी धर्म की कमाई का साधन है, अतः उसे सजाने या दिखाने की मेरी इच्छा नहीं है । पंचभूत से बने और पंचभूत में विलीन होने वाले इस शरीर का क्या मोह रखना !' अतः तुम चले जाओ ।

फोटोग्राफर तो यह सुनकर दंग रह गया ।

इंसान मात्र को अपने नाम व रुप का आकार्षण होता है । विरले ही ऐसे महापुरुष होते है, जिन्हें अपने नाम व रुप का कोई आकर्षण नहीं होता है ।

पूज्यश्री उन्हीं विरल संतों में से कोई एक थे ।

अद्‌भुत प्रज्ञा के स्वामी

एक बार किसी ने पूज्यश्री को प्रश्न किया, `प्रतिदिन जिनपूजा व्याख्यान श्रवण तथा प्रतिक्रमण आदि करनेवाला दुकान पर जाकर अनीति करे तो इससे धर्म की निंदा ही होती हैं तो क्यों न वह पूजा बंद कर दे ।'

पूज्यश्री ने समाधान देते हुए उसको कहा, `अपने नीतिमय आचरण द्वारा समाज में धर्म की प्रतिष्ठा बनाए रखना, यह प्रत्येक श्रावक का कर्त्तव्य है परंतु मंदिर या जिन-पूजा का कभी निषेध नहीं करना चाहिए ।

जिन मंदिर यह तो पवित्र धाम है, वहां जाने वाले को कभी न कभी सद्‌बुद्धि मिलने की शक्यता है, परंतु उस स्थान से हमेशा दूर रहने वाले की तो बुद्धि ज्यादा बिगडने वाली है । यह मूल्यवान जन्म निष्फल चला जाएगा ।

पूजा छोड देना यह कोई अनीति से छूटने का उपाय नहीं है । ऐसा करने से तो अनीति छूटने की शक्यता ही नष्ट हो जाती है । अतः पूजा चालू रखना ही हितकर है ।

किसी ने प्रश्न किया, `धर्म आराधना के लिए दीक्षा लेना जरुरी हैं ?

पूज्य श्री ने कहा, `विज्ञान के प्रयोग जहां तहां रास्ते में नहीं होते है, वे तो प्रयोगशाला में ही होते है अथवा डॉक्टर किसी का ओपरेशन, ओपरेशन थियेटर में ही करता हैं, जहां-जहां नहीं, उसी प्रकार संपूर्ण धर्म की आराधना सर्वविरति से ही संभव है । घर में रहकर पूर्ण धर्म (सर्वविरति) की आराधना नहीं हो सकती ।

महान् अनुप्रेक्षक

❋ चार प्रकार के ध्यान को बाल–भोग्य सरल शैली में समझाते हुए महान् अनुप्रेक्षक पूज्य पंन्यासजी भगवंत ने कहा, **`जो अपने दुःख में रोता हैं, वह आर्तध्यानी है ।**

जो अपने सुख में बाधक ऐसे दूसरों को रुलाता है, वह रौद्रध्यानी है ।

जो अपने दुःख में रोने वाले को शांत करता है, वह धर्म ध्यानी है और जो रोने के मूल को ही जडमूल से उखेड देता है, वह शुक्ल ध्यानी है ।

❋ चार गति निवारक `नवपद' की सुंदर व्याख्या करते हुए पूज्यश्री ने कहा,

न अर्थात् नरक गति

व अर्थात् विकलेन्द्रिय-तिर्यंच गति

प अर्थात् पुरुष (मनुष्य गति) और

द अर्थात् देवगति

इन चार गतियों में से जीव को मुक्त करे, उसका नाम हैं-नवपद !

कर्तव्य-भान

नगीनभाई पौषधशाला पाटण में वि.सं. 2036 वैशाख शुक्ला त्रयोदशी दि. 28-4-1980 के शुभ दिन **प.पू.आचार्य श्री कनकचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से 62 वर्षीय मुमुक्षु वेलजीभाई की भागवती दीक्षा संपन्न हुई ।

अपने नाजुक स्वास्थ्य के कारण **अध्यात्मयोगी प.पू. पंन्यासजी भद्रंकरविजयजी म.** स्वयं दीक्षा स्थल, प्रवचन-हॉल में उपस्थित नहीं हो सके, परंतु दीक्षा विधि की समाप्ति के बाद जैसे ही **पू.मु. श्री कुंदकुंद-विजयजी** के साथ नूतन **मु. श्री वीरसेनविजयजी म.** पूज्यश्री का आशीर्वाद लेने के लिए पधारे, तब नूतन मुनि को वासक्षेप प्रदान के साथ ही अपने शिष्य **पू.मु.श्री कुंदकुंदविजयजी** को प्रेरणा देते हुए बोले, `60-62 वर्ष की बडी उम्र में दीक्षा दी है तो उन्हें बराबर संभालना ।' पूज्यश्री की इस हित शिक्षा को **मु. श्री कुंदकुंदविजयजी म.** ने शिरोधार्य की ।

अपने कालधर्म के एक दिन पूर्व भी पूज्यश्री की कितनी आत्म-जागृति !

अद्भुत-अनुप्रेक्षा

अपने यहां मांगलिक प्रसंग पर श्रीफल की प्रभावना की जाती है ।

उपधान का प्रवेश प्रसंग हो या मोक्षमाला परिधान का प्रसंग हो, दीक्षा का प्रसंग हो या पदवी प्रदान का प्रसंग हो, बारहव्रत स्वीकार का प्रसंग हो या तीर्थमाल का प्रसंग हो । नाण (समवसरण) समक्ष चारों दिशाओं में प्रभुजी के सामने स्वस्तिक पर श्रीफल ही रखा जाता है ।

स्नात्र पूजा में भी नाण के नीचे श्रीफल रखा जाता है ।

किसी संघपति, तपस्वी या दीक्षार्थी का बहुमान हो तो भी हाथ में श्रीफल दिया जाता है ।

एक बार किसी ने पूज्यश्री को प्रश्न किया, `हर शुभ प्रसंग पर श्रीफल ही क्यों दिया जाता है ?'

उसी समय महान् अनुप्रेक्षक पूज्यश्री ने श्रीफल का रहस्य बताते हुए बोले, `श्रीफल में चार वस्तुएं रही हुई है ।'

(1) सबसे ऊपर छाल (छिलके) चोटी है ।

(2) उसके भीतर कठोर काचली (कवर) है ।

(3) नारियल के गोले के ऊपर लाल रंग की परत है ।

(4) उसके भीतर मधुर खोपरा है ।

इन चार वस्तुओं की अनुप्रेक्षा करते हुए पूज्यश्री ने कहा, `नारियल के छिलके (चोटी) यह अपना शरीर है ।

–उसके भीतर कठोर काचली ये आठ प्रकार के कर्म है ।

–नारियल के गोले पर लाल रंग की परत यह राग-द्वेष, मोह-अज्ञान आदि भाव कर्म है ।

–सबसे भीतर रहा सफेद मीठा खोपरा यह अपनी शुद्ध आत्मा है ।

मीठे खोपरे को पाने के लिए सबसे पहले नारियल की छाल उतारी जाती है तो सर्व प्रथम साधना मार्ग में आगे बढने के लिए देह की ममता ही बाधक है, अतः उसकी ममता उतारने के लिए बाह्य तप किया जाता है ।

–आत्मा के विशुद्ध स्वरुप को पाने के लिए आठ कर्मों के बंधन को तोडना पडता है । उसे पाने के लिए प्रबल पुरुषार्थ जरुरी है ।

–लाल परत यह भावकर्म अर्थात् राग-द्वेष है । उसे दूर करने का प्रयत्न करे ।

–जो इन द्रव्य और भाव कर्म से मुक्त हो जाता है । उसे परम आनंद स्वरुप शुद्ध चैतन्य का अनुभव प्राप्त होता है ।

परोक्ष-कृपा

पं. चंद्रकांतभाई पाटण में प्रति वर्ष 100 से अधिक श्रमण-श्रमणी और मुमुक्षुओं को शास्त्रीय अभ्यास कराते है ।

कभी कभार जब किसी शास्त्र-पंक्ति का रहस्यार्थ जब उन्हें अपनी समझ में नहीं आता है तो वे अध्यात्मयोगी **पू.पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.** की समाधि भूमि पर अपना प्रश्न कागज पर लिखकर छोड आते है ।

...और एक आश्चर्य ! कि दूसरे ही दिन उस शास्त्रीय पंक्ति का रहस्य उन्हें बराबर लग जाता है ।

गुरु की कृपा प्रत्यक्ष रुप में भले ही दिखाई नहीं देती हो, परंतु आज भी उसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है ।

त्रिवेणी संगम

कच्छ के सुश्रावक प्रेमजी कोरशी अपना स्वानुभाव बताते हुए अनेक बार कहते थे, `इस वर्तमान युग में भक्ति योग देखना हो तो **पूज्य आचार्य श्री कलापूर्णसूरीश्वरजी** को देखो ।

ज्ञानयोग देखना हो तो **पूज्य जंबूविजयजी म.** को देखो ।

चारित्रयोग देखना हो तो **पूज्य आचार्यश्री भद्रंकरसूरीश्वरजी** को देखो, परंतु तीनों योग एक साथ एक ही व्यक्ति में देखना हो तो **पूज्य पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.**को देखों, उनमें उत्कृष्ट भक्तियोग है, ज्ञानयोग है और चारित्र (क्रिया) योग है ।

गुणानुराग-दृष्टि

घटना एक ही होती है परंतु उसे देखने के Angle अनेक हो सकते है । विविध संघों में से जब प्रभु भक्ति, भागवती-दीक्षा, प्रतिष्ठा, उद्यापन, उपधान आदि के महोत्सव की पत्रिका आती तो कई लोग अपना अलग-अलग अभिप्राय देते है !

कोई कहता है, `यह तो पैसो की फिजूलखर्ची है ।

कोई कहता है, Waste of Money

कोई कहता है , इन पत्रिकाओं को कौन पढता है ?

कोई कहता है, वहां कौन जानेवाला है ?

कोई कहता है, सैकडों मील दूर गांव है, वहां अपना क्या संबंध हैं ?

ऐसे प्रसंग में भी पूज्यश्री की गुण दृष्टि अपना अलग ही अभिप्राय प्रकट करती ।

वे कहते, **`अपने को सुकृत की अनुमोदना का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ है ।'**

अंतर में अपूर्व गुणदृष्टि के विकास बिना इस प्रकार का अभिप्राय देना लगभग शक्य नहीं है ।

वंदन हो अपूर्व गुणदृष्टा महापुरुष को !

विशिष्ट ज्ञानी पू.पंन्यासजी महाराज

फलोदी (राज.) के पद्मचंदजी कोचर अत्यंत ही न्याय प्रिय एवं खूब ईमानदार थे । अपने व्यवसाय में उन्होंने कभी झूठ नहीं बोला ।

वे अध्यात्मयोगी **पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के अनन्य भक्त थे । वे अहमदाबाद में नवा माधोपुरा में रहते थे ।

एक बार उन्होंने पूज्य पंन्यासजी म. को पूछा, `गुरूदेव ! वर्तमान काल में इस क्षेत्र में ऐसी कोई आत्मा हैं, जो आगामी चौबीसी में तीर्थंकर या गणधर बनेगी ?

पूज्य पंन्यासजी म. ने कहा, `इसका जवाब बाद में दूंगा ।'

–तीन दिन के बाद ध्यान के बाद पूज्य पंन्यासजी म. ने कहा, `वर्तमान में **आचार्य कलापूर्णसूरिजी** आगामी चौबीसी में 11वें तीर्थंकर के गणधर बनकर मोक्ष में जाएंगे ।

पूज्य पंन्यासजी म. ने कहा, `जो अपने परिवार को तारने की प्रबल इच्छावाला होता है, वह गणधर बनता है ।'

`आचार्यश्री ने अपने दोनों पुत्र, पत्नी, श्वसुर, साले व दो भत्रीज को दीक्षित कर पूरे परिवार को तारा था ।

आदेय वचनी

वि.सं. 2024 की घटना है ।

श्रीमान रिखबदासजी स्वामी को मिलने के लिए चैन्नई से सियाणा निवासी बाबुलालजी महेता चैन्नई से शिवगंज गये ।

शिवगंज जाने पर पता चला कि, `रिखबदासजी तो पू. पंन्यासजी म. को वंदन के लिए कोरटाजी तीर्थ गए हुए है ।'

वे भी शिवगंज से कोरटाजी गये । **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** को वंदन कर वे उनके चरणों में बैठ गए ।

इसी बीच कोरटाजी गांव का ठाकोर तीर–बाण लेकर शिकार के लिए जा रहा था–

अचानक उसने दरवाजे से पू.पंन्यासजी म. के दर्शन किए ।

पूं. पंन्यासजी म. की प्रतिभा से प्रभावित होकर उसके मन में दर्शन–वंदन की इच्छा हुई ।

उसने उपाश्रय में प्रवेश किया और हाथ जोडकर प्रणाम किया ।

करुणामूर्ति पू. पंन्यासजी म. ने उसे `धर्मलाभ' की आशीष दी ।

फिर पूछा, `कहां जा रहे हो ?

उसने कहा, `मैं शिकार के लिए जा रहा हूँ ।

पंन्यासजी म. ने कहा, `क्या तुम्हारे अपने बाल बच्चे हैं ?'

उसने कहा, `हाँ' है ।

`कोई उन्हें मार दे तो तुम्हें क्या होगा ?'

`मैं अपने बच्चों को कैसे मारने दूँ ? मैं अपने बच्चों का पूरा बचाव करूंगा ।'

पंन्यासजी म. ने कहा, `तुम जिनका शिकार करते हो, वे भी किसी के बच्चे होंगे ? उनको मारने पर उन पशु–पंखियों को कितनी पीडा होती होगी–उसकी कल्पना कर सकते हो ?'

पूज्यश्री के मुख से प्रेरणा सभर अमृत वचन सुनते ही उस ठाकोर का हृदय पिघल गया, उसी समय उसने अपने हाथों से वे बाण तोड दिए और जिंदगी भर के लिए शिकार न करने का संकल्प कर लिया ।

वि.संवत् 2024 में **पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य म.सा.** की निश्रा में नाकोड़ा तीर्थ में **नवपद आराधक समाज** की ओर से चैत्रमास की नवपद ओली का आयोजन था ।

सुश्रावक ललितभाई की प्रेरणा से बाबुलालजी महेता भी **पूज्य पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** को वंदन करने के लिए नाकोड़ाजी गये, उन्होंने पूज्य पंन्यासजी म.सा. के चरणों में वंदन किया अपने कान उनके घुटनों पर लगायें । उस समय उनके घूटनों में से नवकार की ध्वनि

सुनाई दी, वास्तव में उनके रोम–रोम में, श्वासोच्छ्वास में नवकार व्यापक था ।

समाधि-मंदिर

अध्यात्मयोगी **पू. गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के काल धर्म के 30 वर्ष बीत गये थे । अनेक गुरु भक्तों के हृदय में पूज्यश्री के गुरु मंदिर निर्माण की तीव्र भावना थी परंतु जिस स्थान पर पूज्यश्री का अग्नि संस्कार हुआ, वह भूमि देने के लिए वह किसान सम्मत नहीं हो पा रहा था । अन्य कई सरकारी समस्याएं थी, किसी प्रकार से कोई मार्ग सुझ नहीं रहा था ।

एक दिन श्रेणिकभाई कस्तुरभाई, सी.के.महेता, शशिकांतभाई महेता तथा धीरेनभाई आदि की मिटिंग हुई ।

श्रेणिकभाई ने कहा, **'महोपाध्याय श्री यशोविजयजी म. की भांति जिन शासन में अमर नाम पाने वाले अध्यात्मयोगी प.पू. पंन्यासजी म. का गुरुमंदिर तो बनना ही चाहिए ।'**

इसी चर्चा के बीच **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.**को पूज्य गुरुदेवश्री की आज्ञा की स्मृति हो आई ।

'तू मेरा सच्चा शिष्य हो तो मेरा गुरु मंदिर मत बनाना ।'

अतः उन्होंने अपना सुझाव देते हुए कहा, `अग्नि संस्कार की भूमि पर प्रभु के जिन मंदिर को केन्द्र में रखकर पास में छोटासा गुरुदेव का समाधि मंदिर बनाए ।'

बस, इस विचार में सभी की सम्मति जुडी और कार्य को आगे बढाया गया । इस निर्णय के साथ ही जो काम 30 वर्षों से अटका हुआ था, वह कार्य सिर्फ चार महिने में ही पूर्ण हो गया ।

अपने उपकार के ऋण की मुक्ति के लिए इसका संपूर्ण लाभ सी.के. महेता ने लिया और वि.सं. 2066 में एक शुभदिन बडे भव्य समारोह और महोत्सव के साथ जिनमंदिर व गुरुमंदिर की प्रतिष्ठा विधि सानंद सोत्साह संपन्न हुई ।

अनोखी निःस्पृहता

(विरलविभूति में से साभार)

कपडा, कामली, आसन, पात्र आदि वस्तुओं में तथा शिष्य आदि के विषय में तो निःस्पृहता दूसरे भी महात्माओं में देखने को मिल सकती हैं, लेकिन **राज राजेश्वर के पद से अधिक ऐसे आचार्य पद की निःस्पृहता तो पू.पं.श्री कांतिविजयजी गणिवर** तथा **पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर** जैसे विरल महापुरुषों में ही देखने को मिलती है ।

पूज्यपाद परम गुरुदेव **आ.भ.विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** के दिल में अपने विशाल समुदाय के योग्य पांच महात्माओं को **(पू.पं. श्री कनकविजयजी गणिवर, पू.पं.श्री कांतिविजयजी गणिवर, पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर** तथा **पू.पं.श्री मुक्तिविजयजी गणिवर** तथा **पू.पं. श्री भानुविजयजी गणिवर)** आचार्यपद देने का विचार मन में उठता रहता था ।

वि.सं. 2011 में पूज्यपादश्री ने इस बात का प्रस्ताव भी रखा था, परंतु निःस्पृह शिरोमणि उभय पूज्यों ने इस प्रस्ताव का इन्कार कर दिया था ।

वि.सं. 2015 में सुरेन्द्रसागर में नौ पंन्यास पदवी के प्रसंग पर जब पूज्यपाद श्री ने सूरिपद लेने का आग्रह किया तब पू. पंन्यासजी म. (पू.कांति वि. म.) ने विनम्र भाव से कहा, `गुरुदेव ! इस पद की मुझ में कोई योग्यता नहीं है । मुझे भार लगता है । कदाचित् इस पद का आराधक न बनूं, `इतना कहकर उन्होंने अपना मस्तक गुरुदेव के चरणों में धर दिया और मौन ही रहे ।

पूज्यपादश्री ने भी आचार्यपद की बात पर पर्दा डाल दिया । बाद में पंन्यास पद के सुशोभित करते वि.सं. 2021 में स्वर्गस्थ बने ।

पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री भी इसी निःस्पृहता भाववाले थे । जब जब भी उनको पद के लिए आग्रह हुआ, वे निःस्पृह भाव ही बतलाते रहे । योग्यता न होने पर भी सामने से पदवी मांगनेवाले और पतासे की तरह पदवी की प्रभावना के इस विषम युग में पदवी की निःस्पृहता के स्वामी को पुनः पुनः कोटि कोटि वंदना !

1

शिष्य

वर्धमान तपोनिधि पू. पंन्यास श्री हर्षविजयजी गणिवर्य

दीक्षा
वि.सं.1988
जेठ सुदी-7

कालधर्म
वि.सं.2035
आसो वदी-8

दीक्षापर्याय 47 वर्ष

विक्रम संवत् 1958 पौष सुदी-15 के दिन सूरत में श्रेष्ठिवर्य साकरचंदभाई की धर्मपत्नी नेमकोरबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम हीराचंद रखा गया। उनका बचपन सूरत में व्यतीत हुआ। प्राथमिक अभ्यास भी सूरत में हुआ।

धर्मनगरी सूरत में जन्म लेने से प्राथमिक धार्मिक संस्कार तो सहज ही प्राप्त हो गए थे।

14 वर्ष की उम्र में पिता की मृत्यु हो जाने से कुटुंब का भार उनके ऊपर आ पडा। यौवन के प्रांगण में प्रवेश के साथ ही वे लग्न ग्रंथि से जुड़े !

व्यवसाय के लिए वे मुंबई आए ! वहाँ सद्भाग्य से उन्हें कल्याणमित्र भगवानदासभाई का योग मिल गया जिसके फलस्वरूप उनके जीवन में धार्मिक अभ्यास में प्रगति हुई तो साथ में वैराग्य भाव का भी बीजारोपण हुआ। पू. रामविजयजी म. (पू. रामचन्द्रसूरिजी म.) के वैराग्य-पोषक प्रवचन-श्रवण से उनकी वैराग्य भावना को बल मिला।

धीरे-धीरे वैराग्य भाव दृढ़ बनता गया। उन्हें एक पुत्र भी हुआ।

अपनी भागवती दीक्षा के लिए परिवारजनों से अनुमति पाने के लिए प्रयत्न प्रारंभ किए परंतु मोह की परवशता के कारण वे किसी भी संयोग में हीराभाई को दीक्षा दिलाने में राजी नहीं थें।

हीराभाई का अन्तर्मन मोह के पाश में से मुक्त होने के लिए तड़प रहा था।

अनेक-अनेक प्रयत्न करने पर भी जब सफलता की एक किरण भी उन्हें दिखाई नहीं दी...तो एक दिन घर से भागकर अहमदाबाद जाकर वि.सं. 1988 जेठ सुदी-7 के शुभदिन **पू. आचार्य मनोहरसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से भागवती दीक्षा अंगीकार कर ली और वे **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** के प्रथम शिष्य **मु. श्री हर्षविजयजी** बने !

संयम जीवन की दुर्लभता का उन्हें स्पष्ट भान था अतः संयमजीवन के स्वीकार के बाद वे साधु जीवन के महाव्रतों का खूब दृढ़ता से पालन करने लगे !

उन्होंने जीवन भर के लिए आम तथा अन्य फलों का त्याग कर दिया। सूखे मेवे में भी बादाम को छोड अन्य मेवों का जीवन भर के लिए त्याग कर दिया।

देह के ममत्वभाव को उतारने के लिए तथा रसनेन्द्रिय पर विजय पाने के लिए उन्होंने आयंबिल तप को प्रधानता दी।

गुर्वाज्ञा को उन्होंने अपना जीवनमंत्र बना दिया। वैयावच्च गुण को उन्होंने जीवन में आत्मसात् कर लिया। किसी भी ग्लान व वयोवृद्ध मुनि की सेवा में वे लेश भी नहीं हिचकिचाते थे।

वि.स. 2016 में लास (कैलाशनगर) निवासी मुमुक्षु मगनभाई **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के पास संयम जीवन की ट्रेनिंग ले रहे थे। उनकी भागवती दीक्षा अपनी जन्मभूमि लास में माघ शुक्ला 10 के दिन संपन्न हुई। उस समय **पू. गुरुदेवश्री** ने उनको **हर्षविजयजी म.** की अंतरंग योग्यता देखकर उनका शिष्य बना दिया। इतना ही नहीं, वि.सं. 2022 में उनके भागवती सूत्र के योगोद्वहन करवाकर बेडा (राज.) में गणि व पंन्यास पदवी से भी विभूषित किया।

पंन्यास पदारूढ़ होने पर भी उन्हें अपने पद का लेश भी अभिमान नहीं था।

छोटे-छोटे सभी मुनियों के योगोद्वहन की क्रियाएँ खूब उत्साह-उल्लास से कराते थे। योगोद्वहन के विषय में उनकी अच्छी Mastery थी।

संयम रक्षा के प्रति जागृति

पू.मु. श्री हर्षविजयजी म. का एक विशिष्ट गुण था वयोवृद्ध व ग्लान साधु भगवंतों की वैयावच्च करना ।

एक बार **पू.पं. श्री मुक्तिविजयजी म.** के सुशिष्य **मु. श्री जयभद्रविजयजी म.** को अस्पताल में भर्ती किया गया । उन्हें पेट का ऑपरेशन कराना था । ऑपरेशन हेतु उन्हें अस्पताल में कुछ दिन स्थिरता करने की थी ।

अस्पताल में सहायक महात्मा हेतु **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.** ने तपस्वी **मु. श्री हर्षविजयजी म.** को आज्ञा दी । तभी **जयभद्रविजयजी म.** ने पूज्य पंन्यासजी म. को प्रश्न किया, `वे तो दीक्षा-पर्याय में मुझ से बड़े हैं, अतः बड़ों की सेवा न लेनी पड़े, इसलिए आप किसी छोटे महात्मा को भिजवा सकोगे ।'

जयभद्रविजयजी को समाधान देते हुए पूज्यश्री ने कहा, ***'बड़ी Hospitals (अस्पताल) में दर्दी की सेवा के लिए नर्सें होती हैं । उन नवयुवतियों के फैशनेबल वस्त्र, वेशभूषा व रूप-सौंदर्य के कारण किसी युवा साधु का मन न बिगड़े, उनका मानसिक पतन न हो, इसीलिए प्रौढ़ व संयम में स्थिर हर्षविजयजी म.सा. को तुम्हारी सेवा में भेजा है ।'***

साधुओं के अंतरंग संयम की हितचिंता करनेवाले पूज्य पंन्यासजी म.सा. के हृदय में **हर्षविजयजी म.सा.** का कैसा अनूठा स्थान होगा ! यह इस घटना से स्पष्ट होता है ।

योगोद्वहन में कुशलता

पू.मु. श्री हर्षविजयजी म. ने **स्व. पू. दानसूरिजी म.सा.** के पास कई योगोद्वहन ध्यानपूर्वक किये थे । उन्हें योगोद्वहन की क्रियाओं में रस भी था । धीरे-धीरे वे उपधान व योगोद्वहन की क्रियाओं में Master हो गए ।

अनेक महात्मा योगोद्वहन कर रहे हों, सभी के अलग-अलग सूत्रों के योगोद्वहन चल रहे हों तो भी पू. पंन्यासजी म. सभी को सारी क्रियाएँ मौखिक ही करा देते थे ।

मेरी भागवती-दीक्षा का दूसरा वर्ष चल रहा था । **पू.आ.श्री मुक्तिचंद्रसूरिजी म.सा.** का चातुर्मास पाटण में साथ में ही था ।

पू.मु. श्री पूर्णचंद्रविजयजी म. एवं **पू.मु. श्री मुक्तिप्रभविजयजी म.** के महानिशीथ सूत्र के योगोद्वहन चल रहे थे ।

पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. ने कहा, `रतन ! तुझे भी उत्तराध्ययन व आचारांग सूत्र के जोग कर लेने हैं ।'

बस, उनकी आज्ञा को शिरोधार्य कर मैंने भी जोग में प्रवेश किया । जोग की सारी क्रियाएँ वे ही कराते थे । उनकी कृपावर्षा व सहयोग से मेरे उत्तराध्ययन व आचारांग के जोग भी साथ में हो गए ।

2035 में **पू. गच्छाधिपतिश्रीजी** की शुभ निश्रा में पाटण चातुर्मास दरम्यान कल्पसूत्र एवं नंदी-अनुयोग के भी जोग हो गए । वे जोग भी पू. पंन्यासजी म. ने ही कराए थे । इस प्रकार मेरी बड़ी दीक्षा से लेकर कल्पसूत्र तक के सभी जोग पूज्यश्री की ही निश्रा में सानंद-सोत्साह सोल्लास संपन्न हुए थे ।

आज्ञायोग की आराधना

गुर्वाज्ञा-पालन, यह तो साधुजीवन का प्राण और शणगार है । प्राण बिना के देह की कीमत क्या ? इसी प्रकार साधुजीवन में भी चाहे जितनी आराधना-साधना-तपश्चर्या हो, परंतु गुर्वाज्ञा-पालन का भाव नहीं है तो उस आराधना, तपश्चर्या का कोई मूल्य नहीं है ।

पू. तपस्वी पंन्यासप्रवर श्री हर्षविजयजी म. ने आज्ञा-योग को अपने जीवन में इस प्रकार आत्मसात् किया था कि किसी भी समय उन्हें किसी भी प्रकार की आज्ञा की जाती तो वे उसे सहर्ष स्वीकार करते थे ।

अध्यात्मयोगी पूज्य गुरुदेव पंन्यासजी म.सा. मारवाड में बिराजमान थे । उस समय **स्व. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की ओर से आज्ञापत्र आया कि इस बार चातुर्मास में संवत्सरी भेद हैं, **`अतः पाटण आदि क्षेत्रों में चातुर्मास हेतु महात्माओं की व्यवस्था करनी है ।'**

अपने गुरुदेवश्री की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए **पूज्य पंन्यासजी भद्रंकरविजयजी म.सा.** ने तपस्वी **पं. श्री हर्षविजयजी म.** को आज्ञा कि, `कि इस बार तुम्हें चातुर्मास हेतु पाटण जाना होगा ।'

उस समय **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** की उम्र 75 वर्ष की थी । इस वृद्धावस्था में लेश भी संकोच किये बिना उन्होंने तुरंत ही अपने गुरुदेव की आज्ञा स्वीकार कर ली ।

जेठ मास की भयंकर गर्मी में भी लेश भी संकोच किये बिना गुर्वाज्ञा को **'तहत्ति'** कहकर स्वीकार करना आसान काम नहीं है ।

एक ओर वृद्धावस्था, भयंकर गर्मी के दिन, 45 वर्ष का लंबा दीक्षा-पर्याय और राजस्थान से गुजरात का 250 कि.मी. का लंबा विहार ! फिर भी लेश भी संकोच किये बिना गुर्वाज्ञा को 'तहत्ति' कहकर स्वीकार करना; आज्ञायोग की विशिष्ट आराधना ही है ।

सहायता करे वह साधु

पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. में किसी को भी सहायता करने का विशिष्ट गुण था ।

वि.सं. 2033 में मेरा प्रथम चातुर्मास **पूज्य पंन्यास श्री हर्षविजयजी म.** के साथ पाटण में ही था । उस समय प्रवचन व गोचरी की जवाबदारी **पू.मु. श्री पुंडरीकविजयजी म.** संभालते थे ।

भक्तों के आग्रह आदि के कारण कई बार **पू.मु. श्री पुंडरीकविजयजी म.** गोचरी में भूल कर देते थे । वे आवश्यकता से भी अधिक परिमाण में गोचरी ले आते थे ।

कई बार मांडली में गोचरी बढ जाने से **पू.मु. श्री पुंडरीकविजयजी म.** परेशान हो जाते । वे आकुल-व्याकुल हो जाते, उस समय **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** उन्हें सांत्वना व आश्वासन देते हुए कहते, 'गोचरी तौलकर तो लाने की नहीं होती है, अतः कभी भूल हो सकती है, तुम लेश भी चिंता मत करो, सब ठीक हो जाएगा ।' इस प्रकार उन्हें शांत कर कई बार बढी हुई गोचरी स्वयं वापर लेते थे ।

साधु महात्माओं को सहायता करने का उनमें एक विशिष्ट गुण था ।

महान् गुरुवर के शिष्यत्व की प्राप्ति

वि.सं. 2031 और 2032 में बेडा व लुणावा चातुर्मास दरम्यान मैं पूज्य गुरुदेव **अध्यात्मयोगी पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में संयम जीवन की ट्रेनिंग ले रहा था ।

पिछले 18 वर्षों से पूज्य गुरुदेवश्री किसी को अपना शिष्य नहीं बना रहे थे । शिष्य-ममत्व भाव से वे सर्वथा मुक्त थे ।

कई बार पूज्यश्री मुझे पूछते, `तुझे किसका शिष्य बनना है ?'

मेरा एक ही जवाब होता । मेरी कुछ भी इच्छा नहीं है-`आपकी आज्ञा शिरोधार्य है ।'

आखिर पूज्यश्री ने मुझे **पू.मु. श्री प्रद्योतनविजयजी म.** का शिष्य बनाने का निश्चय किया । इस बात का मुझे कुछ भी पता नहीं था ।

माघ शुक्ला त्रयोदशी वि.सं. 2033 के शुभ दिन मेरी दीक्षा बाली में होने जा रही थी ।

दीक्षा के महोत्सव प्रसंग पर **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म., पू.मु. श्री प्रद्योतनविजयजी म.** आदि चार ठाणा पधार रहे थे ।

पूज्य गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. लुणावा में विराजमान थे ।

लुणावा से बाली की ओर विहार के पूर्व **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** ने अपने गुरुदेवश्री को विनंति करते हुए कहा, `राजु की दीक्षा होने जा रही है, वह आपका ही शिष्य होना चाहिए ।'

पूज्य गुरुदेव ने कहा, `मेरी तो उम्र हो चुकी है, उसके बाद की जवाबदारी का क्या ?'

पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. ने कहा, `आप रहे या न रहे, आपका नाम तो रहेगा न ! आपका नाम, आपका जीवन ही उसके लिए आदर्श रहेगा । मेरे गुरुदेव कौन ? मेरे गुरुदेव कितने महान् ! यह आदर्श ही उसे जीवन पर्यंत सन्मार्ग में स्थिर रखेगा । अतः आप इसके भविष्य की लेश भी चिंता न करें ।'

पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. के इस मजबूत तर्क और भावना को देखकर पूज्य गुरुदेवश्री ने अपनी मूक सम्मति दे दी ।

इस प्रकार उनके आग्रह से ही मुझे अध्यात्मयोगी **पूज्य गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** का चरम शिष्यत्व प्राप्त हुआ ।

मेरी भागवती दीक्षाविधि की समाप्ति के बाद जब मेरे नामकरण की घोषणा हुई, तब अध्यात्मयोगी **पू. पंन्यासश्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के शिष्यत्व से सभी को अपार खुशी का अनुभव हुआ ।

स्व. पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. की ही कृपादृष्टि से मुझे महान् योगी पुरुष का शिष्य बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

प्रवचन-प्रारंभ

वि.सं. 2033 में पाटण चातुर्मास के बाद **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.सा.** के साथ मैं भी पाटण से विहारकर पू. गुरुदेवश्री के वंदनार्थ पिंडवाड़ा आया । उस समय **पूज्य गुरुदेव अध्यात्मयोगी पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का स्वास्थ्य ठीक नहीं था ।

पू.मु. श्री धर्मरत्नविजयजी म. लकवाग्रस्त थे । उनकी सेवा शुश्रूषा हेतु **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** के साथ पिंडवाड़ा से पाटण की ओर हमारा विहार हुआ । हम विहार करते हुए पाटण पहुँचे ।

पाटण में **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** के साथ लकवाग्रस्त **पू.मु. श्री धर्मरत्नविजयजी म., पू.मु. श्री खांतिविजयजी म., पू.मु. श्री जयंतभद्र वि.म.** तथा मैं **(मु. रत्नसेनवि.)** थे । **पू. पंन्यास हर्ष वि. म.** व्याख्यान नहीं करते थे ।

फाल्गुण चौमासी के दिन नजदीक आ रहे थे । वि.सं. 2034 में पाटण में जैनों की भरपूर बस्ती थी । चौमासी चौदस के दिन अच्छी संख्या में आराधक लोग पौषध-प्रतिक्रमण, देववंदन व प्रवचन-श्रवण में उपस्थित रहते थे ।

चौमासी चौदस के 7-8 दिन पूर्व संघ के अग्रणियों ने **पू.पं. हर्षविजयजी** को चौमासी चौदस की आराधना, प्रवचन हेतु विनंति की ।

पूज्यश्री ने उनकी विनंति स्वीकार की और फिर मुझे बुलाकर कहा, **``रतन ! आगामी चौमासी चौदस के दिन तुझे व्याख्यान करना है ।''**

पूज्यश्री की इस बात को सुनकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ । मेरी भागवती दीक्षा के 14 मास ही हुए थे और उसके पूर्व मैंने कभी प्रवचन भी नहीं किया था ।

पंन्यासजी म. ने कहा, **``मेरी आज्ञा है, प्रवचन तुझे ही करना है ।''**

पूज्यश्री की आज्ञा शिरोधार्य की ।

फाल्गुन सुदी-14 वि.सं. 2034 के शुभ दिन **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** की निश्रा में तत्त्वार्थ सूत्र की पहली कारिका पर मेरा प्रथम प्रवचन हुआ । लगभग 500 लोगों की उपस्थिति में डेढ़ घंटे प्रवचन चला । संघ के अग्रणियों

को प्रवचन खूब पसंद पड़ा । फिर चैत्र मास की नवपद ओली में व शेष काल में महीने की पाँच तिथियों में प्रवचन हुए ।

मेरी प्रवचनशैली से **पू.पं. हर्षविजयजी म.** को खूब संतोष था । उन्होंने अंतर से आशीर्वाद देते हुए कहा, `पिंडवाड़ा से प्रयाण के पूर्व अध्यात्मयोगी पू. गुरुदेव पंन्यासजी म. ने कहा था, **``प्रवचन की जरूरत पडे तो रत्नसेन को बिठा देना ।''**

बस, ``गुरुदेव के आशीर्वाद तुम्हारे साथ हैं तो फिर भय या संकोच क्यों रखना ?''

जिस क्रिया के साथ गुरुदेव के आशीर्वाद साथ में जुड़े हों, वह क्रिया श्रेष्ठ रूप ले, इसमें आश्चर्य ही क्या है !

कई लोग मेरी प्रवचनशैली की प्रशंसा, अनुमोदना करते हैं, परंतु मैं यह मानता हूँ कि यह सब पूज्य गुरुदेवश्री के आशीर्वाद व कृपावर्षा का ही मधुर फल है ।

मेरे आत्म-हितैषी

मेरी भागवती दीक्षा **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** के वरदहस्तों से जन्मभूमि बाली में हुई । दीक्षा के दिन त्रयोदशी थी और दूसरे दिन ही चतुर्दशी थी ।

चतुर्दशी की बड़ी तिथि के दिन बियासना नहीं करना पड़े, इसलिए पूज्यश्री की सूचना से दीक्षा के दिन आयंबिल ही किया था ।

दीक्षा बाली में थी और पूज्य गुरुदेवश्री लुणावा में बिराजमान थे ।

मेरी हार्दिक इच्छा थी कि दीक्षा के दिन पूज्य गुरुदेवश्री का वासक्षेप मेरे सिर पर पड़े । पू. पंन्यासजी म. ने मेरी विनंति स्वीकार की । दीक्षा के बाद बाली से विहारकर ठीक 12.30 बजे लुणावा पहुँचे वहाँ पूज्यश्री का वासक्षेप मेरे सिर पर पड़ा और उन्ही के सान्निध्य में आयंबिल की गोचरी वापरी ।

कुछ ही दिनों में मेरी बड़ी दीक्षा के जोग चालू हुए ।

एक शुभ दिन **पू. पंन्यासश्री हर्षविजयजी म.** ने मुझे हितशिक्षा देते हुए कहा, ***``रतन ! साधुजीवन में स्वाध्याय की प्रधानता है । स्वाध्याय हेतु आहार-संयम भी खूब जरूरी है । दिन में 2-3 बार गोचरी वापरे तो समय भी ज्यादा waste होता है । दशवैकालिक सूत्र में भी प्रभु***

की आज्ञा है कि साधु को दिन में एक ही बार आहार लेना चाहिए, अतः तुम्हारी प्रसन्नता व भावना हो तो प्रतिदिन एकासना और महीने में सुद पंचमी को सम्यग्ज्ञान की आराधना हेतु उपवास करना चाहिए । हाँ ! उपवास के पारणे में बियासने की छूट रखना ।''

पूज्यश्री ने आगे कहा, ``आयंबिल का तप तेरे लिए कठिन है, अतः वर्धमान तप में तो तू आगे नहीं बढ़ सकता हैं, परंतु रोज एकासने का तप करने जैसा है ।'' पूज्यश्री ने मेरे आत्महित के लिए जो आत्मीय भाव से प्रेरणा की, उसी समय मैंने उसको सहर्ष स्वीकार किया ।

यद्यपि उपवास तप मेरे लिए खूब कठिन था. परंतु पूज्यश्री के शुभाशिष से वह भी सुगम होने लगा । संयम जीवन के आज 45 वर्ष बीतने पर भी नियमित एकासना व सुद पंचमी को उपवास चालू है-यह सब **पूज्यश्री हर्षविजयजी म.** की प्रेरणा और उनकी दिव्य कृपा, आशीर्वाद का ही फल है ।

आयंबिल तप में भी निर्दोष भिक्षाचर्या

मोहाधीन परिवारजनों की भागवती दीक्षा हेतु अनुमति नहीं होने से **मु.श्री हर्षविजयजी म.** ने घर से भागकर ही दीक्षा ली थी ।

अत्यंत ही दुर्लभ ऐसी भागवती-दीक्षा को सफल व सार्थक बनाने के लिए **मु. श्री हर्षविजयजी म.** ने भी कमर कस ली थी ।

वे संयम-जीवन की सभी क्रियाएँ अप्रमत्त भाव से करने लगे ।

ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम की मंदता के कारण वे आगम शास्त्रों का गहन अभ्यास तो न कर सके, परंतु आगमों के सार रूप वे निर्दोष संयम जीवन जीने लगे । गोचरी में किसी प्रकार का दोष न लगे, इसके लिए वे खूब जागृत रहने लगे । रसनेन्द्रिय के जय के लिए उन्हें आयंबिल तप खूब प्रिय था । वे निरंतर आयंबिल तप की, वर्धमान तप की ओलियाँ करने लगे ।

उस जमाने में बड़े-बड़े शहरों में भी आयंबिल खाते नहींवत् थे ।

पूज्य पंन्यासजी म. स्वानुभव बताते हुए कहते, ``हमारे जमाने में आयंबिलखाते नहीं थे, गोचरी में भी निर्दोष भिक्षाचर्या पर खूब भार था । अतः मेरे अधिकांश आयंबिल रोटी और दाल से ही हुए । कई बार तो विहार में सिर्फ रोटी और पानी से, तो कई बार विहार में निर्दोष रोटी भी नहीं मिलती तो सिर्फ चने और पानी से भी आयंबिल किये थे ।

आज तो तुम्हारा पुण्य खूब बढ़ गया है । गाँव-गाँव में आयंबिलखाते हो गए हैं ।'' इस प्रकार निर्दोष भिक्षाचर्या द्वारा उन्होंने अपने जीवन में हजारों आयंबिल किये हैं ।

पिछले 100-200 वर्ष के इतिहास में साधु संस्था सर्वप्रथम वर्धमान तप की 100 ओली पूर्ण करने का श्रेयः **पू.मु. श्री हर्षविजयजी म.** को ही जाता है । वि.सं. 2007 में अपनी जन्मभूमि सूरत में परमोपकारी **पूज्य गुरुदेव अध्यात्मयोगी पू. पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** की तारक निश्रा में उन्होंने अपना वर्धमान तप पूर्ण किया था । उस समय पूज्य गुरुदेवश्री की सत्प्रेरणा से सैकडों लोगों ने वर्धमान तप का 20 दिन का पाया डाला था और खूब भव्य समारोह के साथ यह तप-उत्सव संपन्न हुआ था ।

देह के ममत्व भाव से मुक्त

वि.सं. 2035 आसो वदी 4 के दिन नगर के बाहर स्थंडिल जाते समय बीच मार्ग में चक्कर आ जाने से वे अचानक नीचे गिर गए थे । फिर कोई महात्मा उन्हें हाथ पकड़कर उपाश्रय में ले आए थे ।

उपाश्रय में डॉक्टर ने Body Check की । डॉक्टर ने कहा, ``हार्ट अटेक'' की संभावना है अतः इन्हें संपूर्ण आराम करना होगा ।''

हार्ट के दर्द में भी वे प्रतिदिन प्रातः मंदिर जाते थे । डॉक्टर ने सीढ़ियाँ चढ़ने हेतु इन्कार कर दिया, अतः वे अष्टापद के मंदिर में दर्शनार्थ जाते थे ।

इस प्रकार करते हुए अष्टमी का दिन आया । वे महीने में पाँच तिथि उपवास करते थे, परंतु आज स्वास्थ्य ठीक नहीं होने से उन्हें नवकारसी करनी पड़ी, इस बात का उन्हें अत्यंत ही दुःख था ।

तीनों टाइम गोचरी वापरने के लिए मांडली में ही पधारे थे । उन दिनों में अनेक साधु-साध्वीजी भगवंतों के योगोद्वहन भी चालू थे । साध्वीजी भगवंतों के योगोद्वहन की क्रियाएँ वे ही करा रहे थे, उस दिन शाम को भी उन्होंने योगोद्वहन की क्रिया कराई थी ।

संध्या के समय उन्हें छाती में दर्द होने लगा तो डॉक्टर ने कहा, ``कल सुबह कार्डियोग्राम निकालना होगा !''

डॉक्टर के चले जाने के बाद शाम को मैं कालग्रहण के नोतरा देने के लिए जा रहा था, तभी उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया । मैं उनके पास गया और बैठा !

वे मुझे `रतन' कहकर बुलाते थे । उन्होंने कहा, ***'रतन ! मैं तो किनारे बैठा हूँ ! पका हुआ पान हूँ ! पका पान कब गिर जाएगा: पता नहीं ! वैसे ही हमारी मृत्यु कब हो जाएगी, पता नहीं ! तुम्हारी छोटी उम्र है । बड़ी जवाबदारी है । गुरुदेव का वारसा तुम्हें सँभालना है । इसके लिए पू. हरिभद्रसूरिजी म. तथा पू यशोविजयजी म. के ग्रंथों का खूब-खूब स्वाध्याय करना ।***

जब भी मैं मेरे दर्द की बात कहूँ तो उसका अर्थ यह मत समझना कि, ''डॉक्टर को बुलाने के लिए कह रहा हूँ, परंतु अंतिम समय में मेरी समाधि बनी रहे, उसी के लिए प्रयत्न करना, नवकार सुनाना !''

मैंने उनकी हितशिक्षा सहर्ष स्वीकार की । उसके बाद कालग्रहण हेतु नोतरा देकर आया ।

उसके बाद उन्होंने बैठकर प्रतिक्रमण किया । प्रतिक्रमण में चैत्यवंदन, श्रुतदेवता व क्षेत्रदेवता की स्तुति आदि भी स्वयं बोले ।

फिर संथारा पोरिसी पढ़ाई गई । **'चत्तारि मंगलं, एगोहं नत्थि मे कोई'** आदि गाथाएँ खूब भावपूर्वक बोले और भव-भव में प्रभु का शासन मिले, ऐसी भावना व्यक्त की ।

उसी समय **पू. आचार्य श्री महोदयसूरिजी म.सा.** भी उनकी सुखसाता पूछने के लिए ऊपर के हॉल से नीचे पधारे !

मैं भी पास में ही था । आचार्य भगवंत ने पूछा, ``स्वास्थ्य कैसा है ?'' उन्होंने कहा, ``ठीक है ।'' उसके बाद बोले, ``पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य भगवंत को और पू. गुरुदेवश्री को मेरी सविनय वंदना कहें । मैंने उनकी जाने-अनजाने में कई आशातनाएँ की हैं, उसके लिए हृदय से मिच्छामि दुक्कडम् देता हूँ ।

वर्षों से मेरी एक इच्छा थी-`पूज्य गुरुदेव और दादा गुरुदेव के साथ चातुर्मास करना है, वह भावना इस वर्ष पूरी हुई । मुझे इस शरीर की कोई चिंता नहीं है । मैं खूब आनंद में हूँ ।''

उसके बाद **पूज्य पं. श्री हर्षविजयजी म.** की समाधि के लिए रात्रि में बारी-बारी से महात्माओं को जागृत रहने के लिए **पू. महोदयसूरिजी म.सा.** ने व्यवस्था कर ली ।

उसके बाद **पू.पं.श्री हर्षविजयजी म.** सो गए । इधर उनकी पाट के नजदीक में मैं **मु. श्री कुलयशविजयजी म.** के साथ वार्तालाप कर रहा था ।

घड़ी में 10 बजे थे । उसी समय **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** पुनः जगकर बैठ गए और नवकार मंत्र का जाप करने लगे ।

तुरंत ही मैं उनके पास गया और पूछा, ``साहेबजी ! क्या हो रहा हैं ? तबियत तो ठीक है न ?'' उन्होंने इतना ही कहा, ``छाती में दर्द हो रहा है –तुम मुझे नवकार सुनाओ ।''

मैंने नवकार सुनाना चालू किया । उसी समय **पू.पं. श्री विचक्षणविजयजी म.सा.** आदि 5-7 महात्मा वहाँ आ गए और नवकार सुनाने लगे ।

पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. पालथी लगाकर स्वयं नवकार का जाप कर रहे थे और नवकार का श्रवण कर रहे थे ।

नवकार सुनते-सुनते ही उन्हें Heart Attack हुआ और उनका मस्तक नीचे ढल गया । समाचार मिलते ही **पू.मु. श्री वज्रसेनविजयजी म.** एवं **पू.मु. श्री कीर्तियशविजयजी म.** भी वहाँ आ गए और हार्ट पर मसाज करने लगे । परंतु उसके पूर्व ही उनके आतम पंखी ने इस देह पिंजर को छोड़ परलोक के लिए प्रयाण कर लिया था ।

ऊपर हॉल में समाचार मिलते ही **पू. गच्छाधिपति आचार्य भगवंत** भी नीचे पधारे परंतु उसके पूर्व ही **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** ने अपूर्व समाधि के साथ देह छोड़ दिया था ।

जीवन के अंतिम क्षणों में भी उनकी समाधि अपूर्व कोटि की थी ।

अंतिम समय में भी उनकी कर्णेन्द्रिय सशक्त थी । भयंकर बीमारी या मृत्यु की अंतिम पलों में भी उन्हें किसी प्रकार का आर्तध्यान या देह का ममत्व नहीं था ।

संयमजीवन की साधना का अंतिम फल तो समाधि मृत्यु ही है । जिसने समाधिमृत्यु प्राप्त की उसने इस जीवन का सर्वस्व प्राप्त कर लिया

और अंतिम समय में समाधि भाव नहीं रहा तो जीवन में सब कुछ हार गये, ही कहलाएगा ।

दूसरे दिन बहुत ही धूमधाम के साथ उनके नश्वर देह को जरीयन की पालखी में बिराजमान कर `जय जय नंदा-जय जय भद्रा' की गगन ध्वनि के साथ श्मशान यात्रा निकाली गई । तत्पश्चात् **प.पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की तारक निश्रा में देववंदन हुआ । देववंदन बाद पू. आचार्यदेवश्री ने फरमाया–

''मरण प्रकृति है, जन्म विकृति है । शास्त्रकार भगवंतों की यह बात दिमाग में बराबर बैठ जाय तो जिस प्रकार ये महात्मा अपने जीवन को सफल बना गए, उसी प्रकार हम भी अपने जीवन को सफल बना सकेंगे ।

ये महात्मा इतने जल्दी चले जाएंगे ऐसी कोई कल्पना भी नहीं थी । परंतु शास्त्रकार ने कहा है-'आयुष्य पूरा होने पर जाना ही पड़ता है । जिसे जन्म का भय लगा है, वही अपने जीवन को सुंदर रीति से जी सकता है । ऐसा ही सुंदर जीवन गुर्वाज्ञा के अधीन रहकर पं. श्री हर्षविजयजी जी गए । 78 वर्ष की उम्र में भी वे पाँच तिथि उपवास करते थे । ये महात्मा गुरु की आज्ञानुसार जीवन भर चले । गुरु की आज्ञा से जहाँ जाना पड़ा, वहाँ गए । गुरु की आज्ञा उनके जीवन में प्रधान थी ।

''इस महात्मा में ज्ञान कम था, किंतु उनकी विराग की साधना, उनका त्याग-तप और गुर्वाज्ञा-अधीनता आदि दृष्टांतभूत थे । सुंदर साधु- जीवन जीकर गए हैं । 'एगोऽहं नत्थि मे कोइ' की भावना में रत बनकर गए । अंतिम अवस्था में भी 'मुझे ठीक है, किसी डॉक्टर की आवश्यकता नहीं है, किसी को जागने की जरूरत नहीं है' इत्यादि शरीर की स्पृहावाले नहीं बोल सकते । ऐसे महात्माओं के स्वर्गवास बाद देववंदन की क्रिया स्वयं में जागृति लाने के लिए करने की है । ऐसे प्रसंग को देखकर अपने में से प्रमाद दूर हो जाना चाहिए । मृत्यु का भय दूर हो जाना चाहिए । विषय का लोभ और कषाय की अधीनता घटनी चाहिए । यदि ऐसा नहीं होगा तो जीवन व्यर्थ जाएगा ।''

त्याग, तप व निर्मल संयम के साधक परमोपकारी पूज्य पंन्यास प्रवर श्री हर्षविजयजी गणिवर्य के चरणों में कोटि कोटि वंदन हो ।

2

शिष्य

सेवाभावी पू.मु.श्री पद्मप्रभविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1987
आषाढ़ सुदी-10

कालधर्म
वि.सं.2031

दीक्षापर्याय 44 वर्ष

वढ़वाण (गुजरात) निवासी अमृतलालभाई की धर्मपत्नी ने वि.सं. 1970 मगसिर वदी अष्टमी के दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया-**प्राणलाल !**

वढवाण शहर अर्थात् खूब संस्कारी भूमि ! आगमप्रज्ञ **पू. मानतुंगसूरिजी म., गच्छाधिपति पू. महोदयसूरिजी म.** तथा अन्य अनेक महापुरुषों की भी जन्मभूमि रही है ।

बचपन से ही प्राणलाल को माता-पिता, धार्मिक पाठशाला तथा पू. गुरु भगवंतों के समागम से खूब अच्छे संस्कार मिले !

पू. सागरजी म. के समागम से प्राणभाई में छोटी उम्र में ही वैराग्य भाव का बीजारोपण हुआ, जिसके फलस्वरूप मात्र 17 वर्ष की सुकोमल वय में वि.सं. 1987 आषाढ़ सुदी-10 के शुभ दिन अहमदाबाद में प्राणलालभाई की भागवती दीक्षा हुई और उनका नाम पद्मप्रभ सागर रखा गया, वे **पू.सागरजी म.** के शिष्य कहलाए ।

बड़े उत्साह-उल्लास के साथ प्राणलालभाई ने दीक्षा तो ले ली, परंतु ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, त्यों त्यों परिणाम वृद्धिंगत होने के बजाय कुछ Down होने लगे ।

एक ओर उच्च खानदानी होने के कारण घर जाने की भी बिल्कुल इच्छा नहीं, ऐसे संयोगों में उन्हें संयम में स्थिर कर सके, ऐसे आलंबन की अपेक्षा थी ।

डूबते हुए को एक नाव की भाँति **मु.श्री पद्मप्रभविजयजी** को भी **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** का सुयोग मिल गया ।

उन्होंने मुनिश्री को खूब-खूब आश्वासन दिया और संयम की दुर्लभता आदि समझाकर संयममार्ग में स्थिर कर दिया !

मुनिश्री की इच्छा **पू.भद्रंकरविजयजी म.** के सान्निध्य में ही सदा रहने की थी । उन्होंने **पू.प्रेमसूरिजी म.सा.** को विनंति की । **पू. प्रेमसूरिजी म.** ने उनकी योग्यता देखकर **मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.** के नाम दिक्बंधन करा दिया ।

अब वे **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** के सान्निध्य में पूर्ण समर्पित शिष्य की भाँति रहने लगे । धीरे-धीरे उनका क्षयोपशम भी बढ़ता गया । निर्दोष भिक्षाचर्या और ग्लान महात्माओं की सेवा-भक्ति में उन्हें विशेष रस पैदा हुआ ।

एक बार उन्हें दो महात्माओं की सेवा-वैयावच्च करने का संयोग प्राप्त हुआ । दोनों महात्माओं का स्वभाव थोडा विचित्र था । आँखों से भी उन्हें बहुत कम दिखता था, परंतु **मु. श्री पद्मप्रभविजयजी म.**ने उन दोनों महात्माओं की इस प्रकार सेवा की, कि उन दोनों का स्वभाव ही बदल गया । उन्होंने उन दोनों महात्माओं को खूब समाधि दी, जिसके फलस्वरूप उन दोनों को मृत्यु की अंतिम पलों में समाधि-भाव की प्राप्ति हुई ।

स्वस्थ व्यक्ति की सेवा करना, बहुत बड़ी बात नहीं है परंतु ग्लान व रोगी की सेवा करना, उन्हें खूब समाधि प्रदान करना खूब कठिन काम है, परंतु **पद्मप्रभविजयजी म.** इस कला में निष्णात बन गए थे । ज्येष्ठ पूज्यों की आज्ञा से उन्होंने अनेक महात्माओं को समाधि प्रदान की ।

'जो दूसरों को समाधि प्रदान करता है, उसके लिए समाधि की प्राप्ति दुर्लभ नहीं होती है ।'

वि.सं. 2031 में सुरेन्द्रनगर में **पद्मप्रभविजयजी म.** ने अत्यंत समाधि के साथ अपने भौतिक देह का त्यागकर परलोक के लिए प्रयाण कर दिया ।

वर्तमान के धन्ना अणगार पूज्य मुनिश्री चरणविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1990
मार्गशीर्ष वदी-11

कालधर्म
वि.सं.2000
चैत्र वदी-5

दीक्षापर्याय 10 वर्ष

इतिहास इस बात का साक्षी है कि **कांकंदी** के धन्ना अणगार ने मात्र 9 मास का चारित्र पाला और वे अपने त्यागमय और तपोमय साधना के द्वारा अमर हो गए । इतिहास के पृष्ठों पर उनका नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित किया गया !

वर्तमान युग के धन्ना अणगार **पू.मु.श्री चरणविजयजी म.,** जिनका संयम पर्याय मात्र 10 वर्ष का रहा, परंतु इस अल्प पर्याय में वे ऐसा जीवन जी गए कि आज हमें धन्ना अणगार की स्मृति ताजी हो जाती है ।

जिनका जन्म धर्मनगरी सूरत में वि.सं. 1956 चैत्र वदी 14 के शुभ दिन हुआ था । उनके पिता का नाम तलकचंदभाई था । उनका गृहस्थ नाम चंदुभाई था ।

यौवन के प्रांगण में प्रवेश करने के बाद तो वे खाने-पीने और मौज-शौक के खूब शौकीन हो गए थे परंतु सद्गुरु भगवंत रूपी पारसमणि का संपर्क हुआ और उनके जीवन की दिशा ही बदल गई । भोग के बदले वे योग के पिपासु बने । राग के बदले उन्हें त्याग में आनंद आने लगा ।

यौवन के प्रांगण में प्रवेश के बाद चंदुभाई ने डायमंड का व्यवसाय चालू किया । सविताबेन के साथ उनका विवाह हुआ ।

सद्गुरु के समागम से संसार के भौतिक सुखों के प्रति तीव्र वैराग्यभाव प्रकट हुआ, जिसके फलस्वरूप यौवन वय में ही ब्रह्मचर्यव्रत स्वीकार कर लिया ।

वर्धमानतप का पाया डालकर चंदुभाई तथा सविताबेन ने वर्धमान तप की 37 ओलियाँ भी की ।

चंदुभाई और सविताबेन दोनों दीक्षा के इच्छुक थे, परंतु सविताबेन का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था, फिर भी वह अपने पति के संयम मार्ग में बाधक बनना नहीं चाहती थी ।

चंदुभाई की प्रकृति अत्यंत ही शांत और सौम्य थी । वे अपने गृहस्थ जीवन में **'नवपद आराधक समाज'** के अध्यक्ष भी रहे । कुछ समय के लिए वे **पू.रामविजयजी म.** के प्रवचनों को प्रकाशित करनेवाले **'जैन प्रवचन'** साप्ताहिक के संपादक भी रहे ।

पू. रामविजयजी म. के प्रवचनों के श्रवण एवं उन प्रवचनों के संपादन से उनकी वैराग्य भावना दृढ़ बनती गई ।

और एक दिन 39 वर्ष की युवावस्था में वि.सं.1990 माघ कृष्णा 11 के शुभ दिन **पू.दानसूरिजी म.** के वरद हस्तों से भागवती दीक्षा अंगीकार कर वे **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.** के दूसरे शिष्यरत्न **मु. श्री चरणविजयजी** बन गए ।

दीक्षा-अंगीकार के साथ ही गुरुचरणों में समर्पित होकर वे अपने गुरुदेव के चरणों में इतने तल्लीन बन गए कि वे अपना स्वतंत्र अस्तित्व ही भूल गए ।

अपनी इच्छाओं को उन्होंने गौण कर दिया । उत्तराध्ययन सूत्र में निर्दिष्ट समर्पित शिष्यों का एक विशिष्ट गुण 'इंगियागार संपन्ने' को आत्मसात् कर दिया ।

अपने गुरुदेव के इशारे को वे समझ जाते हैं । गुरुदेव को कुछ कहना ही न पड़े, इस ढंग से उन्होंने अपनी जीवनचर्या बना ली ।

'देहदुक्खं महाफलं' सूत्र को जीवन में आत्मसात् करते हुए उन्होंने कठोर तप चालू किया । वे एकांतर उपवास तो करते ही थे, परंतु पारणे में भी आयंबिल करते और आयंबिल भी खूब देरी से करते । आयंबिल में वे मध्याह्न के समय गोचरी के लिए जाते और जो भी लूखा-सूखा मिलता, उसमें वे संतोष मान लेते ।

वे बार-बार अट्ठाइयाँ करते रहते थे ! वे सभी अट्ठाइयाँ चौविहार ही करते थे ।

वे मांडली और गुरुदेव के कार्य में लेश भी प्रमाद नहीं करते थे । मांडली का कार्य भक्तिपूर्वक करते थे ।

उन्हें प्रभु-भक्ति में खूब रस था । वे घंटों तक प्रभु-भक्ति में लीन रहते थे और अपने अस्तित्व को भी भूल जाते थे ।

वे अपने गुरुदेव के शयन के बाद ही शयन करते थे और गुरूदेव के जगने के पूर्व ही जग जाते थे ।

उनके अपूर्व समर्पण भाव को देखकर **पूज्य गुरुदेव**श्री ने बिसलपुर (राज.) निवासी मुमुक्षु प्रेमचंद को भागवती दीक्षा देकर उनका शिष्य बना दिया था, जिनका नाम **प्रद्योतनविजयजी** रखा गया ।

अपने 10 वर्ष के संयम पर्याय में **मुनि श्री चरणविजयजी** अपने गुरुदेव से एक दिन के लिए भी कभी अलग नहीं रहे । सिर्फ भवितव्यतावश कालधर्म के तीन मास पूर्व ही गुर्वाज्ञा से अंतरीक्ष तीर्थ की यात्रा के लिए अलग रहे थे ।

अपने 10 वर्ष के संयम-पर्याय में लगभग 550 दिनों में उन्होंने एकासना-बियासना किए बाकी शेष दिनों में उपवास, छट्ठ, अट्ठाई व आयंबिल ही किये थे ।

वर्धमान तप की 85 ओलियाँ पूर्ण की थीं । 85 वीं ओली दरम्यान उन्होंने दो अट्ठाई, अनेक छट्ठ-अट्ठम व 300 मील का उग्र विहार भी किया था ।

उग्र विहार कर वे अंतरीक्ष पहुँचे और प्रभु के पास अट्ठाई का पच्चक्खाण ले लिया । उन्होंने आठों दिन प्रभु की अपूर्व भक्ति की ।

उनकी अपूर्व भक्ति को देखकर 52वीं ओली के तपस्वी **मुनि श्री महानंदविजयजी** ने 9 उपवास और छट्ठ के पारणे छट्ठ से वर्षीतप करनेवाले **चंद्राननविजयजी** ने अट्ठाई के पच्चक्खाण कर लिये ।

अंतरीक्ष यात्रा कर तीनों तपस्वी मुनि आकोला पधारे । फागुण वदी-30 के दिन **चरणविजयजी म.** ने 85 वीं ओली का पारणा किया । उसके बाद उनका स्वास्थ्य खराब हो गया । चैत्र वदी-5 वि.सं. 2000 दि. 14-4-1944 के शुभ दिन दोपहर 2.25 बजे अत्यंत ही समाधिपूर्वक अपने भौतिक देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया ।

मात्र 10 वर्ष के संयम-पर्याय में संयम की अपूर्व सुवास सुगंध फैलानेवाले पूज्यश्री के चरणों में कोटि–कोटि वंदना ।

शिष्य

तपस्वी मुनि श्री महानंदविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1996
का. वदी-10

कालधर्म
वि.सं.2026
फा. वदी-5

दीक्षापर्याय 30 वर्ष

मोरबी-कच्छ निवासी लक्ष्मीचंदभाई की धर्मपत्नी जीवीबेन ने वि.सं.1961 आसो वदी-11 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया । बालक का नाम **'मगन'** रखा गया ।

बचपन में ही मगन को धार्मिक संस्कार मिले । युवावस्था में लग्न ग्रंथि से जुड़े । लालबाग-मुंबई में आराधकों को उनकी धार्मिक क्रियाओं में सहायक बनने के कारण सभी आराधक उन्हें **पंडितजी** कहते थे ।

कुछ वर्षों के बाद **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की वैराग्यवाणी के श्रवण से उनके अन्तर्मन में चारित्र की अभिलाषा उत्पन्न हुई । 35 वर्ष की उम्र में वि.सं. 1996 कार्तिक कृष्णा 10 के शुभ दिन भायखला-मुंबई में भागवती दीक्षा अंगीकार कर **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के शिष्य **मु. श्री महानंदविजयजी** बने !

उनकी पुत्री लीलावती ने भी दीक्षा ली, जिसने सा. सूर्यांशुयशाश्रीजी के नाम से सुंदर आराधना की ।

संयम-जीवन के स्वीकार बाद वे आराधना-साधना में जुट गए । आत्मा पर लगे कर्मों के नाश एवं रसनेन्द्रिय पर विजय पाने के लिए उन्होंने आयंबिल तप को आत्मसात् कर लिया । वि.सं. 2014 में उन्होंने **पू. लब्धिसूरिजी म., पू. प्रेमसूरिजी म.** व **पू. रामचन्द्रसूरिजी म.**आदि विशाल साधु समुदाय की उपस्थिति में वर्धमान तप की 100 ओली पूर्ण की ।

उसके बाद उन्होंने पुनः वर्धमान तप चालू किया और 54 ओलियाँ पूर्ण की । उन्होंने उत्साह उल्लास के साथ 31 उपवास भी किये, जिनका पारणा आयंबिल से किया । उन्होंने सिद्धि तप और श्रेणी तप भी किया । इस प्रकार उन्होंने 6500 आयंबिल व 1100 उपवास किये ।

दीक्षा के पूर्व दीक्षा की प्राप्ति के लिए उन्होंने 10 मास तक छह विगई का त्याग भी किया था ।

उनका त्याग भी अद्‌भुत था । केले को छोड़कर उन्होंने सभी फलों तथा सूखे मेवे का जीवन पर्यंत त्याग किया था ।

◆ वे उभय काल खड़े-खड़े विधिपूर्वक प्रतिक्रमण की क्रियाएँ करते थे ।

◆ प्रतिदिन प्रातः 2.30 बजे उठकर लगभग 400 लोगस्स का कायोत्सर्ग करते थे ।

◆ वे प्रतिदिन नमस्कार महामंत्र की पाँच मालाएँ, उवसग्गहरं स्तोत्र की एक माला, शंखेश्वर पार्श्वनाथ का जाप, नवपदजी का जाप करते थे ।

◆ वे प्रतिदिन नवस्मरण का मंगल पाठ करते थे । योगशास्त्र, वीतराग स्तोत्र व अन्य प्रकरणों का रोज स्वाध्याय करते थे ।

◆ वे प्रतिदिन आठ थुई का देववंदन करते थे ।

◆ ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कम होने पर भी वे स्वाध्याय में खूब उद्यमशील थे, जिसके फलस्वरूप उन्होंने संस्कृत-प्राकृत भाषा पर प्रभुत्व प्राप्त कर अनेक ग्रंथों का अभ्यास भी किया था ।

प्रकृतिवश कभी-कभार क्रोध आदि दोषों का सेवन हो जाय तो वे तीव्र पश्चात्ताप करते और पूज्यों के पास उसका प्रायश्चित्त करते थे ।

वि.सं. 2025 में उन्होंने अपना चातुर्मास सिद्धगिरि की धरती पर किया । गिरिराज की छत्रछाया और परम गुरुदेव **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के वैराग्यपूर्ण धर्मोपदेश के श्रवण से उनकी साधना अप्रमत्त भाव से चल रही थी । इसी बीच उन्हें कैंसर का रोग लागू पड़ा । पू. आचार्य भगवंत की हितशिक्षा से उनकी समाधि बनी रही ।

चातुर्मास समाप्ति बाद पालीताणा से विहारकर अहमदाबाद पधारे । डॉक्टरों की सूचना से फागुण वदी-3 के दिन उनका ऑपरेशन भी हुआ । ऑपरेशन बाद थोडा सुधार नजर आ रहा था ।

कालधर्म के दो दिन पूर्व ही उन्हें अपनी मृत्यु का ख्याल आ गया था, अतः उन्होंने समाधिमृत्यु संबंधी साहित्य का खूब अध्ययन किया ।

पू. तपस्वी मु. श्री खांतिविजयजी म. तथा **पू. मु. श्री चरणप्रभविजयजी म.** उनकी सेवा में तत्पर थे । उन्होंने उन दोनों को कहा, ``यद्यपि महाव्रतों के पालन में मुझे बड़ा दोष नहीं लगा है, परंतु उत्तर गुणों में क्षति रही है, अतः मेरी मृत्यु न बिगड़े, उसकी सावधानी रखना ।''

मुनियों ने कहा, ``आपने तो वर्धमान तप किया है ।

जिम-जिम ए तप सेवीए रे,

तिम-तिम भवस्थिति परिपाक सलूणा ।

यह पढ़ने से समाधि क्यों नहीं मिलेगी ।''

उन्होंने कहा, ``कषाय की परिणति से कब नुकसान हो जाय, उसका पता नहीं चलता है ।''

कैंसर के ऑपरेशन के बाद **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म. (बापजी म.)** ने उन्हें बड़ी शांति सुनाई ।

डॉक्टर ने कहा, ``आज रात्रि में भोजन की छूट रखना ।''

उन्होंने कहा, ``मौत कल आनेवाली हो तो आज आ जाय, परंतु मेरे नियम में भंग नहीं होगा ।''

फागुण वदी-5 को स्वास्थ्य ज्यादा बिगड गया ।

पू. चरणप्रभवि. म. ने उन्हें सुनाना चालू किया,

'शासननो सार, चौदह पूर्वनो उद्धार,

जेना मनमां नवकार, तेने शुं करे संसार ?'

उसके बाद `सुण जिनवर शत्रुंजय धणीजी ।' आदि स्तवन का श्रवण किया ।

उनकी भावना से **पू. खांतिविजयजी म.** ने उन्हें **अमृतवेल की सज्झाय** सुनाई । फिर हीराभाई गिरधर नगरवालों ने अरिहंत की धुन सुनाई और उसमें वे लीन बने ।

उसके बाद संथारा पोरिसी की मुख्य गाथाओं का श्रवण कर ``मैं सबको खमाता हूँ ।'' बोलते हुए पडिलेहण की क्रिया में वांदणा देते समय हृदय रोग का हमला होने से **'नमो अरिहंताणं'** की धुन के बीच समाधिपूर्वक वि.सं. 2025 फाल्गुन वदी-5 के दिन अत्यंत ही समाधि के साथ उन्होंने अपने भौतिक देह का त्याग कर परलोक के लिए प्रयाण कर दिया ।

5

शिष्य

भीष्म तपस्वी मुनिश्री चंद्राननविजयजी

दीक्षा
वि.सं.1996
महा सुदी-6

कालधर्म
वि.सं.2018
का.सु.-13

दीक्षापर्याय 21 वर्ष

धर्मनगरी अहमदाबाद में जवेरीवाड में श्रेष्ठिवर्य मगनभाई की धर्मपत्नी संधारबेन ने वि.सं.1944 माघ शुक्ला द्वादशी के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया **चिमन** !

संस्कारी परिवार होने से बचपन से ही चिमन में धर्मसंस्कारों का सिंचन होता रहा। प्रभुदर्शन व गुरुवंदन बिना नवकारसी नहीं !

यौवनवय में प्रवेश करने के बाद लग्न–ग्रंथि से जुड़े, परंतु संसार का रंग नहीं होने से जवेरी के धंधे में भी उन्हें आनंद नहीं आता था।

क्रमशः दो पुत्र हुए। पत्नी भी धर्मपरायणा थी, अतः उनके तीव्र वैराग्य भाव को देखकर उनके संयममार्ग में बाधक नहीं बनी और उनके लिए संयम में सहायक बन गई। वे मुंबई आयंबिलखाते में कुशल कार्यकर्ता भी थे। वे कुशल जवेरी तो थे ही, उसी प्रकार उन्होंने आत्महितैषी गुरुदेव शोध लिये।

वि.सं. 1996 माघ शुक्ला-6 के शुभ दिन 52 वर्ष की प्रौढ़ वय में अँधेरी-मुंबई में **पू.गुरुदेव श्री भद्रंकरविजयजी** के वरदहस्तों से दीक्षित होकर उन्हीं के शिष्य **मु.श्री चंद्राननविजयजी** बने।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद तप की साधना के द्वारा काया की माया को दूर करने का प्रयत्न किया।

दीक्षा के पहले ही चातुर्मास में उपवास के पारणे आयंबिल कर चौमासी तप किया। तीसरे चातुर्मास अट्ठम के पारणे आयंबिल और चौथे वर्ष में चार उपवास के पारणे आयंबिल करके चौमासी तप किया।

उसके बाद भी कई वर्षों तक हर महीने में दो अट्ठाई आदि तप किये । उन्होंने वर्धमान तप की 70 ओली भी की । इस प्रकार उग्र तप करके काया की माया उतार दी थी ।

आत्मानुशासन

वि.सं. 2013 में वे अपने गुरुदेव के साथ मुंबई से शंखेश्वर की ओर विहार कर रहे थे ।

वृद्धावस्था के कारण वे पीछे रह जाते थे । **मु. मित्रानंदविजयजी** भी साथ में थे । स्थंडिल जाने के कारण सबसे पीछे रह गए थे । फिर तेजी से आगे बढ़े । उन्होंने देखा तपस्वी म. गुस्से में आकर कुछ बड़बड़ कर रहे हैं ।

मित्रानंदविजयजी को खूब आश्चर्य हुआ कि इतने शांत व तपस्वी महात्मा इतना गुस्सा क्यों कर रहे हैं ? वे उनके निकट पहुँचे और बोले, ``तपस्वी महाराज ! आज आप गुस्से में आ गए ?''

उन्होंने कहा, ``और कुछ नहीं है, मैं अपनी आत्मा को ठपका दे रहा हूँ । आत्मा को हितशिक्षा दे रहा हूँ ।''

मित्रानंदविजयजी ने ध्यान से सुनने की कोशिश की, वे अपनी आत्मा को कह रहे थे, वे आत्मानुशासन-आत्मनिंदा करते हुए बोल रहे थे, ``अरे नालायक ! जिंदगी भर खाया है, फिर भी अभी यह खाऊँ, वह खाऊँ का धन्धा कर रहा है । इतना तप किया फिर भी सच्चे तप का रंग कहाँ लगा है ? त्याग की मस्ती का कोई अनुभव हुआ है ?''

ये सुनते हुए **मु. श्री मित्रानंदविजयजी** आगे बढ़ गए ।

उनके दिल में तपस्वी महाराज के प्रति रहा सद्भाव सौ गुणा बढ़ गया ।

दूसरों को हितशिक्षा देना आसान है, आत्मानुशासन सबसे अधिक कठिन है ।

– गुर्वाज्ञा को उन्होंने अपना प्राण बना दिया था ।

वे त्याग-तप और तितिक्षा की सुंदर आराधना कर रहे थे ।

2017 में लास-कैलाशनगर में गुर्वाज्ञा से **पू. हर्षविजयजी** के साथ चातुर्मास पूर्ण कर विहार कर जावाल आए । उन्हें चौविहार उपवास का तप था । अचानक स्वास्थ्य खराब हो गया । 73 वर्ष की उम्र में 21 वर्ष का संयम पालन कर नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए वि.सं. 2018 में एक दिन जावाल में अत्यंत समाधि पूर्वक मार्गशीर्ष सुदी 13 के कालधर्म को प्राप्त हुए ।

धन्य तपस्वी ! धन्य तपस्या !!

शिष्य

हालार-रत्न प्रशांतमूर्ति पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरीश्वरजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.1998
वैशाख सुदी-5

कालधर्म
वि.सं.2039
फा.शुक्ला-4

दीक्षापर्याय 41 वर्ष

हालार की पवित्र भूमि **'मोटा मांढा'** गाँव में सद्धर्मोपासक पूंजाभाई की धर्मपत्नी मांकाबाई की कुक्षी से वि.सं. 1973 फाल्गुन शुक्ला 11 के दिन **पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.** का जन्म हुआ था। उनका जन्म नाम **'केशवजी'** रखा गया। धार्मिक परिवार होने से केशवजी को प्रारंभ से ही धर्म-संस्कार मिले। छोटे गाँव में व्यावहारिक शिक्षण की व्यवस्था न होने से अध्ययनार्थ बम्बई गए। कच्छी वीसा ओसवाल हाईस्कूल में व्यावहारिक शिक्षण के साथ थोड़ा बहुत धार्मिक शिक्षण भी दिया जाता।

वि. सं. 1996 का वर्ष ! पूज्य मुनिराज श्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्यश्री का लालबाग (मुंबई) में आगमन हुआ...और दैनिक प्रवचन-धारा प्रारंभ हुई। नमस्कार महामंत्र और मैत्री आदि विषयक वह प्रवचनधारा थी। सैकड़ों श्रोताजन इस प्रवचन माधुर्य का अमीपान कर रहे थे।

पूज्यश्री के प्रवचन सुनने के लिए बडे भाई माणेकभाई भी रोज आते थे। पूज्यश्री के प्रवचनों से वे अत्यंत ही प्रभावित हुए। भले ही वे संसारी थे, परंतु उन्होंने अपने हृदय-मंदिर में गुरु के स्थान पर पूज्य मुनि श्री भद्रंकर विजयजी की स्थापना कर दी।

पूज्यश्री के प्रति उनके दिल में अपूर्व आकर्षण पैदा हुआ। वे

श्रावकोचित आराधना में आगे बढ़ने लगे । माणेकभाई के छोटे भाई का नाम था केशवजी । हाईस्कूल में नौवीं तक अभ्यास करने के बाद केशवजी ने प्रामाणिकता पूर्वक घी का व्यवसाय प्रारंभ किया ।

उस समय भारत भर में **'आजादी'** की हवा थी । अनेक नवयुवक आजादी के इस आंदोलन में कूद पड़े थे । इस आंदोलन में केशवजी भी जुड़े ।

एक बार केशवजी यवतमाल से मुंबई आये हुए थे । ज्येष्ठ बंधु माणेकभाई ने केशवजी को कहा, ``केशु ! रविवार को लालबाग में **पू. मु. श्री भद्रंकर विजयजी म.** का प्रवचन है, तू जरूर सुनना, तुझे खूब मजा आएगा ।''

बस, ज्येष्ठबंधु की प्रेरणा पाकर रविवार के दिन केशवजी ने पूज्यश्री का एक ही प्रवचन सुना और उसके अन्तर्मन में जादुई परिवर्तन आ गया ।

अब तक जो देश को आजादी दिलाने के विचार थे, वे अब 'आत्मा को सच्ची आजादी दिलाने में बदल गए ।'

केशवजी के दिल में पूज्यश्री के प्रति अपूर्व आकर्षण जगा...और उसने अपना संपूर्ण जीवन पूज्यश्री के चरणकमलों में समर्पित करने का निश्चय कर लिया ।

हालार की प्रजा जैन धर्म से लगभग अज्ञात थी तो दीक्षा की तो बात ही क्या करें ?

केशवजी का मन दीक्षा के लिए लालायित हो उठा । ज्येष्ठ बंधु माणेकभाई को छोड़ अन्य किसी की ओर से कोई प्रोत्साहन नहीं था ।

केशवजी ने पूज्यश्री को अपना अभिप्राय बतलाया...पूज्यश्री ने योग्य मार्गदर्शन दिया ।

वि. सं. 1997 में पूज्यश्री का चातुर्मास अँधेरी में हुआ, उस चातुर्मास में भाणजीभाई शापरिया की ओर से उपधान तप का आयोजन हुआ, उस उपधान तप की आराधना में केशवजीभाई भी जुड़े । उन्होंने अप्रमत्त भाव से उपधान तप की आराधना की । केशवजीभाई की वैराग्य भावना दिन-प्रतिदिन दृढ़ होती गई ।

केशवजीभाई दीक्षा के लिए तैयार थे, परंतु ज्येष्ठ बंधु माणेकभाई को छोड़ अन्य किसी की ओर से दीक्षा के लिए सहयोग नहीं था...आखिर

माता-पिता की अनुमति पाने के लिए केशवजीभाई ने छह विगई का त्याग किया । यह त्याग छह मास तक चला, आखिर सहमति मिली और महाराष्ट्र के वणी गाँव में पूज्यश्री के वरद हस्तों से सं. 1998 वैशाख सुदी 5 के शुभ दिन केशवजीभाई की धूमधाम के साथ भागवती दीक्षा संपन्न हुई, उनके साथ बिसलपुर (राज.) के नवयुवक प्रेमचंद की भी दीक्षा हुई । प्रेमचंद का नाम **मुनिश्री प्रद्योतनविजयजी** रखा गया और वे पूज्यश्री के शिष्यरत्न परम तपस्वी **मु. श्री चरणविजयजी म.** के शिष्य घोषित किए गए । केशवजीभाई का नाम मुनिश्री कुंदकुंद विजयजी रखा गया और वे पूज्य **मुनिश्री भद्रंकरविजयजी के** शिष्य घोषित किए गए ।

संयम-स्वीकार के बाद वे निरंतर एकाशना करते थे । स्वाध्याय-रस, गुरुभक्ति, आत्मलक्ष्यी वृत्ति-प्रवृत्ति तथा अपूर्व ज्ञान-प्रेम आदि गुणों के कारण उनकी साधना दिन-प्रतिदिन विकसित होती गई ।

धीरे-धीरे वह स्वोपकार की साधना परोपकार की ओर मुड़ी । उन्होंने अपने संसर्ग-संपर्क में आनेवाली अनेक आत्माओं को धर्म-मार्ग में जोड़ा ।

सरल व सुबोध गुजराती भाषा में साहित्य का सृजन कर उन्होंने हालार की प्रजा पर जो उपकार किया है, उसका तो हिसाब लगाना कठिन है । जीवन के अंतिम वर्ष तक वे साहित्य-सृजन में जुड़े रहे । उन्होंने अब तक छोटी-मोटी 50 से भी अधिक पुस्तकों की रचना की थी ।

वि. सं. 2005 में उनकी साहित्य-यात्रा का मंगल प्रारंभ हुआ था । **'जैन मार्गनी पिछान'** से प्रारंभ हुई उनकी साहित्य-सृजन यात्रा अबाध गति से चलती रही जो जीवन के अंतिम वर्ष तक बनी रही । लोकभोग्य-सुंदर शैली में बाल जीवोपयोगी अनेक पुस्तकों के सृजन के साथ-साथ **नमस्कार चिंतामणि, 'भवोभवनुं भातु'** आदि अनेक आध्यात्मिक ग्रंथों का सृजन किया ।

जीवदया-प्रेमी

उन दिनों में पूज्यश्री की पिंडवाड़ा में स्थिरता थी ।
वैशाख महीने की भयंकर गर्मी के दिन थे ।

रात्रि में ट्रक की टक्कर लगने से एकदम घायल होकर एक कुत्ता करुण चीत्कार कर रहा था । कुत्ते की करुण चीत्कार उपाश्रय तक सुनाई दे रही थी ।

पूज्यश्री के कान तक ये स्वर पहुँचे...और दयालु पूज्यश्री उस कुत्ते के पास आए । श्रावकों को उचित सूचना कर उस कुत्ते की समाधि के लिए स्वयं नवकार सुनाने लगे ।

कुत्ते को असह्य पीड़ा थी...उसके योग्य उपचार आदि का प्रबंध कराया । आखिर कुछ समय बाद उस कुत्ते ने अपने प्राण छोड़ दिए ।

पशुओं के प्रति भी पूज्यश्री के दिल में अपूर्व दया थी ।

उनकी वाणी में अमृतसा माधुर्य था । उनके पास अद्‌भुत प्रवचन-शक्ति थी । प्रवचन के माध्यम से उन्होंने अनेक आत्माओं को धर्ममार्ग में जोड़ा । वे जहाँ भी जाते अपने चारित्र-धर्म की अमिट छाप छोड़कर आते ।

◆ वि.सं. 2036 में **प.पू. अध्यात्मयोगी पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** के कालधर्म के बाद उनकी आंशिक पूर्ति करनेवाले **पू.मु. श्री कुंदकुंदविजयजी** थे । उनकी निःस्पृहता भी गजब की थी ।

पूज्य आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी के सान्निध्य में हालार देश में शासन-प्रभावना के अनेक कार्यक्रम संपन्न हुए थे । हालार में अनेक गाँवों में जिनमंदिरों के निर्माण आदि में पू. आचार्य भगवंत की ही मुख्य प्रेरणा थी ।

◆ पूज्यश्री ने अपनी दीक्षा के बाद अपने परिवार का भी उद्धार किया । जिनकी प्रेरणा से पूज्यश्री को भागवती दीक्षा प्राप्त हुई थी, ऐसे ज्येष्ठ बंधु माणेकभाई और उनके सुपुत्र केशु के भी उद्धार की भावना उनके दिल में सतत रमती रहती थी ।

दो वर्ष की उम्र से ही जिस बालक ने कभी रात्रिभोजन नहीं किया, जिसके पेट में कभी अभक्ष्य वस्तु नहीं गई, ऐसे अपने एकाकी पुत्र केशु को गुरुचरणों में समर्पित कर दिया ।

पूज्य पंन्यासजी भगवंत की अमी नजर केशु पर पड़ी...और उसके फलस्वरूप वै. सु. 7 वि. सं. 2011 के शुभ दिन लोणावला में पूज्य अध्यात्मयोगी गुरुदेव के वरदहस्तों से केशु की दीक्षा संपन्न हुई और उन्हें

पू. मु. श्री कुंदकुंदविजयजी म. के शिष्य रूप में **मुनि श्री वज्रसेन विजयजी** के नाम से घोषित किया गया ।

अध्यात्मयोगी पूज्य गुरुदेवश्री के संपर्क से माणेकभाई की धर्म-भावना बढ़ती गई और एक पुत्रप्राप्ति के बाद वि. सं. 2001 में भर यौवन वय में माणेकभाई ने चतुर्थव्रत स्वीकार कर लिया । उसके बाद धर्मपत्नी जीवीबेन की अत्यंत समाधिपूर्वक मृत्यु हो गई ।

जीवीबेन के समाधिपूर्ण स्वर्गवास निमित्त मोटामांढा में परमात्म भक्ति महोत्सव का आयोजन किया गया, इस पावन प्रसंग पर **पू. मु. श्री कुंदकुंदविजयजी म.** का मोटामांढा में आगमन हुआ । वै. सु. 1 के शुभ दिन पूज्यश्री की प्रेरणा से माणेकभाई ने दीक्षा लेने का संकल्प किया ।

वै. सु. 2 को वर्षीदान दिया और वै. सु. 3 के मंगल मुहूर्त में उनकी भागवती दीक्षा हो गई, उनका नामाभिधान किया गया-**मुनि श्री महासेन विजयजी !** वे अध्यात्मयोगी पूज्य गुरुदेवश्री के शिष्य बने । इस प्रकार स्वयं को दीक्षा दिलाने वाले ज्येष्ठ बंधु माणेकभाई को दीक्षा प्रदान कर अपने परिवार का भी उद्धार किया ।

वि. सं. 2013 में पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य श्री की तारक निश्रा में शंखेश्वर महातीर्थ में बेड़ा निवासी हिंमतभाई की ओर से उपधान तप का भव्य आयोजन हुआ...इस आयोजन में 550 आराधकों ने भाग लिया । इस उपधान में अनेक मुमुक्षु आत्माएँ भी थीं । उपधान तप के प्रभाव से अनेक के हृदय में संयम धर्म का बीजारोपण हुआ और अनेक के हृदय में **'मुमुक्षुता'** का जन्म हुआ ।

भायखला-मुंबई (मूल हालारी) निवासी वेलजीभाई भी उस उपधान तप में जुड़े थे ।

एक दिन पूज्यश्री **(पू. कुंदकुंदविजयजी म.)** ने वेलजीभाई को कहा, **''आज रात्रि में मैंने एक स्वप्न देखा और उसमें तुम्हें साधुवेष में व्याख्यान देते हुए देखा ।''**

इस बात को सुनकर वेलजीभाई खुश हो गए और बोले, **''साहेबजी ! आपने मुझे साधुवेष में देखा, आपकी यह भावना शीघ्र साकार बने ।''**

इस स्वप्न के बाद वेलजीभाई की धर्मभावना बढ़ती ही गई...और

आखिर पूज्य पंन्यासजी भगवंत के कालधर्म के एक दिन पहले वै. सु. 13, वि. सं. 2036 के शुभ दिन पाटण में वेलजीभाई की भागवती दीक्षा संपन्न हुई और वे पूज्यश्री के शिष्य **मुनि श्री वीरसेनविजयजी** बने ।

अद्‌भुत ज्ञान मस्ती

पूज्यश्री को स्वाध्याय और लेखन में अपूर्व रस था ।

सं. 2019 की बात है ।

पूज्यश्री का चातुर्मास अपने पूज्य गुरुदेवश्री के साथ उनकी जन्मभूमि मोटामांढा (हालार) में था ।

उस समय पूज्य **मुनिश्री कुंदकुंदविजयजी म.** प्रतिदिन दोपहर को 1.30 से 3 बजे तक मंदिर में जाकर जप-साधना करते थे ।

एक दिन की बात है, वे जाप करके उपाश्रय में आकर अपनी लेखन-प्रवृत्ति में तल्लीन बन गए ।

अचानक पूज्य गुरुदेवश्री ने उन्हें पूछा, ``**कुंदकुंदविजयजी** ! दोपहर की गोचरी वापर ली ?''

स्वाध्याय, लेखन में मग्न, पूज्यश्री ने जवाब दिया, ``हाँ ! जी ।''

पास में ही बैठे **पू. मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** ने यह जवाब सुनकर पूज्य गुरुदेवश्री को कहा, **``आज कुंदकुंदविजयजी ने गोचरी वापरी नहीं है ।''**

यह सुनकर पूज्यश्री विचार में पड़ गए– **``अरे ! मैंने गोचरी वापरी या नहीं ?''**

उनकी इस ज्ञान-मस्ती को देखकर पूज्य गुरुदेवश्री ने कहा, **``कमलसेन ! देख, तेरे गुरुजी की ज्ञानमस्ती ! इस मस्ती में वे आहार लेना भी भूल गए ।''**

सचमुच पूज्यश्री की ज्ञानमग्नता अद्‌भुत कोटि की थी !

पद-प्रदान

卐 वि. सं. 2036 में **पूज्य मुनिराजश्री कुंदकुंदविजयजी म. सा.** का चातुर्मास पाटण में हुआ । पूज्य मुनिश्री भी अपने पूज्य गुरुदेव की तरह

निःस्पृह मूर्ति थे । पद और प्रतिष्ठा के व्यामोह से सर्वथा मुक्त थे...फिर भी पूज्यपाद गच्छाधिपतिश्रीजी की आज्ञानुसार **पू.आ.श्री. कनकचन्द्रसूरिजी म.** की निश्रा में पूज्यश्री ने भगवती सूत्र के योगोद्वहन प्रारंभ किये । तप धर्म के लिए सानुकूल शारीरिक परिस्थिति नहीं होने पर भी पूज्यों की कृपा से उन्होंने भगवती सूत्र के योगोद्वहन पूर्ण किये...और उन्हें गणि व पंन्यास पद से विभूषित किया गया ।

जीव दया प्रेमी

उस समय गुजरात के मुख्य-मुख्य नगरों में सुअरों को छोड़ा जा रहा था और उनकी उत्पत्ति बढ़ाकर उनकी क्रूरतम हिंसा का प्रचार हो रहा था ।

इस घटना को सुनकर पूज्यश्री का हृदय एकदम काँप उठा...उनके रोम-रोम में इस भयंकर पापलीला के विरुद्ध विद्रोह की आग पैदा हुई ! इस सरकारी योजना को निष्फल बनाने के लिए उन्होंने अपने प्रयत्न प्रारंभ किए । पाटण में विविध धर्मीजनों के प्रतिनिधियों की मीटिंग हुई । कुछ सक्रिय कार्य करने के ध्येय से आखिर एक समिति गठित की गई, जिसका नाम रखा गया, **'भूंड बचाव समिति ।'** इस समिति के अधीन सुअरों की रक्षा का आयोजन किया गया ।

शहर में सुअरों को पकड़कर पाटण शहर के बाहर उनका रक्षण किया गया और उनके भरणपोषण की भी व्यवस्था की गई ।

इस प्रकार पूज्यश्री की प्रेरणा से पाटण शहर में हजारों सुअरों को जीवनदान मिला ।

अध्यात्म–प्रेमी

◆ पूज्य आचार्यप्रवरश्री अध्यात्मप्रेमी थे । इहलौकिक सुख-सामग्री के प्रति वे निःस्पृह थे । उनके हृदय में आत्मकल्याण की पिपासा थी । इसी के फलस्वरूप उनके प्रवचनों में भी अध्यात्म की सुवास देखने को मिलती थी ।

पाटण चातुर्मास दरम्यान उन्होंने अधिकांश लोगों को **'चेतन ज्ञान अजुवालीए'** सज्झाय कंठस्थ करवाई थी, उसके गर्भित रहस्यों को प्रवचन के माध्यम से समझाते थे, तब श्रोताजन परम आह्लाद का अनुभव करते थे ।

अध्यात्मयोगी स्व. पूज्यपाद पंन्यासजी म.सा. के वे `कृपा-पात्र' शिष्य थे । अपने गुरुदेव के प्रति उनके हृदय में अपूर्व समर्पण था ।

वे चारित्रपालन में अत्यंत ही कड़क थे । विजातीय संपर्क से वे सदैव दूर रहते थे ।

निःस्पृहता, निःस्वार्थता, उदारता, क्षमा, मैत्री आदि भावना युक्त जीवन, सदैव सुप्रसन्न मुखमुद्रा, लघुता आदि गुण तो उन्हें 'गुरु कृपा' के बल से सहज प्राप्त हुए थे ।

पूज्यश्री की जन्मभूमि हालार थी । हालार की प्रजा प्रकृति से सरल भद्रिक और श्रमजीवी है...जीवदया आदि मानवीय गुणों के संस्कार होते हुए भी धर्म के रहस्यों से अनभिज्ञ थी ।

पूज्यश्री के हृदय में **'हालारी-प्रजा'** के उद्धार की भावना सतत रमती रहती थी । उनका विहार क्षेत्र राजस्थान हो या गुजरात, हालार की प्रजा के धर्मबोध का उनका मिशन सर्वत्र चालू ही रहता था ।

हालार से दूर क्षेत्र में विचरण होने पर भी **'हालारी प्रजा का उद्धार'** उनका जीवन-लक्ष्य था ।

उन्होंने अत्यंत ही सरल व सुबोध शैली में अनेक पुस्तकों का आलेखन किया ।

हालार की प्रजा अफ्रीका व लंदन में भी है । उनके भी उद्धार के लिए उन्होंने अंग्रेजी भाषा में जैन धर्म के साहित्य का सर्जन कराया ।

आचार्य पदवी

पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म. की आज्ञा से वि.सं. 2038 के शुभदिन अहमदाबाद में बडे ही धूमधाम के साथ उनकी आचार्य पदवी हुई ।

जिनशासन के महान् प्रभावक तृतीय पद आचार्यपद पर आरूढ़ होने के बाद हालारवासियों के उद्धार के लिए **पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरीश्वरजी म.सा.** ने अहमदाबाद से जामनगर की ओर अपनी विहार यात्रा प्रारंभ की ।

विहार यात्रा के दरम्यान गाँव-गाँव में जिनशासन की अद्भुत प्रभावना करते हुए पूज्य आचार्य भगवंत ने हालार की धरती पर कदम रखा । हालार के 400 वर्ष के इतिहास में हालारी प्रजा के ये प्रथम जैनाचार्य थे । लोगों ने अति उत्साह-उमंग के साथ पूज्यश्री का भव्य स्वागत किया...उस समय

किसे पता था कि मध्याह्न में चमकनेवाला यह सूरज अचानक ही अस्त हो जाएगा ।

हालार के गाँव-गाँव में पूज्यश्री का पदार्पण हुआ । हजारों की संख्या में जैन-जैनेतरों ने पूज्यश्री का अद्‌भुत स्वागत किया ।

क्रमशः पूज्यश्री जामखंभालिया पधारे ।

वि. सं. 2039 महावदी 4 के शुभदिन से महामंगलकारी उपधान तप का शुभारंभ हुआ । उपधान तप के आयोजक थे-देवचंद शामजी जाखरिया ।

इस उपधान तप में 365 आराधकों ने भाग लिया । खूब उत्साह के साथ दिन व्यतीत होने लगे । पूज्यश्री के अद्‌भुत प्रेरणादायी प्रवचनों से लोगों में अपूर्व धर्म जागृति आई ।

उपधान तप के 13वें दिन अचानक रंग में भंग पड़ा और फागुण सुद 1 के दिन पूज्यश्री का स्वास्थ्य एकदम खराब हो गया । उल्टी, पेट में दर्द तथा मात्रु-स्थंडिल बंद हो गया । समस्त संघ चिंतातुर बना...परंतु पूज्यश्री तो एकदम स्वस्थ थे । नवकार की साधना में मग्न थे मानों मृत्यु को मंगलकारी महोत्सव में बदलने की तैयारी कर रहे थे । फागुण सुदी 2 के दिन बाह्य उपचार करते हुए डॉक्टरों को ख्याल आ गया कि दोनों किडनियाँ फेल Fail हो गई हैं ।

डॉक्टरों को आश्चर्य था कि ऐसी स्थिति में भी पूज्यश्री कितने स्वस्थ हैं !

पूज्यश्री को भी अब ख्याल आ गया था कि अब यह देह टिकने वाली नहीं है, वे भीतर से खूब जागरूक हो गए ।

उस दिन रात्रि में 8 से 10 बजे तक पूज्यश्री की सूचना से नवकार की धुन चली...फिर थोड़ी देर बाद पूज्यश्री को नींद आ गई !

वि. सं. 2039 फागुण सुद 3 को सुबह प्रतिक्रमण...पड़िलेहन के बाद श्वास में कुछ राहत दिखाई दी । ज्येष्ठ बंधु **पू.मु. श्री महासेनविजयजी म., पू. मु. श्री हेमप्रभविजयजी म.,** हिंमतभाई बेड़ावाले, शशिकांतभाई आदि पूज्यश्री को समाधि स्तोत्र आदि सुनाकर जागरूक कर रहे थे ।

पूज्यश्री की ऐसी विकट परिस्थिति में भक्तजन पूज्यश्री को तत्काल ट्रीटमेंट के लिए वायुयान आदि द्वारा अहमदाबाद या बंबई ले

जाने के लिए विचार-विमर्श कर तैयारी कर रहे थे...इस हेतु सारी दौड़धूप चल रही थी । अचानक पूज्यश्री को इस बात का ख्याल आ गया ।

तत्काल कागज-पेन हाथ में लेकर पूज्यश्री ने एक चिट्ठी लिखकर अपने ज्येष्ठ बंधु के हाथ में दे दी ।

उसमें पूज्यश्री ने लिखा था-

``इस बीमारी में मैं कदाचित् बेहोश हो जाऊँ तो भी मेरे चारित्र धर्म को बाधा पहुँचे ऐसी कोई भी प्रवृत्ति मेरे शरीर के लिए न करें ।''

पूज्यश्री की इस अंतरंग जागृति व दृढ़ भावना को देख अन्य सब प्रवृत्तियाँ स्थगित कर दी गईं ।

उपर्युक्त शब्द पूज्यश्री की उच्चतम आत्मदशा के द्योतक हैं । देह के ममत्व के विसर्जन बिना ये शब्द निकलना संभव नहीं हैं । जीवन में की गई साधना का यही तो विपाक है । सचमुच वे देहभाव से मुक्त हो चुके थे ।

प्रथम फागुण सुद 4 का सूर्योदय हुआ ।

पूज्यश्री की वेदना बढ़ने लगी । शरीर अपना धर्म बजा रहा था, उस समय भी पूज्यश्री अपना आत्म-धर्म बजा रहे थे । शरीर रोगग्रस्त था, परंतु मुख पर वही प्रसन्नता थी ।

उन्होंने पास में बैठे साधु-साध्वीजी को प्रेरणा दी ।

'तुम कष्ट सहन करके भी हालार की प्रजा को धर्ममार्ग में जोड़ना ।'

कैसी परोपकार की भावना !

इस बीच **पू. महासेनविजयजी** ने पूछा, **``समाधि तो बराबर है न ? रोग की पीड़ा से समाधि में भंग तो नहीं पड़ रहा है न ?''**

उस समय गंभीर स्वर में पूज्यश्री ने कहा, ``मेरे परदादा गुरुदेव **पू. आचार्यदेव प्रेमसूरीश्वरजी म.** ने वात्सल्य देकर मुझे प्रेम से नहलाया ।''

``मेरे दादा गुरुदेव पू. आचार्यदेव रामचन्द्रसूरीश्वरजी म. ने मेरी वैराग्य भावना दृढ़ की ।''

``मेरे असीम उपकारी परम पूज्य गुरुदेव पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. ने चारित्र प्रदान कर मुझ में मैत्री भाव के अमृत का सिंचन किया ।''

''अहो ! मैं कितना भाग्यशाली ! अब मुझे किस बात की कमी ! यह शरीर छूट जाय तो भी मुझे किस बात की फिकर है !''

दर्द बढ़ रहा था...परंतु पूज्यश्री अत्यंत सावधान थे ।

प्रातः 8.10 से ही नवकार की धुन चल रही थी । बीच में पूज्यश्री ने साधु-साध्वीजी व मुख्य श्रावकों को योग्य हितशिक्षा भी दी । 9.45 बजे पूज्यश्री ने **पू. महासेनविजयजी** को बुलाकर सभी महात्माओं को **'मिच्छामि दुक्कडम्'** दिया ।

पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरिजी म. का अंतिम समय नजदीक आ रहा था ।

उपधान के लाभार्थी दांता गांव के थे, उनकी भावना थी कि पूज्य आचार्य भगवंत का अग्नि संस्कार हमारे गांव में हो ।

जहां उपधान चालू था, उस जामखंभालिया संघ की इच्छा थी कि पूज्य आचार्यश्री का अग्नि संस्कार यहीं होगा । मोटो मांढा संघ की इच्छा थी कि पूज्यश्री का अग्नि संस्कार उनकी जन्मभूमि मोटा मांढा में हो ।

इस विवाद का निर्णय हल कैसे हो ? सभी चिंतित थे ।

पू.महासेन वि.म. ने **मु. हेमप्रभविजयजी म.** को कहा, `हेमप्रभ ! तू अपने गुरु को पूछ ले कि आपके अग्नि संस्कार के लिए भिन्न–भिन्न मत है । अतः आप ही तय कर, कह दो कि अग्नि संस्कार कहाँ किया जाय ?'

मु. हेमप्रभविजयजी म.सा. ने कहा, `ऐसी बात कैसे पूछी जाय ?' **महासेन वि.** ने कहा, `तुम्हारे गुरू म. को मैं अच्छी तरह से पहिचानता हूँ । उन्हें कुछ भी बूरा नही लगेगा ।'

इस प्रश्न का भी समाधान हो जाएगा ।

मु.श्री हेमप्रभविजयजी म. ने खूब हिम्मत करके आखिर पूछ ही लिया, `आपके अग्नि संस्कार के लिए विवाद चल रहा है तो आपकी क्या भावना हैं ?'

पूज्य आचार्य म. ने सहजता से कहा, `जामखंभालिया का संघ जो कहे, वैसा करना ।'

बडी समस्या का समाधान हो गया ।

अंतिम समय में भी मौत का किसी प्रकार का भय नहीं । यह पूज्यश्री की परम आत्म जागृति और निर्भयता का सूचक है ।' आखिर, जामखंभालिया संघ की भावना के अनुसार जामखंभालिया में ही उनका अग्नि संस्कार किया गया ।

घड़ी में 10 बजने की तैयारी थी ।

तभी पूज्यश्री को कुछ स्फुरणा हुई ।

ऐसी स्थिति में भी उन्होंने बैठने की हिम्मत की...वे पद्मासन में बैठ गए । ठीक सामने शंखेश्वर पार्श्वनाथ व पूज्य उपकारी गुरुदेव श्री के फोटो समक्ष अपनी दृष्टि स्थिर कर दी । वातावरण में सिर्फ नवकार मंत्र का गुंजन था ।

पूज्यश्री आत्म-ध्यान में लीन थे । भक्तजन नवकार की धुन लगा रहे थे । श्वास की गति बढ़ने लगी...परंतु उस श्वास के साथ नवकार के प्रति उनका विश्वास दृढ़ होने लगा ।

घड़ी का काँटा आगे बढ़ रहा था...और ठीक 10 बजकर 3 मिनट पर पूज्यश्री ने इस दुनिया से सदा के लिए विदाई ले ली ।

उनकी देह वहीं ढल गई और उनका आतम पंखी वीतराग दशा की अपूर्ण साधना को पूर्ण करने के लिए अनंत की यात्रा के लिए प्रस्थान कर गया ।

धन्य जीवन ! धन्य मृत्यु !! समता की साधना से जीवन को धन्य बनाया । समाधि की साधना से मृत्यु को धन्य बनाया ।

सहनशीलता की मूर्ति पू.मु.श्री कनकप्रभविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1999
जेठ सुदी-1

कालधर्म
वि.सं.2004

दीक्षापर्याय 5 वर्ष

वेरावल (सौराष्ट्र) की धन्यधरा पर वि.सं. 1942 में रामचन्द्रभाई के सुपुत्र **कल्याणजी भाई** अपनी प्रौढ़ उम्र में मुंबई में आयंबिलखाते में मुनीम की नौकरी करते थे ।

पारसमणि के संग से लोहा सोना बन जाता है, उसी प्रकार संत पुरुषों का समागम भी पापी व अधम आत्माओं को भी पावन और महान् बना देता है ।

कल्याणजीभाई को **पू.पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.** के साथ उनके गृहस्थ जीवन से ही परिचय था । धीरे-धीरे वह परिचय गाढ़ होता गया ।

भगवानदास भाई की भागवती दीक्षा के बाद कल्याणजीभाई का मन संयम की प्राप्ति के लिए पिपासु बना !

संयमग्रहण की उनकी यह भावना 57 वर्ष की उम्र में साकार बनी ।

वि.सं. 1999 जेठ सुदी-1 के शुभदिन कल्याणजीभाई ने **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के वरदहस्तों से भागवती-दीक्षा अंगीकार की और वे उन्हीं के शिष्य **मुनि श्री कनकप्रभविजयजी** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे गुरुभक्ति में जुट गए । वि.सं.2002

के आस पास जब पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म. विशिष्ट आराधना-साधना के लिए पाटण से 3 कि.मी. दूर बोरसर गाँव में रहे थे, तब उनकी सेवा में कनकप्रभविजयजी थे । वे प्रतिदिन पूज्यश्री के लिए पाटण जाकर गोचरी ले आते थे और स्वयं अट्ठम के पारणे अट्ठम की कठोर तपश्चर्या करते थे ।

कठोर-तप के साथ भी वे गुरुभक्ति खूब उत्साह से करते थे और उसे अपना सौभाग्य समझते थे ।

दीक्षा के अल्प पर्याय में ही उन्होंने अपने शरीर का कस निकाल दिया ।

वि.सं. 2004 में उनके पूरे शरीर में रसी हो गई । शरीर में से रसी निकालते समय उन्हें खूब पीड़ा होती परंतु उस पीड़ा को वे खूब समता, समाधिपूर्वक सहन करते थे ।

कोई आकर उनसे साता पूछते तो वे एक ही जवाब देते...**अवधू ! सदा मगन में रहना ।** वे शरीर से पर हो गए थे । आत्मानंद में वे सदैव मस्त रहते थे ।

अंतिम वर्ष में उन्हें संग्रहणी का रोग हो गया परंतु उस पीड़ा को भी खूब समतापूर्वक सहन किया । **मु.श्री कैलाशप्रभविजयजी** ने उनकी सेवा शुश्रूषा की । वि.सं. 2004 में जामनगर में चातुर्मास दरम्यान के दिन **पू.महाप्रभविजयजी म.** की निश्रा में उन्होंने अत्यंत समाधि के साथ अपना नश्वर देह छोड़ दिया और अपनी अपूर्ण साधना को पूर्ण करने के लिए परलोक के पथ पर प्रयाण कर गये ।

शिष्य

तपस्वीरत्न पूज्य मुनिराज श्री चंद्रयशविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं. 2000
जेठ सुदी-4

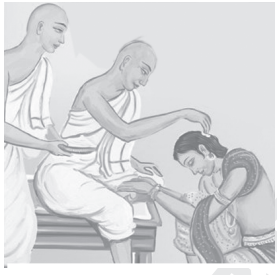

कालधर्म
वि.सं.2055
वैशाख वदी-13

दीक्षापर्याय 55 वर्ष

राजस्थान की धरती शूरवीरों की धरती कहलाती है । राजस्थान प्रांत के पाली जिले में अरावली पर्वत की तलहटी में आया बिसलपुर गाँव !

चार-चार विशाल-उत्तुंग जिनमंदिरों से सुशोभित इस छोटे से गाँव में प्रतापचंदजी की धर्मपत्नी भीखीबाई ने वि.सं. 1980 श्रावण सुदी पंचमी के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया चुन्नीलाल ।

माता-पिता के धार्मिक संस्कारों के फलस्वरूप बालक चुन्नीलाल को भी धार्मिक संस्कार सहज ही प्राप्त हो गए ।

पू.आ.श्री वल्लभसूरिजी म. के प्रवचन-श्रवण से चुन्नीलाल के अन्तर्मन में समाज-सुधार की मनोवृत्ति पैदा हुई थी । परंतु उसके बाद **पू.आ.श्री रामचन्द्रसूरिजी म.** के प्रवचन श्रवण के बाद **चुन्नीलाल** को आत्म-सुधार की भावना जागृत हुई ।

`राग-द्वेष के चंगुल में फँसी हुई अपनी आत्मा इस भीषण संसार में जहाँ-तहाँ भटक रही है । उस जंजाल में से सदा काल के लिए मुक्ति पाने के लिए रत्नत्रयी की आराधना-साधना को छोड़ अन्य कोई विकल्प नहीं है ।' **पूज्य आचार्य श्री रामचन्द्रसूरिजी म.** की हृदयस्पर्शी इस धर्मदेशना को सुनने के वाद **चुन्नीलाल** का मन संयमरत्न को पाने के लिए लालायित हो उठा ।

मुमुक्षु **चुन्नीलाल** ने जब अपने परिवारजनों के समक्ष अपने दिल की भावना प्रस्तुत की तो मानों परिवार में भूकंपसा आ गया ।

परिवारजन अपनी प्यारी संतान को जिनशासन के चरणों में समर्पित करने के लिए कत्तई तैयार नहीं थे– जबकि **चुन्नीलाल** का मन प्रव्रज्या स्वीकार के लिए अत्यंत ही उत्कंठित बना हुआ था ।

पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी के पास आकर **चुन्नीलालभाई** ने आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत का स्वीकार कर लिया ।

भागवती-दीक्षा के लिए **चुन्नीलालभाई** के दृढ मनोबल को देख आखिर माता-पिता का मन पिघल गया और उन्होंने दीक्षा के लिए अपनी सहमति दे दी ।

उस समय **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.** अमलनेर (महाराष्ट्र) की ओर विचरण कर रहे थे ।

सिरसाला (महाराष्ट्र) में संघ की ओर से आयोजित अष्टाह्निक-महोत्सव के बाद **पू. चरणविजयजी म.** के समाधिपूर्वक कालधर्म निमित्त **माणेकचंद पूंजाभाई** की ओर से महोत्सव का आयोजन किया गया ।

इसी महोत्सव दरम्यान जेठ सुदी-4 के शुभ दिन **चुन्नीलालभाई** की भागवती-दीक्षा निश्चित हुई । प्रातः **चुन्नीलालभाई** के वर्षीदान का वरघोड़ा निकला । वरघोड़े के बाद आम्रवन में सकल संघ इकट्ठा हुआ ।

माणेकचंदभाई ने सोने की गिन्नी से दीक्षार्थी का बहुमान किया तो दीक्षार्थी ने सोने की गिन्नी से गुरुदेव का गुरुपूजन किया । उसके बाद मुहूर्त की शुभवेला में मुमुक्षु की भागवती दीक्षाविधि संपन्न हुई । इस दीक्षा प्रसंग पर अमलनेर, कमलथरा, सिरपुर, मालेगाम, येवला, नासिक, संगमनेर, राजुर, बिसलपुर आदि से 500-600 लोग उपस्थित हुए थे ।

नूतन दीक्षित का नाम **मुनिश्री चंद्रयशविजयजी** रखा गया, जो **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी** के शिष्य बने ।

दीक्षा के बाद नूतन मुनिश्री का गुरु समर्पणभाव अजोड़ था, वे गुरुदेव की अपूर्व भक्ति करते थे । विहार में अपने गुरुदेव की समस्त उपधि अपने कंधों पर उठा लेते थे ।

अन्य महात्माओं की भी गोचरी-पानी द्वारा खूब भक्ति करते थे ।

गुरुभक्ति के प्रभाव से उनका तप का क्षयोपशम भी खिलने लगा ।

उन्होंने तत्कालीन महात्माओं में सर्व प्रथम बाद संलग्न 1008 आयंबिल किए थे, इस कारण उनका नाम `1008' पड गया था ।

पू.पंन्यासजी म. का संग हो और उसमें तपरुचि न जगे तो आश्चर्य ही कहलाए। **मु. श्री चंद्रयशविजयजी** को भी तप का अपूर्व प्रेम जग गया।

उन्होंने अपने जीवन में वर्धमान तप की 100 ओली तो की हैं, परंतु उन ओली दरम्यान संलग्न 1008 आयंबिल और 500 आयंबिल भी किए थे। उन्होंने 10 बार 16 उपवास, 3 बार मासक्षमण, एक बार 45 उपवास, नवकार मंत्र के 68 अक्षरों के पदानुसार छूटे-छूटे 68 उपवास, 40 अट्ठाइयाँ, 17 उपवास, 12 उपवास, 5 बार 10 उपवास, 5 वर्षी तप, छट्ठ के पारणे छट्ठ से वर्षी तप, 11 बार नवाणु यात्रा।

जीवन में किए गए छट्ठ, अट्ठम का तो कोई हिसाब नहीं है।

◆ पानी का वे घी की तरह उपयोग करते थे। कम पानी से ज्यादा कपड़ों का काप कैसे निकालना इस कला में वे निष्णात थे।

◆ गोचरी-पानी में कुछ भी अच्छी, अनुकूल वस्तु आई हो तो उससे दूसरे मुनियों की अवश्य भक्ति करते थे।

◆ उनका कंठ अत्यंत ही मधुर था। प्रतिक्रमण में वे स्तवन-सज्झाय बोलते तो श्रोतागण मुग्ध हो जाते थे।

◆ वे दिनभर स्वाध्याय-वाचन में लीन रहते थे।

◆ जीवन के अंतिम दिनों में उन्हें गैगरीन का रोग हो गया। पग कटवाने की नौबत आ गई थी।

इंजेक्शन-दवाई चालू थी-इस बीच थापे में इन्फेक्शन हो जाने से रसी हो गई परंतु उनके मुख पर किसी प्रकार की दीनता नहीं थी।

एक बार डॉ. ने घाव को फोडकर 1½ लीटर रसी बाहर निकाली, तब शांति हुई। भयंकर दुर्गंध आने पर भी **हेमप्रभविजयजी म.** खूब भक्ति से उनका ड्रेसिंग करते थे।

उसके बाद उसके ड्रेसिंग में भयंकर पीडा होती थी, परंतु वे लेश भी दीनता नहीं लाते थे।

अंतिम नौ मास तक **पू. हेमप्रभसूरिजी** एवं उनके शिष्यों ने खूब सेवा की थी। आराधना धाम (हालारतीर्थ) में वि.सं. 2050 वैशाख वदी-13 के दिन नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यंत ही समाधि के साथ भौतिक देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया।

धन्य हो उन तपस्वी महात्मा को।

9

शिष्य

मौन साधक पू.मु. श्री कैलाशप्रभविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2001
मार्गशीर्ष सुद-10

कालधर्म
वि.सं.2031
आसो वदी-12

दीक्षापर्याय 30 वर्ष

राजस्थान के पाली जिले में कोसेलाव की धन्य धरा पर श्रेष्ठिवर्य पूनमचंदभाई की धर्मपत्नी ने वि.सं. 1947 श्रावण सुदी-10 के शुभ दिन तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया छोटालाल भाई।

छोटालाल भाई गर्भ श्रीमंत थे। बचपन से ही धार्मिक संस्कार तो थे ही, परंतु दीक्षा हेतु परिवारजन सहज सहमत नहीं थे।

आखिर 54 वर्ष की प्रौढ उम्र में उनकी भावना साकार बनी।

वि.सं. 2001 मार्गशीर्ष शुक्ला-10 के शुभदिन मुंबई में भव्य समारोह के साथ उनकी भागवती-दीक्षा हुई। उनका विशाल कारोबार होने से उनके इस त्यागधर्म के समाचार Times of India दैनिक पेपर के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित हुए थे।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे स्वाध्याय-साधना में आकंठ डूब गए।

दीक्षा के प्रारंभिक दो वर्षों में उन्होंने संग्रहणी के दर्दी **पू.मु.श्री कनकप्रभविजयजी** की खूब सेवा-भक्ति और वैयावच्च की थी कि जिसके फलस्वरूप अंतिम समय तक उनकी सेवाभक्ति भी अच्छी हुई और उन्हें समाधि भी मिली।

कई बार चातुर्मास में वे प्रातः 4 से रात्रि 10 बजे तक संपूर्ण मौन रखते थे ।

एक बार जामनगर चातुर्मास में **पू. कुंदकुंदविजयजी म.** के साथ भेजा तो उनके इस मौनव्रत के कारण पूरे चार महीनों में उन्हें परस्पर बातचीत करने का मौका ही नहीं मिला, क्योंकि **पू.कुंदकुंदविजयजी म.** प्रातः 4 बजे उठते और रात को 10 बजे संथारा कर लेते थे ।

वर्षों तक उन्होंने एकासने का तप किया । अपने मौन व्रत के साथ वे घंटों तक स्वाध्याय और नवकार का जाप करते थे ।

– उनका स्वभाव अत्यंत ही शांत और सौम्य था ।

– जंघाबल क्षीण हो जोने पर पूज्य गुरुदेव की आज्ञा से लगभग 5 वर्ष तक उनकी स्थिरता लुणावा (राज.) में रही थी । उस स्थिरता दरम्यान **मु.श्री जयंतभद्रविजयजी म.** आदि ने उनकी खूब सेवाभक्ति की थी ।

– जीवन के अंतिम 10 दिनों में बोलना भी लगभग बंद हो गया था परंतु उनकी समाधि अद्भुत थी । किसी भी प्रकार की दीनता न थी । शक्य आराधना व उपचार चालू ही थे, उनके सांसारिक कुटुंबीजन भी वहाँ 8 दिन रहे थे । उनकी आत्मसमाधि के लिए **पू. प्रद्योतनविजयजी म.** की प्रेरणा से संघ में 100 आयंबिल एवं सामुदायिक नवकार जाप भी हुए थे ।

(मारवाड़ी) आसो वदी-12 वि.सं. 2031 की रात्रि में 9.30 बजे 84 वर्ष की उम्र में उनका 31 वर्ष तक संयम धर्म का पालन कर अत्यंत ही समाधिपूर्वक कालधर्म हो गया ।

दूसरे दिन उनकी भव्य पालखी निकली ।
निर्मल संयम धर्म के साधक महात्मा को
सादर-सविनय वंदना...

शिष्य

स्वाध्यायमग्न पू. मुनि श्री कल्याणप्रभविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2001
मार्गशीर्ष सुद-10

कालधर्म
वि.सं.2031
पौष वदी-5

दीक्षा पर्याय 30 वर्ष

अहमदाबाद में वि.सं. 1965 द्वितीय श्रावण वदी-3 के शुभ दिन सुश्रावक केशवलाल की धर्मपत्नी समरथबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया **कांतिलाल** ।

अहमदाबाद धर्मनगरी होने से बचपन से ही धार्मिक संस्कार प्राप्त हुए । उन्होंने इंटर तक का व्यावहारिक शिक्षण भी प्राप्त किया था । उनके अग्रज चिमनभाई कडिया जैनसंघ में अग्रणी थे । उन्हें राजनीति का भी शौक था । वे लग्नग्रंथि से जुड़े और उन्हें दो पुत्र भी हुए ।

पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म. के समागम से उनके अन्तर्मन में वैराग्यभाव का बीजारोपण हुआ । इसके फलस्वरूप वि.सं. 2001 में सुविशाल गच्छाधिपति **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.,** परम शासन-प्रभावक **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** आदि के वरद हस्तों से हठीसिंग की वाड़ी अहमदाबाद में कांतिभाई ने अपनी धर्मपत्नी के साथ भागवती दीक्षा अंगीकार की । कांतिभाई ने **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का शिष्यत्व प्राप्त किया और उनका नाम **'मुनिश्री कल्याणप्रभविजयजी म.सा.'** रखा गया । उनकी धर्मपत्नी पू. बापजी म. के समुदाय में दीक्षित हुई, उनका नाम **सा. श्री हिरण्यलताश्रीजी** रखा गया ।

दीक्षा के पूर्व उन्हें हार्ट की तकलीफ थी, डॉक्टरों की तो संपूर्ण आराम की सलाह थी, परंतु उनके अन्तर्मन में आत्मा के भाव-आरोग्य को

प्राप्त करने की उत्कंठा थी, जिसके फलस्वरूप वे उल्लासपूर्वक तप-त्याग, ज्ञान-ध्यान, विनय-वैयावच्च की साधना में आकंठ डूब गए। वे सिंहवृत्ति से स्वीकृत संयम के पालन में भी सिंहवृत्ति बताने लगे।

उनके आत्मविकास में **'वर्धमान तप'** का भी बहुत बड़ा साथ रहा ! दीक्षा के पहले ही वर्ष में जब उन्हें हार्ट की तकलीफ हुई, तब उन्होंने सोचा, **'इस शरीर का कोई भरोसा नहीं है, मृत्यु कभी भी आ सकती है, तो क्यों न इस मानवशरीर के साधन से आराधना कर लूँ !'** इस प्रकार विचार कर उन्होंने वर्धमान तप के लिए अपने गुरुदेव से अनुमति माँगी। पूज्य गुरुदेव ने उनकी भावना का समर्थन करते हुए आशीर्वाद पूर्वक प्रोत्साहित किया। इसी के फलस्वरूप पूज्य पंन्यासजी महाराज की परम करुणा और आत्मार्थी जीवों को तप-त्याग व संयम में स्थिर करनेवाली उनकी वात्सल्य भरी दृष्टि के प्रभाव से वे वर्धमान तप में आगे बढ़ते ही गए।

तप के साथ में उन्हें स्वाध्याय में भी काफी रुचि थी, संस्कृत व प्राकृत भाषा पर तो उनका प्रभुत्व था ही, उसके साथ हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी व बंगाली भाषा भी उन्होंने सीखी। वे इन भाषाओं का साहित्य अच्छी तरह से पढ़ सकते थे।

60 वर्ष की उम्र में उन्हें **ज्ञानसार** कंठस्थ करने का मनोरथ हुआ। अपने संकल्प बल से उन्होंने **ज्ञानसार** कंठस्थ तो किया ही, उसके साथ रात्रि में उसका स्वाध्याय व अनुप्रेक्षा भी करते थे।

वर्धमान तप की चालू ओली में उन्हें शत्रुंजय गिरिराज की 99 यात्रा करने का मनोरथ हुआ, उस समय उनका शरीर खूब कमजोर था फिर भी उन्होंने दृढ़ संकल्प के बल से 99 यात्राएँ पूर्ण कीं।

उनके स्वभाव में तत्त्वरुचि थी, अतः कहीं से भी कुछ भी सारभूत तत्त्व मिले तो वे उसे ग्रहण कर लेते थे। वय व पर्याय में छोटे के पास से भी सारभूत तत्त्व ग्रहण करने मे उन्हें संकोच नहीं होता था। वे तात्त्विक बातों को अपनी डायरी में नोट करते थे और समय मिलने पर उस पर चिंतन करते रहते थे।

अन्य मुनियों को संयममार्ग व पठन-पाठन में सहयोग देने में वे सदैव तत्पर रहते थे। किसी को अभ्यास कराने में उन्हें कभी कंटाला नहीं आता था।

दीक्षा के प्रारंभ काल में **पूज्य पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.** से उन्होंने आत्महितकर पंचसूत्र का अध्ययन किया था, वे पंच सूत्र के पदार्थों को हृदयस्थ करने में सदैव प्रयत्नशील रहते थे । उनके जीवन में इस ग्रंथ का गहरा प्रभाव था ।

संयम के अभिलाषी मुमुक्षु आत्माओं के लिए उन्होंने धर्मबिंदु ग्रंथ के पाँचवें अध्ययन के साधुचर्या के पदार्थों का सुंदर संकलन तैयार किया था, उन्होंने वे सूत्र कंठस्थ करने के साथ हृदयस्थ भी किए थे ।

गृहस्थ आराधकों को वे आवश्यक सूत्रों के साथ अमृतवेल की सज्झाय के पदार्थ समझाते थे और उन्हें वह सज्झाय कंठस्थ करने व नित्यपाठ करने की प्रेरणा करते थे । वे स्वयं इस सज्झाय के शब्दों को मंत्र तुल्य मानकर इनका नित्य पाठ करते थे ।

पूज्य पंन्यासजी म. की निश्रा में जब-जब भी बीस दिन के एकासने पूर्वक लाख नवकार जाप का अनुष्ठान होता, तब उस अनुष्ठान में वे खूब सक्रिय रहते थे । उनकी स्वयं की नवकार की साधना थी, उसमें विशेष प्रगति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे ।

प्रभु की आज्ञा का पालन सर्वश्रेष्ठ योग हैं-यह मानकर जिनाज्ञा-पालन में वे सतत प्रयत्नशील रहते थे ।

'ध्यान शतक' आदि ग्रंथों के आधार पर उन्होंने जिनाज्ञा संबंधी मननीय लेख भी तैयार किए थे ।

उनके जीवन की सबसे बडी विशेषता थी कि वे कभी जल्दबाजी या प्रकृतिवश किसी से शाब्दिक अनबन हो जाती तो वे तुरंत क्षमायाचना करते । उन्हें अपनी भूल के स्वीकार में लेश भी संकोच नहीं था ।

पूज्यों के प्रति उनके हृदय में खूब आदर भाव था, 'विहार आदि के प्रसंग में भी वे ज्येष्ठ (वडिल) की निश्रा में रहना पसंद करते थे ।' पूज्यों की निश्रा व उनकी आज्ञापालन में ही अपना सच्चा हित हैं–ऐसी उनकी दृढ़ मान्यता थी ।

वे अपने गुरूदेव के हृदय में बसे हुए थे, इस कारण पू. गुरूदेवश्री ने उनका शिष्य भी बनाया, जिनका नाम था, **पू.मु.श्री जिनसेनविजयजी म.सा.** । वे अपने समय का पूर्ण सदुपयोग करते थे, कभी भी समय को waste नहीं करते थे ।

उनके हृदय में दो मनोरथ थे (1) वर्धमान तप पूर्ण करना और (2) गुरुगम से 45 आगमों का स्वाध्याय करना। दोनों मनोरथों को पूर्ण करने के लिए वे पूर्ण प्रयत्नशील थे। जब-जब भी आगम-वाचना के श्रवण का अवसर मिलता, वे उसे अवश्य सफल बनाते थे।

वर्धमान तप में आगे बढ़ते हुए उनके 99 ओलियाँ पूर्ण हो चुकी थीं। लुणावा (राज.) में पूज्य गुरुदेव की निश्रा में वि.सं. 2030 पौष सुदी-3 के शुभ दिन **पू.आ.श्री भद्रंकरसूरिजी म.सा. (पू. बापजी म.**के) **पू. मु. श्री प्रद्योतनवि. म., पू.मु. श्री कल्याणप्रभवि. म.,** तथा **पू.मु. श्री जयमंगलविजयजी म.** ने वर्धमान तप की 100 वीं ओली का शुभारंभ किया था।

पू. कल्याणप्रभविजयजी म. के 100 वीं ओली के 17 आयंबिल हो चूके थे। उस समय उन्हें खास कोई बीमारी नहीं थी, थोडा कफ का उपद्रव रहता था। 100 वीं ओली में दिन-प्रतिदिन अशक्ति बढ़ रही थी और खुराक घट रही थी, फिर भी उनका उत्साह बढ़ रहा था। उनके रोम में भी आयंबिल छोड़ने का विचार नहीं था।

जीवन के अंतिम दिन भी स्वाध्याय आदि में मग्न थे। शाम को 5 बजे तक पूर्ण स्वस्थ थे। फिर कफ की तकलीफ बढ़ गई।

डॉक्टर ने शारीरिक जाँच कर कहा, `अभी खास बीमारी नहीं है, परंतु कमजोरी ज्यादा है, हार्ट की पुरानी बीमारी हैं, अतः कब यह शरीर धोखा दे, कह नहीं सकते हैं।' उनका इलाज चालू हुआ। कफ की पीड़ा कम हुई।

आधे घंटे बाद पुनः कफ की पीड़ा चालू हुई। 6.15 बजे पूज्य पंन्यासजी म. आए। उन्होंने पूज्यश्री को वंदन किया और क्षमापना की।

पूज्य पंन्यासजी म. व अन्य महात्माओं ने नवकार सुनाना चालू किया। नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए पौष वदी-5 वि.सं. 2031, दि. 12-1-1974 शनिवार को शाम 6.45 बजे लुणावा (राज.) में अत्यंत समाधि के साथ उन्होंने अपना देह छोड़ दिया।

दूसरे दिन उनकी भव्य पालखी निकली।

शिष्य

प्रभु भक्ति रसिक पू.मुनि श्री धर्मरत्नविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2003
माघ कृष्णा-6

कालधर्म
वि.सं.2034
माघ वदी-14

दीक्षापर्याय 32 वर्ष

अध्यात्मयोगी पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. में एक ऐसा चम्बुकीय आकर्षण था कि योग्य मुमुक्षु आत्माएँ उनकी ओर स्वतः खींचकर चली आती थीं ।

वि.सं. 1952 श्रावण सुदी-11 के शुभ दिन भावनगर की धन्यधरा पर जन्मे नरशीभाई के सुपुत्र धरमचंदभाई को धार्मिक संस्कार तो बचपन से ही प्राप्त हुए थे ।

वि.स. 1985 में **श्रीमद् दान-प्रेम-रामचन्द्रसूरिजी म.** के प्रवचन-श्रवण व सत्संग से उनकी आत्मा में वैराग्य भाव का बीजारोपण हुआ ।

संयमप्राप्ति के लिए तीव्र अभिलाषा होने पर भी परिवार के मोह का बंधन उन्हें संसार में जकड़े हुए था ।

उस बंधन को तोड़ने के लिए प्रभुभक्ति को उन्होंने माध्यम बनाया ।

पूजा-भक्ति में पाँवों में घुंघरू बाँधकर वे लयलीन बनकर प्रभु की भक्ति करने लगे ।

'अबोलडा शाना लीधा छे राज,' `अष्टापद गिरियात्रा करणकुँ, **आज मारा प्रभुजी स्हामु जुओने'** इत्यादि भाववाही गीत गाते समय वे इतने तल्लीन हो जाते कि वे प्रभुभक्ति में अपना अस्तित्व ही भूल जाते । प्रभुभक्ति में जुड़े भक्तों की आँखें भी अश्रुभीनी बन जाती ।

वे प्रतिदिन शत्रुंजय महातीर्थ की भावयात्रा करते थे । नवकार महामंत्र व आयंबिल तप में खूब रुचि थी । वे वर्धमान तप में आगे बढ़ने लगे ।

प्रभुभक्ति के प्रभाव से आखिर चारित्र के अंतराय दूर हुए और वि.सं. 2003 माघ कृष्णा-6 के शुभदिन पालीताणा में उनकी भागवती दीक्षा-विधि संपन्न हुई और वे **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.** के शिष्य **मुनि श्री धर्मरत्नविजयजी** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद अपने 32 वर्ष के संयमपर्याय में उन्होंने खूब सुंदर आराधनाएँ कीं ।

गुरु-समर्पण भाव, गुर्वाज्ञा-पालन में तत्परता, वर्धमान तप, परमात्म-भक्ति आदि कई गुणों से उनका जीवन सुवासित था ।

उन्होंने वर्षों तक नियमित एकासने का तप किया । वर्धमान तप की 69 ओलियाँ भी कीं ।

जीवन के अंतिम 2 वर्षों में वे लकवाग्रस्त हो गए । उनकी रुग्णावस्था में वर्धमान तपोनिधि **पूं.पं. श्री हर्षविजयजी म., पू. खांतिविजयजी म., पू. कीर्तिकांतविजयजी म.** तथा **पू.जयंतभद्रविजयजी म.** ने उनकी खूब सेवा-भक्ति की ।

पू. गुरुदेवश्री की आज्ञा से वे डीसा-पाटण में रहे थे ।

वि.सं. 2034 माघ कृष्णा-14 की रात्रि में 11.45 बजे नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधि के साथ उन्होंने अपने भौतिक नश्वर देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण किया ।

धन्य हो प्रभुरसिक महात्मा को !

शिष्य

शासन प्रभावक पू.आ.श्रीमद् विजय जिनप्रभसूरि म.

दीक्षा
वि.सं.2006
वै.वद-6

कालधर्म
वि.सं.2045
चैत्र सुदी-5

दीक्षा पर्याय 39 वर्ष

जन्म नाम	:	जेसिंगभाई
दीक्षा दिन	:	वै. व. 6, संवत् 2006 जूनाडीसा
गुरुदेव का नाम	:	पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य
गणि पदवी दिन	:	मार्गशीर्ष सुद 7 सं. 2034 लुणावा
पंन्यास पदवी दिन	:	वैशाख सुद 6, सं. 2035 पिंडवाड़ा
आचार्य पदवी दिन	:	पौष वद 5, सं. 2043 नवाडीसा
स्वर्गवास	:	चैत्र सुद 5 सं. 2045 शंखेश्वर
संयम पर्याय	:	39 वर्ष
कुल उम्र	:	60 वर्ष

श्रीपंचासरपार्श्वेशं, देवं प्रणम्य भावतः ।
गुरुं जिनप्रभसूरिं, प्रहर्षेण स्तुवे नतः ।।
अभवत् तस्य पंन्यासो गुरुर्भद्रङ्करामिधः ।
पृथ्व्यां सर्वत्र प्रख्यातो नमस्कारे-परायणः ।।
उपधानविधौ सङ्घे, बद्धकक्षः सदासुखी ।
रविरिव प्रमाणे च, ब्रह्मनिष्ठो महारथी ।।
प्रव्रज्यासमयाद् येन वर्षषट्त्रिंशके गते ।
षट्त्रिंशक गुणोपेतं, प्राप्तमाचार्यकं पदं ।।

(शिवलालभाई)

(अर्थ : श्री पंचासरा पार्श्वनाथ को भावपूर्वक नमस्कार करके नम्रता-पूर्वक जिनप्रभसूरिजी गुरुदेव की हर्षपूर्वक स्तुति करता हूँ ! उनके गुरु पंन्यासपद से अलंकृत और पृथ्वी पर सर्वत्र प्रख्यात नमस्कारपरायण श्री भद्रंकरविजयजी थे ।

उपधान विधि और छ'री पालक संघ में जो अत्यंत दृढ़ थे । विहार में सूर्य की तरह सदैव अप्रमत्त और महाशीलांग रथ को धारण करनेवाले ब्रह्मचर्य पालन में अत्यंत ही निष्ठावान थे ।

प्रव्रज्या समय से 36 वर्ष बीतने पर छत्रीश गुणों से युक्त आचार्यपद उन्होंने प्राप्त किया था ।)

- अपनी निर्दोष और विशुद्ध संयम साधना के द्वारा मारवाड़ के विविध क्षेत्रों में जैनशासन की अद्‌भुत प्रभावना करनेवाले शासनप्रभावक पूज्य **आचार्यदेव श्रीमद् विजय जिनप्रभसूरीश्वरजी म.सा.** का पुण्य–प्रभाव अजब गजब का था । उनका जन्म गुजरात राज्य के जूनाडीसा गाँव में वि.सं. 1985 माघ कृष्णा-11 के शुभ दिन हुआ था । उनकी माता का नाम केसरबाई व पिता का नाम चिमनभाई था । उनका नाम जेसिंगभाई था ।
- उन्होंने मात्र 13 वर्ष की उम्र में गृहस्थ जीवन में पंचप्रतिक्रमण आदि व कर्मग्रंथों का अभ्यास किया था ।

– पूज्यश्री का जन्म जूनाडीसा में मामा के घर ऐसी जगह में हुआ था, जहाँ से आदिनाथ प्रभु की ध्वजा दिखाई देती थी ।

पिताजी दीक्षा की भावनावाले थे, अतः बचपन से ही उन्हें धर्म के संस्कार मिले ।

– धार्मिक पाठशाला में उनका हमेशा प्रथम स्थान रहता था । पाठशाला में एक गाथा करनेवाले को 1 पैसा इनाम के रूप में मिलता था । जेसिंगभाई सहजता से प्रतिदिन 9-10 गाथाएँ कंठस्थ कर लेते थे ।

बचपन में स्नान व कपड़े धोने के लिए लोग बनास नदी पर जाते थे । जेसिंगभाई अपने कपड़े स्वयं धोते-वहाँ भी जयणा का पालन करते, नदी में से पानी लेकर छानकर ही कपड़े धोते थे ।

उनका स्कूल में अभ्यास अंग्रेजी दूसरी व गुजराती छट्ठी तक हुआ था ।

वि.सं. 1998 में **पू.पं. श्री चरणविजयजी म.** का चातुर्मास जूनाडीसा में था, उस समय उपधान भी हुआ था। जेसिंगभाई के पिताजी चिमनभाई ने भी उपधान किया था, तब से उनकी दीक्षा की भावना हुई थी। जूनाडीसा में **पू.आ. श्री भद्रसूरिजी म.सा.** के चातुर्मास भी होते रहते थे। उसके प्रभाव से जेसिंगभाई में धर्मसंस्कारों का बीजारोपण होता गया।

जेसिंगलाल 14 वर्ष की उम्र में धंधे के लिए तीन वर्ष मामा की दुकान पर रहे। उन्होंने दो वर्ष स्वतंत्र धंधा किया। वहाँ भी धर्म के संस्कार इतने अधिक दृढ़ थे कि वे स्थंडिल हेतु संडास का उपयोग न कर साइकिल पर बैठकर गाँव के बाहर खुली जगह में ही जाते थे।

- कोल्हापुर के बाद अमीरगढ़ में धंधा चालू किया, वहाँ राशनिंग की दुकान थी। गाँव में मंदिर नहीं होने से प्रतिदिन रेल से 17 मील दूर पालनपुर जाकर दर्शन-पूजा के नियम का दृढ़ता से पालन करते थे।
- दोनों नवपद की ओली के दिनों में पौषध सहित आयंबिल करते थे।
- एक दिन सगी बहिन की शादी का प्रसंग था, तभी जेसिंगभाई सामायिक प्रतिक्रमण में ही थे।
- कच्छ-भद्रेश्वर तीर्थ में नवपद ओली का भव्य आयोजन था, जेसिंगभाई ने भी पौषध पूर्वक नौ दिन आयंबिल किये।

ओली पूर्णाहुति के बाद वे घर जाने के लिए बस स्टेंड पर आए। वहाँ उन्होंने देखा-**'एक भाई का जेब कट गया है, अतः वह परेशान है'** उसी समय जेसिंगभाई ने अपने पॉकेट में से सभी रु. निकालकर उस भाई को दे दिए...और उसकी समस्या हल कर दी।

बचपन में भी कैसी उदारता थी !

- उनकी सगाई हो चुकी थी, किंतु संयम का निर्णय होते ही श्रीफल व रुपया वापस देकर आ गए।

बचपन से ही वे भाग्यशाली थे। कोल्हापुर में श्री हिंदुमलजी जीतराजजी की ओर से लड्डू की प्रभावना थी ! उन्होंने कुछ लड्डू में सोने की गिन्नी रखी थी। गिन्नीवाला एक लड्डू जेसिंगभाई को मिला। ऐसे अनेक प्रसंग उनके भाग्योदय के सूचक हैं।

दीक्षा के पहले वे एक बीमार बछडी को अपने घर ले आए । सेवा-शुश्रूषा कर उसे ठीक कर दी-फिर वह गाय बड़ी हो गई । दीक्षा के 5 वर्ष बाद **पू. जिनप्रभविजयजी** अपने गाँव आए । गोचरी के लिए अपने घर आए तो वह गाय उन्हें पहिचान गई । वह उनके पीछे-पीछे उपाश्रय तक चली ।

– जेसिंगभाई की दीक्षा के बाद उनके पूरे परिवार में धर्म और धन की भी खूब-खूब वृद्धि होती गई ।

स्वाध्याय प्रेम

दीक्षा बाद कई वर्षों तक 15 नई गाथाएँ करने के बाद उन्हें पच्चक्खाण पारने का नियम था । उन्होंने छोटे-बड़े 20 ग्रंथ कंठस्थ किए थे ।

– उन्होंने श्रमण-जीवन में आयंबिल-खाते के पानी का लगभग उपयोग नहीं किया ।

– सोते समय वे कभी भी वीटियें (तकिया) का उपयोग नहीं करते थे ।

– प्रतिवर्ष मौन एकादशी, अट्ठाई धर, संवत्सरी, ज्ञानपंचमी, चौमासी का उपवास अवश्य करते थे ।

– एक-दो मिठाई सिवाय सभी मिठाइयों का उन्हें त्याग था ।

– वे हमेशा शाम का प्रतिक्रमण मांडली में ही खड़े-खड़े करते थे ।

- उनकी दीक्षा के बाद उनके पिता की भी दीक्षा की भावना दृढ़ होती गई... पूज्यश्री भी उनको प्रेरणा देते रहे, अंत में संवत् 2012 में 45 वर्ष की उम्र में उनकी भी दीक्षा हो गई और वे पू. मु. श्री वारिषेणविजयजी बने ।

मुनिजीवन में भी उनकी उदारता सदा बनी रही । उद्यापन में भक्तों द्वारा बहुमूल्य वस्तुएँ आतीं तो भी वे ग्रहण नहीं करते...इतना ही नहीं, अपने पास रही सामग्री...संयम के उपकरण कामली आदि की किसी भी महात्मा को जरूरत होती तो वे तुरंत दे देते ।

क्रोध जय

उनके जीवन में कभी क्रोध दिखाई नहीं देता था । **'तपस्वी तो शांत होना चाहिए ।' क्रोध तो तप का अजीर्ण है ।** वे वर्धमान तप के तपस्वी तो थे ही, साथ ही शांत भी थे । लोक में प्रसिद्ध कहावत `तपस्वी को जल्दी गुस्सा आता है' को उन्होंने समता द्वारा निष्फल किया था ।

यौवनवय, अति आकर्षक और सप्रमाण देहयष्टि, गौर वर्ण, कांति और अतिमोहक सुंदर रूप ! यह सब कुछ होने पर भी उनका संयम-जीवन निष्कलंक था, इसका मुख्य कारण गुरुकृपा की अजोड़ उपलब्धि थी ।

स्वादजय की साधना

वर्धमान तप की 58 वीं ओली चल रही थी । गोचरी आ गई थी, तभी, उदयपुर का संघ आया; महत्त्वपूर्ण चर्चा-विचारणा में 3 बज गए–फिर भी पूज्यश्री वापरने के लिए खडे नहीं हुए ।

शिष्य ने कहा, ``आयंबिल की गोचरी कभी की आ गई है, आप पधारो ।''

पूज्यश्री ने हँसते हुए-प्रसन्नतापूर्वक कहा, ``मुझे दो ही द्रव्य वापरने के हैं, दाल में रोटी डाल दी है । अपने आप दाल-ढोकली बन जाएगी ।''– उसके बाद ठीक 4 बजे पूज्यश्री आयंबिल करने बैठे !

कैसी अद्‌भुत साधना थी पूज्यश्री की !

अद्‌भुत समता

एक बार पूज्यश्री विहारकर 9 बजे पाटण पधारे । गर्मी के दिन थे अत: किसी ने कहा, `साहेबजी ! खूब Late हो गया, ताप कितना प्रचंड है ।'

पूज्यश्री ने कहा, `अभी कहाँ जेठ महीना चालू हुआ है ?'

उपाश्रय में आने के बाद सभी को लगा, `पूज्यश्री सिर्फ मांगलिक ही करेंगे ।' संघ की भी यही इच्छा थी ।

परंतु पूज्यश्री ने कहा, `तुम सब इकट्ठे हुए हो, मुझे भी थोड़ी प्रभावना करनी चाहिए' । इतना कहकर उन्होंने उस थकावट में भी ½ घंटा प्रवचन दिया ।

सामुदायिक उपधान

पूज्यश्री की निश्रा में स्वतंत्र व्यक्तिगत उपधान करानेवाले भी बहुत थे, फिर भी दो सामुदायिक उपधान शंखेश्वर और राणकपुर तीर्थ में हुए थे ।

प्रथम उपधान वि.सं. में राणकपुर तीर्थ में हुआ था, जिसमें 550 आराधक थे, जिसमें 200 माल वाले थे, सामुदायिक छोटी-मोटी प्रभावना के साथ सभी का सोने की चैन से बहुमान किया था ।

दूसरा उपधान शंखेश्वर में हुआ था । 600 आराधक आ गए थे । परंतु मर्यादित जगह के कारण 550 को ही प्रवेश दिया गया– ये दोनों उपधान `राजस्थान आराधक मंडल के उपक्रम में थे । शंखेश्वर उपधान में 11000 के 65 दाता थे ।

शारीरिक बल

लंबे-लंबे विहार, 2-3 घंटों के प्रवचन, नियमित एकासना तप और कभी 3-4 बजे भी एकासना, स्थंडिल हेतु बहिर्गमन आदि नियमों का पालन करते हुए भी उनकी सुदृढ़ काया को देख कई लोग कहते; सचमुच, पूर्व भव में इन्होंने जीवदया का अच्छा पालन किया है, जिसके फलस्वरूप ही उन्हें सुदृढ़ संघयण बल प्राप्त हुआ था ।

अखंड नवपद आयंबिल ओली

पूज्यश्री दीक्षा के पहले से चैत्र-आसो की नवपद ओली करते थे ।

वि.सं. 2045 फाल्गुण वदी-14 को पूज्यश्री ने पक्खी प्रतिक्रमण बैठे-बैठे जागृति पूर्वक किया । उसके बाद तबियत में थोड़ा सुधार लगा ।

पूज्यश्री अपने शिष्यों को बार-बार पृच्छा करते, `चैत्र ओली आए तब मुझे याद कराना, मेरी ओली की आराधना अखंड रहनी चाहिए । वे पुनः पूछते ओली में कितनी देर है ?'

पूज्यश्री की वह भावना अधूरी रह गई ! चैत्र सुदी-5 को ही वे स्वर्गवासी हो गए ।

पूज्यश्री की तारक निश्रा में निम्न लिखित गाँव–नगरों में उपधान तप संपन्न हुए

1. सेवाड़ी	2. देसूरी	3. उदयपुर
4. लास	5. महोबतनगर	6. साँचोर
7. बरलूट	8. गढ़सिवाणा	9. गोदन
10. उमेदाबाद-गोल	11. पाड़ीव	12. तखतगढ़
13. उदयपुर	14. वांकली	15. शिवगंज
16. बरलूट	17. देलंदर	18. घाणेराव
19. डीसा	20. कोसेलाव	21. कोट

22. उमेदाबाद 23. भिलड़ीयाजी 24. साँचोर
25. वेलांगरी 26. कोसेलाव 27. धानेरा
28. साँचोर 29. दाँतराई 30. नाणा
31. भिलड़ीयाजी 32. जूनाडीसा 33. भारजा
34. पालीताणा 35. पालीताणा 36. मालगाँव
37. पाटण 38. शंखेश्वर 39. पालड़ी
40. राणकपुर 41. गिरधरनगर 42. डीसा
43. पालीताणा 44. पालीताणा

छ'री पालक संघ

1. मालवाड़ा से आबूतीर्थ 2. कोसेलाव से राणकपुर
3. देसूरी से राणकपुर 4. घाणेराव से राणकपुर
5. देसूरी से मुछाला महावीर 6. गोदन से पालीताणा
7. शंखेश्वर से पालीताणा 8. रोहिड़ा से आबूतीर्थ
9. कोसेलाव से सम्मेतशिखर 10. जूनाडीसा से राणकपुर
11. टींबा से शंखेश्वर 12. उदयपुर से केसरियाजी
13. डूंगरपुर से केसरियाजी 14. धानेरा से शंखेश्वरजी

प्रेरक-प्रसंग

1. 36 वर्ष के दीक्षा पर्याय में वे नियमित एकासना करते थे । मुंबई में जब वे पूज्य आचार्य प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. की निश्रा में थे, तब मांडली की विशेष जवाबदारी वे सँभालते थे । गोचरी बाँटने के बाद जो भी बचा हो, उससे एकासना कर लेते थे ।

2. बादाम सिवाय सभी मेवे तथा केला सिवाय सभी फलों का उनको त्याग था ।

3. प्रतिदिन एकासना, निर्दोष आहार-पानी, शुद्ध विहार-यात्रा एवं विशुद्ध ब्रह्मचर्य, संयम के पालन में अप्रमत्तता ।

4. प्रायः भक्त के घर की गोचरी का त्याग, निर्दोष भिक्षा के लिए सतत प्रयत्न ! निर्दोष पानी का उपयोग, परिमित-द्रव्यों से एकासना । -निर्दोष पानी न मिले तो निर्दोष छाछ से भी ठाम चोविहार एकासना कर लेते ।

5. दिन में आराम नहीं करने की प्रतिज्ञा का दृढ़ता से पालन किया था ।

6. उनकी वाणी में मधुरता थी किंतु वे जीभ को सरस-मधुर के बजाय नीरस भोजन ही देते थे ।

7. कोसेलाव से सम्मेतशिखर के छ'री पालक संघ के बाद कलकत्ता आदि शहरों की खूब विनती थी, किंतु संयमप्रेम के कारण शहरों में चातुर्मास नहीं करने की भावना के कारण पुनः सम्मेतशिखर से लंबे-लंबे विहार कर 3200 कि.मी. विहार कर दाँतराई (राज.) में चातुर्मास किया था ।

8. साधना करे, सहायता करे और सावधान रहे वह साधु ! साधु की इस व्याख्या को उन्होंने आत्मसात् किया था । उनकी साधना गजब की थी आराधना में सहयोगी बनने में वे कभी पीछे नहीं हटते थे, इसके साथ संयम रक्षा में उनकी सतत अप्रमत्तता थी ।

9. दीक्षा लेने के लिए खीजड़े की फली नहीं खाने का नियम किया था...इस छोटे से त्याग से भी उन्हें सर्वविरति धर्म का लाभ हुआ ।

10. भयंकर ठंडी के दिनों में भी वे रात्रि में एक ही कामली का उपयोग करते थे । बिहार की भयंकर ठंडी में भी उन्होंने इस नियम का दृढ़ता से पालन किया था ।

11. उन्हें नवपद के नौ का अंक अत्यंत प्रिय था । हमेशा वे आषाढ़ सुद 9 के दिन ही चातुर्मास हेतु प्रवेश करते । उनके हर चातुर्मास में आराधना का मेघ बरसता था ।

12. वे हमेशा नवपद की ओली करते थे । उन्होंने वर्धमान तप की 76 ओली पूर्ण की थी । आयंबिल का तप भी उन्हें अत्यंत प्रिय था । उन्होंने नवपद की 90 ओली की थी । 36 वर्ष तक उन्होंने एकासने किये थे ।

13. वे अपने पास अणाहारी दवाई आदि की भी संनिधि नहीं रखते थे । जब जरूरत पड़े श्रावकों से याचना कर के ही लेते थे ।

14. उनमें क्रिया-रुचि भी अपूर्व कोटि की थी । उपधान वाहकों को खूब प्रेम व उत्साह से क्रिया कराते थे ।

15. दीक्षाजीवन के छटे वर्ष से ही उनके ऊपर प्रवचन की जवाबदारी आ पड़ी । उनकी प्रवचनशैली अत्यंत ही मधुर व प्रभावक थी ।

16. बीमारी के समय भी गोचरी के दोषों से बचने का वे सतत प्रयत्न करते थे ।

17. स्थंडिल हेतु बाड़े का उपयोग नहीं करते थे, वे हमेशा स्थंडिल हेतु बाहर ही जाते थे ।

18. उनकी काया गौरवर्णी व सुकोमल थी, परंतु संयमपालन में वे अत्यंत ही कठोर थे ।

- एक बार डीसा से खुड़ाला के विहार में वे रोज 25 से 30 कि.मी. चलते थे । एक बार शाम को 12 कि.मी. विहार कर दूसरे दिन सुबह 20 कि.मी. विहार कर अरठवाड़ा पहुँचे, परंतु वहाँ निर्दोष पानी की सुलभता नहीं होने से दोपहर को 12 बजे अरठवाड़ा से विहार कर 3 कि.मी. पर पोसालिया पहुँच गए ।

  कैसा अद्‌भुत था...संयमरक्षा का प्रेम !
- साधुजीवन में उत्तराध्ययन आदि कालिक सूत्रों के अधिकारी बनने के लिए योगोद्वहन करने पड़ते हैं । योगोद्वहन में कालग्रहण लेने होते हैं । जिसमें अप्रमत्ततापूर्वक शुद्ध सूत्रोच्चार करने होते हैं । उन्होंने अपने संयम जीवन में 1200 से 1300 कालग्रहण लेकर अनेक की सहायता की थी ।

समता–निधि

एक बार शाम को भयंकर गर्मी के विहार में साथ में रहे किसी महात्मा ने पानी का घड़ा किसी मजदूर को दे दिया । मजदूर ने सोचा, ``मार्ग में बहुत से कुएं-तालाब आते हैं, वहाँ पानी भर दूंगा'' यह सोचकर उसने वह घड़ा रास्ते में ही खाली कर दिया । साथी महात्मा को जब इस बात का पता चला तो उन्हें बड़ा दु:ख हुआ । पूज्यश्री क्या कहेंगे ?

परंतु जैसे ही पूज्यश्री को इस बात का पता चला, उस मजदूर को लेश भी ठपका दिए बिना इतना ही कहा, ``अब दूसरी बार किसी म. के साथ जाओ तो पानी इस प्रकार मत ढोलना, क्योंकि हम कुएं-तालाब का पानी नहीं पीते हैं ।'' इस प्रसंग में अद्‌भुत समता के दर्शन होते हैं-पूज्यश्री में !

◆ एक बार गर्मी के दिन थे ।

महेसाणा से 19 कि.मी. का विहार था । साथी महात्मा ने कहा, ``आज विहार लंबा होने से सूर्योदय के पहले निकल जायें ?'' पूज्यश्री ने दृढ़ता से कहा, ``19 तो क्या 21 कि.मी. विहार भी क्यों न हो, हमें सूर्योदय के समय ही विहार करना है ।'' कैसी दृढ़ता थी पूज्यश्री में ।

- एक बार किसी महात्मा के हाथ से घड़ी नीचे गिर गई और टूट गई । साथी महात्मा घबरा गए । पूज्यश्री ने इतना ही कहा, `घड़ी गिर गई, इसमें इतनी चिंता क्यों ?' घड़ी से ज्यादा कीमती समता है, समता नहीं गिरनी चाहिए ।

शांत–मूर्ति

- एक बार पूज्यश्री ने प्रवचन में ब्रह्मचर्यव्रत की महिमा का प्रभावक शैली में वर्णन किया । चालू प्रवचन में ही एक नवयौवना कन्या ने खड़े होकर पूज्यश्री से चतुर्थ व्रत की मांग की ।

पूज्यश्री ने समझाया, `यह सामान्य नियम नहीं है...माता-पिता की सहमति बिना यह नियम नहीं दे सकते हैं ।' उस कन्या ने अपने आप ही नियम ले लिया ।

गाँव में बात फैली । उस कन्या के माता-पिता पूज्यश्री के पास आकर झगड़ा करने लगे और कटु शब्द बोलने लगे । एक ने तो कहा, ``महाराज ! क्या समझते हो, मैं तुम्हारी दाढ़ी खींच लूंगा ।''

ऐसे गर्म वातावरण में भी पूज्यश्री एकदम शांत रहे...और अंत में इतना ही बोले ``भाई, तू दाढ़ी खींच लेगा तो मुझे लोच कराना नहीं पड़ेगा ।''

दूसरे दिन जब सत्य बात समझ में आई कि कन्या ने ही स्वयं नियम लिया था तो वह भाई माफी माँगने लगा ।

अजब थी पूज्यश्री की समता !

मर्यादा-पालन

एक बार पूज्यश्री जूनाडीसा में बिराजमान थे । रात्रि में 8 बजे उनकी माता ही अपने 8 वर्ष के पौत्र को लेने के लिए उपाश्रय में आ गई । उसी समय

पूज्यश्री ने थोड़ा कठोर होकर भी सूचना करते हुए कहा, `रात्रि में तुम्हें नहीं आना चाहिए ।' मैं और तुम जानते हैं कि तुम्हारा और मेरा मा-बेटे का संबंध है । परंतु लोग क्या समझेंगे ? रात्रि में भी उपाश्रय में बहिनें आती-जाती हैं ।

- पूज्यश्री ज्योतिष के अच्छे जानकार होने पर भी कभी भी किसी को प्रतिष्ठा-दीक्षा आदि के मुहूर्त बताने के सिवाय संसार के कार्य-संबंध में अपनी ज्योतिष विद्या का उपयोग नहीं करते थे ।

क्रिया–रुचि

- उपधान तप की आराधना दरम्यान पूज्यश्री स्वयं क्रिया कराते थे । कई बार उपधान तप के तपस्वी समूह में न आकर अलग अलग आते थे, इस कारण पूज्यश्री को बार बार क्रिया करानी पड़ती थी ।

  एक बार किसी महात्मा ने कहा, `ये लोग समझते नहीं हैं...आपका कितना समय बिगड़ता है...बार-बार क्रिया करानी पड़ती है ।'

  पूज्यश्री ने कहा, `भाई ! इसमें नुकसान कहाँ है ? इसमें तो लाभ ही लाभ है, गणधररचित सूत्र बोलने का लाभ मिलता है...यह कोई कम लाभ है !'

  कैसी अभिरुचि थी पूज्यश्री के दिल में-गणधर-रचित सूत्रों के प्रति !

- **एक बार उपवासपूर्वक उन्होंने एक ही दिन में 45 कि.मी. का विहार कर दिया था ।**
- एक बार नया ओघा उनके हाथ में था तभी धूलवाली भूमि पर वे उसी ओघे से प्रमार्जन करने लगे । तभी किसी ने कहा, `महाराजजी ! यह नया ओघा है ।'

  पूज्यश्री उस मुनि के भाव को तुरंत समझ गए । पूज्यश्री ने इतना ही कहा, **``जीवों की जयणा-पालन में यह ओघा काम न लगे तो यह ओघा किस काम का है ?''**

पूज्यश्री मधुरभाषी थे । उनकी वाणी में कभी कटुता देखने को नहीं मिली । चंदन के समान शीतल और मधुरवाणी द्वारा प्रवचन में कभी सभी को हँसाकर भी व्रत-नियम के लिए श्रोताओं को प्रोत्साहित किये बिना नहीं रहते ।

अप्रमत्तता

साधुजीवन में दिन में सोने का निषेध है । पूज्यश्री कभी भी दिन में संथारा नहीं करते थे ।

चाहे जितने लंबे विहार क्यों न हो, वे संयमपालन में सदैव अप्रमत्त या जागरूक रहते थे ।

चातुर्मास प्रवेश दिन Fix

पूज्यश्री को 9 के अंक पर पूर्ण श्रद्धा थी, अत: उनके चातुर्मास प्रवेश का दिन हमेशा एक ही था ।

वे हमेशा आषाढ़ सुदी-9 के दिन चातुर्मास हेतु प्रवेश करते थे ।

योगोद्वहन में दक्ष

साधुजीवन में आगमों के स्वाध्याय के लिए योगोद्वहन करने पड़ते हैं । योगोद्वहन दरम्यान कालग्रहण लेने पड़ते हैं । कालग्रहण लेने में सूत्रों की शुद्धि और क्रिया में अत्यंत ही अप्रमत्तता चाहिए । पूज्यश्री में **'सहायक'** बनने का गुण था, वे किसी भी महात्मा के योगोद्वहन में सदैव सहायक बनते थे । उन्होंने अपने जीवन में 1200 से अधिक कालग्रहण लिये थे ।

उपधानवाले महाराज

पूज्यश्री की निश्रा में प्रतिवर्ष एक या दो उपधान और 1-2 छ'री पालक संघ अवश्य निकलते थे । पूज्यश्री **'उपधानवाले महाराज'** के नाम से प्रसिद्ध थे । उपधान करानेवालों की भी उनके पास लाइन लगी रहती थी । कई बार तो एक ही वर्ष में 3-3 उपधान हो जाते थे ।

पूज्यश्री अकेले भी सभी आराधक-तपस्वियों को क्रिया आदि में पूर्ण संतोष देते थे ।

पूज्यश्री की धर्मश्रद्धा

पूज्यश्री चातुर्मास हेतु तखतगढ़ (राज.) में बिराजमान थे । चौमासे में अतिवृष्टि के कारण गाँव का तालाब भर चुका था । फिर भी वर्षा चालू थी । सभी को भय था कि तालाब टूट गया तो बहुत नुकसान हो जाएगा ।

संघ के अग्रणी पूज्यश्री के पास आए और गाँव की समस्या का निवेदन करने लगे ।

पूज्यश्री ने सहज भाव से कहा, ***'धर्म के प्रभाव से सब अच्छा होगा जिस गाँव में ऐसे धर्मस्थान हों और धार्मिक लोग बसते हों वहाँ गाँव के रक्षण की चिंता करने की जरूरत ही नहीं है ।'***

बस, पूज्यश्री के इन शब्दों को सुन सभी को शांति का अनुभव हुआ । इधर थोड़ी ही देर में बरसात कम हो गयी और तालाब के टूटने आदि का भय चला गया ।

वास्तव में यह सब उनके निर्मल संयमजीवन का ही प्रभाव था ।

विहार में निर्दोषचर्या

पूज्यश्री की निश्रा में वि.सं. 2037 में कोसेलाव से सम्मेतशिखरजी महातीर्थ का छ`री पालक संघ निकला ।

शहरों में चातुर्मास में विराधना आदि की संभावना होने से वहाँ से उग्रविहार कर पुनः राजस्थान पधारे ! 1200 कि.मी. के इस विहार मार्ग में भी अजैनों के घरों से लूखे रोटले, छाछ, गुड़ आदि से ही वे एकासना कर लेते थे, परंतु दोषित आहार नहीं लेते थे ।

विहार लंबा हो या छोटा हो, फिर भी थोड़ा प्रकाश होने के बाद ही वे पडिलेहन करते और लगभग सूर्योदय समय ही विहार करते, भले ही 20-25 कि.मी. का विहार क्यों न हो !

बीमारी में उन्हें फल लेने के लिए खूब आग्रह किया गया, परंतु दृढ़ मनोबली उन्होंने ऐसी परिस्थिति में भी अपवाद का सेवन नहीं किया ।

वे कभी किसी की निंदा नहीं करते थे, उनके मुख से कभी अवर्णवाद सुनने को नहीं मिला ।

उनकी गणि-पदवी मार्गशीर्ष शुक्ला-7, वि.सं. 2034, में लुणावा में तथा पंन्यास पदवी वै.सुदी-6, वि.सं. 2035, में पिंडवाड़ा में हुई थी ।

उनकी आचार्य पदवी वि.सं.2043, पौष वदी-5 के शुभ दिन डीसा में **पू.आ.श्री राजतिलकसूरिजी म.** तथा **पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म.** के वरद हस्तों से भव्य समारोह के साथ हुई थी ।

रोग में अपूर्व समाधि

वि.सं. 2044 श्रावण सुदा-10 को साबरमती में उनका स्वास्थ्य खराब हो गया। मस्तिष्क में गड़बड़ हुई। विस्मृति होने लगी, फिर भी किसी प्रकार की दीनता या हाय-हाय नहीं। **'कब अच्छा होगा ?'** ऐसी कोई चिंता नहीं। जब भी पूछे, एक ही जवाब देते, `सीमंधर स्वामीजी के केवलज्ञान में जो प्रतिबिंबित है, वही होनेवाला है, फिर चिंता किस बात की ? डॉक्टरों की मनाही होने पर भी उन्होंने संवत्सरी का उपवास किया और लोंच कराया।

- पूज्य आचार्य भगवंत धानेरा से संघ लेकर शंखेश्वर पधारे। शंखेश्वर में तबियत खराब हो गई। फागुण सुदी 15, वि. सं. 2045 को स्वास्थ्य ज्यादा खराब हो गया। डॉक्टरों की टीम उपस्थित हो गई, दो घंटे तक डॉक्टरों ने समझाया। सभी की एक ही सलाह थी कि पूज्यश्री को वाहन द्वारा तत्काल अहमदाबाद ले जाया जाय। परंतु दृढ़ संकल्पी पूज्यश्री ने इन्कार कर दिया। भयंकर बीमारी में भी एंबुलेंस का उपयोग न करने की दृढ़ता बताकर उन्होंने देह की ममता-छोड़ने का एक उत्तम आदर्श प्रस्तुत किया था। पहले संयमरक्षा, फिर देह-रक्षा, यह उनका मुद्रालेख था, अतः जीवन की इच्छा किए बिना ही वे मौत के स्वागत के लिए भी तैयार हो गए।

शंखेश्वर स्थिरता दरम्यान वे प्रतिदिन 5000 नवकार का जाप करते थे। वे उस समय 5 घंटे प्रभुभक्ति व जाप में व्यतीत करते थे।

अनेक ने इस विकट परिस्थिति में अपवाद सेवन हेतु आग्रह किया, परंतु पूज्यश्री टस-से-मस नहीं हुए।

अंत में, शंखेश्वर तीर्थ में चैत्र सुदी-5, संवत् 2045 के दिन अत्यंत समाधिपूर्वक उन्होंने अपना देहत्याग किया था।

शिष्य

प्रसन्नतामूर्ति पू.पंन्यास श्री पुंडरीकविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2007
माघ शु-12

कालधर्म
वि.सं.2047
आषाढ़ वदी-7

दीक्षा पर्याय 40 वर्ष

सुरेन्द्रनगर (गुज.) की धन्यधरा पर वि.सं. 1981 भादों सुदी-4 (संवत्सरी-महापर्व) के शुभ दिन श्रेष्ठिवर्य पोपटलालभाई की धर्मपत्नी रंभाबेन ने एक तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम **पन्नालाल** रखा गया।

बचपन से ही आर.एस.एस. संस्था से जुड़े। खूब पराक्रमी ! खूब न्यायप्रिय, अतः कहीं भी अन्याय होता हो तो वहाँ प्रतिकार करने के लिए तैयार !

किसी को स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी कि यह युवक दीक्षा के लिए तैयार हो जाएगा।

यौवनवय में प्रवेश के बाद लग्न-ग्रंथि से जुड़े। परंतु सिद्धांत महोदधि **पू.प्रेमसूरिजी म.** के परिचय से वैराग्य भाव का बीजारोपण हुआ। इसी बीच **पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का सत्संग हुआ, उनकी जीवनचर्या व साधना-रुचि से खूब प्रभावित हुए। उन्हीं के चरणों में अपना जीवन समर्पित करने का निश्चय किया।

लग्न के एक ही वर्ष बाद जब उन्होंने अपने वैराग्य की बात माता-पिता को कही तो एक बार तो घर में बम-धड़ाका सा हो गया, परंतु जब उन्होंने अपनी धर्मपत्नी से बात की तो वह भी सुसंस्कारी होने से पति के संयममार्ग में बाधक बनने के बजाय स्वयं ही दीक्षा के लिए तैयार हो गई। दोनों की तीव्र वैराग्य भावना को देख आखिर माता-पिता ने सहमति दी और एक शुभदिन अपनी जन्मभूमि में ही भव्य समारोह के साथ **पू.महाभद्रविजयजी म.** की निश्रा में उनकी भागवती दीक्षा हुई और वे **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी**

म. के शिष्य बने । उनका नाम **मुनि श्री पुंडरीकविजयजी** रखा गया । दीक्षा का शुभ दिन था माघ शुक्ला द्वादशी वि.सं. 2007 । उसी दिन श्रद्धेय गुरुदेव **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.** की गणि-पंन्यास पदवी पालीताणा में संपन्न हुई थी ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद ज्ञान-ध्यान व तप-साधना में लीन बन गए ।

आगे चलकर प्रवचनकार भी बने । जहाँ-जहाँ भी उनके स्वतंत्र चातुर्मास हुए वहाँ संघ में सुंदर शासन प्रभावना का माहौल जमाया ।

वि.सं. 2033 में मेरी भागवती-दीक्षा के बाद का पहला ही चातुर्मास !

पूं.पं. श्री हर्षविजयजी म. की तारक निश्रा थी । प्रवचनकार के रूप में **पू.मुं.श्री पुंडरीकविजयजी म.** थे । वे खूब आनंदी स्वभाव के थे । उनके प्रवचन में वैराग्य रस का प्रवाह बहता था ।

◆ केश लुंचन में उनकी Mastry थी । मेरी भागवती-दीक्षा के बाद मेरा पहला ही लोंच सिर्फ 50 मिनिट में इस प्रकार किया था कि मुझे पता ही नहीं चला कि कैसे लोच पूरा हो गया ।

◆ ***अपनी भूल के बाद क्षमा माँगने में उन्हें लेश भी संकोच का अनुभव नहीं होता था । बड़ों के पास तो व्यक्ति क्षमा माँग सकता है,परंतु छोटों के पास तो क्षमा माँगने में अहंकार ही बाधक बनता है । परंतु उन्हें इस बात का लेश भी संकोच या हिचकिचाहट नहीं थी ।***

पू. चंद्रशेखरविजयजी म. के प्रति रविवार को दिये गये रामायण सम्बन्धी जाहिर प्रवचनों की पुस्तिकाएँ प्रकाशित होती थीं, कुछ प्रवचन की नकलें उनके पास थीं । मैंने भी विपिनभाई के पास वे पुस्तिकाएँ मुंबई से मँगवाई थी ।

उन्होंने अपनी पुस्तिकाएँ इधर-उधर रख दी होंगी, फिर मेरे पास रही पुस्तिकाओं को देख कहने लगे, ``ये तो मेरी पुस्तिकाएँ हैं ।''

मैंने स्पष्टीकरण किया, परंतु वे माने नहीं ! आखिर उनके आग्रह को देख मैंने वे पुस्तिकाएँ उन्हें दे दीं । परंतु एक-दो दिन बाद जब उन्हें अपनी पुस्तिकाएँ मिल गईं तो उन्हें अपनी भूल का खूब पश्चाताप हुआ । माफी भी माँगी ।

◆ कभी-कभी उनके हाथों से गोचरी ज्यादा आ जाती थी । वापरनेवाले मर्यादित होते तो वे घबरा जाते परंतु उसी समय **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** उन्हें आश्वासन देते हुए कहते, ``गोचरी आ गई हैं तो अब गृहस्थ को

थोडे ही वापस देनी है ! सब व्यवस्था हो जाएगी ।'' इतना कहकर पू.पंन्यासजी म. बढ़ी हुई गोचरी वापर लेते और उन्हें निश्चिंत कर लेते ।

◆ शिष्य आदि के विषय में वे खूब निःस्पृही थे फिर भी उनके स्नेही मित्र **पू.पं. श्री धर्मानंदविजयजी म.** ने उनको शिष्य बना दिया था और उन्हें भागवती सूत्र के योगोद्वहन भी करवा दिए । वि.सं. 2037 में उनकी गणि पदवी और 2039 में उनकी पंन्यास पदवी हुई थी ।

पंन्यास पदारूढ़ होने पर भी उन्हें किसी प्रकार का अभिमान नहीं था ।

◆ एक बार पालीताणा में कुछ लोग सुअर को पकड रहे थे । तब सुअर को बचाने के लिए वे दंडा लेकर चले और सुअर पकडनेवालों को भगा दिया । उनमें जीवदया का खूब प्रेम था ।

द्वि. वैशाख वदी-2 वि.सं. 2047 दि. 30-5-1991 के शुभदिन में **पू.आ.श्री प्रद्योतनसूरिजी म.** आदि की निश्रा में पोलकी शेरी पाटण (गुज.) में गुरु मंदिर में **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की गुरुमूर्ति की प्रतिष्ठा का कार्यक्रम बहुत ही उत्साह से संपन्न हुआ । उसके बाद दूसरे दिन विहार था । परंतु रात्रि में 12 बजे **मु. हेमप्रभविजयजी म.** को जगाकर कहा, `**मेरा चातुर्मास सिर्फ आराधना के ध्येय से शंखेश्वर तीर्थ में हो तो ज्यादा अच्छा रहेगा ।'**

मानो भावी मृत्यु का कोई संकेत मिल गया हो इसलिए अन्यत्र चातुर्मास न कर सिर्फ शंखेश्वर दादा की भक्ति व आराधना के ध्येय से शंखेश्वर में चातुर्मास करने की भावना व्यक्त की ।

उनकी भावनानुसार उनका एवं **मु. श्री कमलसेनविजयजी** आदि तीन ठाणा का शंखेश्वर में चातुर्मास निश्चित हुआ ।

चातुर्मास आराधना हेतु पाटण से विहारकर शंखेश्वर पधारे । वहाँ प्रतिदिन शंखेश्वर दादा की अपूर्व भक्ति करने लगे परंतु एक दिन अचानक स्वास्थ्य बिगड़ गया ।

अनेक बाह्य उपचार करने पर भी आयुष्य का तैल लगभग पूरा हो चुका था । अतः वि.सं. 2047 आषाढ़ वदी-7 के दिन नवकार और शंखेश्वर दादा के ध्यान में उन्होंने अपना भौतिक देह छोड़ दिया और परलोक के पथ पर प्रयाण कर लिया । वंदन हो सदानंदी पू. पंन्यासजी म. को । जो शांत या उदास वातावरण में भी ताजगी भर देते थे ।

नवकार प्रेमी पू. उपाध्याय श्री महायशविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2008
माघ शु-8

कालधर्म
वि.सं.2069
पौष सुद-11

दीक्षापर्याय 61 वर्ष

डीसा (गुज.) की धन्य धरा पर श्रेष्ठिवर्य नाथालालभाई की धर्मपत्नी बबुबहन ने वि.सं 1979 भादो सुदी-13 के शुभदिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम मोतीलालभाई रखा गया ।

इंटर तक के अभ्यास के बाद मोतीलालभाई व्यवसाय हेतु कोल्हापुर (महाराष्ट्र) आ गए ।

यौवन के प्रांगण में प्रवेश के बाद विमलाबहन के साथ उनका विवाह हुआ ।

श्रावण सुदी-13, वि.सं. 2000 में विमलाबहन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम धीरज रखा गया ।

उसके बाद **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी म.** के संपर्क से मोतीलालभाई में वैराग्य भावना का बीजारोपण हुआ । धीरे धीरे उनकी वैराग्य भावना प्रबल होने लगी ।

उनकी माँ और बहन ने भागवती दीक्षा अंगीकार की । उन्होंने अपने दिल की बात धर्मपत्नी विमलाबहन को बतलाई तो वह भी दीक्षा के लिए तैयार हो गई ।

मोतीलालभाई ने अपने पुत्र धीरज को भी अच्छे संस्कार दिए । पूर्वजन्म के पुण्योदय से बालक धीरज की भी वैराग्य भावना दृढ़ होने लगी ।

मोतीलालभाई ने परिवार में बात की तो उनकी दीक्षा से सब सहमत थे परंतु बालक धीरज की दीक्षा के लिए सबका विरोध था ।

आखिर **प.पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराजा** की अनुज्ञा से झगडियाजी तीर्थ में मोतीलालभाई ने अपनी धर्मपत्नी विमलाबहन व 8 वर्षीय सुपुत्र धीरज के साथ वि.सं. 2008 माघ शुक्ला अष्टमी के दिन भागवती दीक्षा अंगीकार की । मोतीलालभाई **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के शिष्य **मु. श्री महायशविजयजी म.** बने और धीरज का नाम **मु.श्री धुरंधरविजयजी** रखा गया । **मुनिश्री महायशविजयजी** के शिष्य **मु. श्री धुरंधरविजयजी** बने । विमलाबहन का नाम **सा. श्री विमलप्रभाश्रीजी** रखा गया ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे ज्ञान-ध्यान की साधना में लीन बन गए ।

पू. गुरुदेवश्री के चरणों में अपने पुत्र को समर्पित कर दिया । पूज्यश्री बालमुनि का व्यवस्थित ढंग से योग-क्षेम करने लगे ।

धीरे-धीरे बालमुनि की प्रतिभा खिलने लगी । छोटी उम्र में वर्धमान तप का पाया डालकर वर्धमान तप की 40 ओलियाँ कर ली ।

नमस्कार महामंत्र के प्रति उन्हें पहले से ही लगाव था । वे प्रतिदिन घंटों तक नमस्कार महामंत्र का जाप-स्वाध्याय करते थे और अपने पास आनेवाले जिज्ञासु को भी नवकार की आराधना-साधना के लिए खूब-खूब प्रेरणा करते थे ।

`नमस्कार स्वाध्याय' ग्रंथ में संकलित पूर्वाचार्यकृत नवकार विषयक स्तोत्रों पर खूब चिंतन-मनन करते थे ।

नवकार जाप में स्थिरता पाने के लिए उन्होंने `कमलबद्ध' नवकार के चित्रों का प्रकाशन करवा कर उसका खूब प्रचार प्रसार करवाया था ।

अपने गुरुदेव के प्रति उनके दिल में खूब आदर-सद्भाव था । गुरुदेव की आज्ञा स्वीकार कर राजस्थान के अनेक गाँव-नगरों में स्वतंत्र चातुर्मास कर अनेक को धर्माभिमुख भी बनाया ।

पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. की आज्ञा से वि.सं. 2041 जेठ सुदी 10 के शुभ दिन उन्हें गणि व पंन्यासपद से तथा गच्छाधिपति **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय महोदयसूरीश्वरजी म.सा.** की आज्ञा से वि.सं. 2052 मार्गशीर्ष शुक्ला-3 के शुभ दिन उन्हें उपाध्याय पद से अलंकृत किया गया ।

पिछले कुछ वर्षों से जंघाबल क्षीण हो जाने से शारीरिक अशक्ति के कारण वे चंदन सोसायटी डीसा में स्थिरवास के रूप में रहे थे ।

वि.सं. 2068 में मेरा चातुर्मास शत्रुंजय-महातीर्थ में था । चातुर्मास बाद गिरनार जामनगर-शंखेश्वर होते राज. की ओर विहार था । उस समय फागुण वदी-1 दि. 28-3-2012 के शुभ दिन हम विहार करते हुए चंदन सोसायटी डीसा पहुँचे । **पू.उपा. श्री महायशविजयजी म.** आदि वहीं बिराजमान थे । लगभग 20-22 वर्षों के बाद पूज्य उपाध्यायजी म. के दर्शन-वंदन का सौभाग्य मिला था । वे शारीरिक दृष्टि से खूब अशक्त थे । उनकी उम्र 89 वर्ष की थी, अतः उम्र के हिसाब से शरीर में कमजोरी आए, कोई आश्चर्य की बात नहीं है, परंतु उस समय भी उनकी मानसिक जागृति अजब-गजब की थी ।

❋ उन्हें नवकार और बालकों पर खूब प्रेम था । जबकि कोई छोटा बच्चा आए तब वे उसके पास जोर से नवकार बुलवाते थे ।

उनके आसपास का वातावरण नवकार के घोष से गुंजता रहता था ।

वे कहते थे, `खाते–पीते चलते किसी भी क्रिया के समय मन में नवकार जपते रहो ।

❋ अंतिम दिनों में वे रात को भी नींद में नवकार और भक्तामर जोर शोर से बोलते रहते थे ।

सहवर्ती महात्मा जागृत कर शांत करते तब वे मौन रहते । इससे ख्याल आता है कि उन्होंने अपनी आत्मा में नवकार को आत्मसात् किया था ।

उनके हृदय में प्रेम और वात्सल्य था । नवकार के प्रति उन्हें गाढ श्रद्धा थी । वे घंटों तक नवकार का ही जाप करते रहते थे । रात्रि में भी जब तक नींद नहीं आए, तब तक नवकार के ही जाप-ध्यान में लीन रहते थे ।

दो दिन हमारी स्थिरता रही । दो दिन में घंटों तक उनके सान्निध्य में बैठने का सौभाग्य मिला ।

दोनों दिन उन्होंने गोचरी में भी हमारी भक्ति की । दि. 30 मार्च को वहाँ से पालनपुर की ओर विहार था ।

स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी कि यह हमारा मिलन अंतिम मिलन हो जाएगा ।

वि.सं. 2069 में बाली चातुर्मास के बाद पौष मास में पाली (राज.) में हमारी स्थिरता थी और पौष सुदी-12 के दिन उनके कालधर्म के दुःखद समाचार मिले ।

पौष सुद के प्रारंभ में उनका स्वास्थ्य काफी बिगड़ गया था परंतु पौष सुद-6 से पुनः स्वास्थ्य में सुधार दिखाई देने लगा । वे हमेशा की तरह दोपहर में कुर्सी पर बैठकर प्रसन्नतापूर्वक बातें कर रहे थे ।

दोनों रातों में ½ – ½ घंटें तक नवकार की महिमा भी उन्होंने सुनाई ।

तीसरे दिन प्रातः भक्तामर का पाठ भी किया । पौष सुदी 9 को रात्रि में उन्हें विशेष कमजोरी का अनुभव होने लगा ।

पौष सुदी-10 को उन्होंने दिन भर में कुछ भी आहार नहीं लिया ।

उन्हें पूछा गया, ``क्या अनशन की भावना हैं ?''

उन्होंने जागृत अवस्था में `हाँ' भरी ।

उनकी भावनानुसार उन्हें सागारिक अनशन का पच्चक्खाण दिया गया ।

वि.सं. 2069 पौष सुदी-11 को भी दिन भर सतत नवकार का श्रवण चालू था । प्रतिक्रमण के बाद 9.30 बजे मयूरभाई ने कहा, ``मैं अभी नवकार सुनाता हूँ, आप सो जाएँ ।''

मयूरभाई का नवकार सुनाना चालू ही था, रात्रि में 10.05 बजे पू. उपाध्याय म. ने गहरा श्वास लिया । **मु. जिनधर्मविजयजी** पास में ही थे उन्हें जगाया गया । उन्होंने भी नवकार चालू किया । **पू. धुरंधरविजयजी म., पं. श्री तीर्थरत्नविजयजी** भी उपस्थित थे–सभी ने नवकार चालू किया । नवकार का श्रवण करते-करते पूज्य उपाध्याय म. ने अपने प्राण छोडे और परलोक के पथ पर प्रयाण किया ।

दूसरे दिन उनकी भव्य पालखी निकली ।

15

शिष्य

जयणाप्रेमी पू.मु. श्री कीर्तिकांतविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2008
माघ सुदी-10

कालधर्म
वि.सं.2060
जे.व. 6

दीक्षापर्याय 52 वर्ष

डीसा (गुज.) के पास आया छोटासा गाँव आसेड़ा ! वि.सं. 1981 आसो सुदी-7 के शुभ दिन कालिदासभाई की धर्मपत्नी ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया कांतिलाल !

परिवार संस्कारी होने से बचपन से ही कांतिलाल में धार्मिक संस्कारों का सिंचन हुआ ! स्वास्थ्य कमजोर रहता था, फिर भी सांसारिक सुखों के प्रति तीव्र वैराग्य भाव था । **अध्यात्मयोगी पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के परिचय से उनकी वैराग्य भावना दृढ़ बनी !

वि.सं. 2008 में माघ शुक्ला 10 के शुभदिन अपनी जन्मभूमि आसेड़ा में मुमुक्षु कांतिलाल ने भागवती दीक्षा अंगीकार की और उनका नाम **मुनि श्री कीर्तिकांतविजयजी** रखा गया और वे **पू. पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के शिष्य बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे रत्नत्रयी की आराधना-साधना में लीन बन गए ।

वि.सं. 2029 में **पू. मु. श्री कुंदकुंदविजयजी म.** के साथ **पू. कीर्तिकांतविजयजी म.** का भी चातुर्मास मेरी जन्मभूमि बाली में था । उस समय मेरी 15 वर्ष की उम्र थी । मैं 11 वीं कक्षा में हाई स्कूल में पढता था । मुझे चार महीने उनके संपर्क में रहने का सौभाग्य मिला । मैं उनके पास धार्मिक सूत्र और संस्कृत भी सीखता था ।

वे खूब जयणाप्रेमी थे । वे चलते समय ईर्यासमिति का अच्छी तरह से पालन करते थे । दिन में भी ये दंडासन का उपयोग करते थे । कहीं छोटे से छोटे जीव-जंतु की भी विराधना न हो जाय, उसका पूरा-पूरा ख्याल रखते थे । शाम के समय ये प्रतिदिन मात्रु परठने की जगह अवश्य देखते थे । उनका स्वभाव अत्यंत ही शांत और कोमल था । उनके चेहरे पर कभी क्रोध की रेखा देखने को नहीं मिलती थी ।

ग्लान **मुनि श्री धर्मरत्नविजयजी म.** की उन्होंने लगभग 1 वर्ष तक अखंड सेवा की थी ।

स्वाध्याय में उन्हें खूब रस था । श्रमण धर्म की अन्य क्रियाओं से निवृत्ति होने के बाद उनका अधिकांश समय स्वाध्याय में ही बीतता था । निरर्थक बातों में उन्हें लेश भी रस नहीं था । किसी भी आगम या प्रकरण ग्रंथ पर कोई वांचना या पाठ चल रहा हो तो वे अवश्य बैठ जाते और स्वाध्याय करते थे ।

वि.सं. 2035 में **पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के साथ उनका भी चातुर्मास पाटण में था । मेरा भी चातुर्मास पाटण में था । कुल 63 साधु भगवंत एवं लगभग 300 साध्वीजी म. का चातुर्मास पाटण में था । उस समय निर्दोष भिक्षा के लिए वे दूर-सुदूर क्षेत्रों में गोचरी के लिए जाते थे ।

दीक्षा के बाद वर्षों तक उन्होंने एकासने किये । वर्धमान तप की 85 ओलियाँ भी की ।

'भव आलोचना' उनका प्रिय विषय था । आराधक व जिज्ञासु देखकर वे **'भव आलोचना'** के लिए प्रेरणा करते । उनकी प्रेरणा से सैकड़ों लोगों ने अपने-अपने जीवन में हुए पापों की आलोचना कर अपनी आत्मा को निर्मल बनाया था ।

संयम के उपकरण सिवाय अन्य किसी भी वस्तु के संग्रह में उन्हें रस नहीं था ।

वि.सं. 2048 में ओसवाल कॉलोनी-जामनगर में मेरा भी चातुर्मास उनकी निश्रा में था । उस चातुर्मास में ओसवाल कॉलोनी में मेरे प्रवचन होते

थे तो वे प्रातः प्रवचन के लिए कामदार कॉलोनी जाते थे ।

उनमें परोपकार का एक विशिष्ट गुण था । बाल जीवों को धर्म-आराधना में जोड़ने में वे सदैव प्रयत्नशील रहते थे ।

व्यक्ति में पाप का भय होगा, तो वह अवश्य पाप से बचेगा ! वे हमेशा पाप से बचने के लिए बाल जीवों को प्रेरणा करते रहते थे ।

वे पिछले वर्षों में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.** के साथ थे । वि.सं. 2060 में जामनगर से पालीताणा जाते समय महुवा में एक मास स्थिरता की भावना थी, परंतु मानों उन्हें अपनी मृत्यु का ख्याल आ गया हो, इसलिए उन्होंने **गणिवर्य श्री हेमप्रभविजयजी** को कहा, **'मुझे शत्रुंजय दादा की यात्रा करा दो, मेरे जीवन का अब कोई भरोसा नहीं है ।'**

उनकी भावना अनुसार **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.** के साथ जेसर से हस्तगिरि होकर सीधे रास्ते से पालीताणा पहुँचे । वहाँ जाकर दूसरे दिन उन्होंने भावपूर्वक दादा की यात्रा व भक्ति की ।

यात्रा कर नीचे आए । वे खूब प्रसन्न थे । रात्रि में प्रतिक्रमण कर पोरिसी पढाकर, नवकार के जाप के साथ संथारा किया । उनकी समाधि के लिये महात्माएँ 1-1 घंटे जगकर पूरी रात्रि आराधना कराते थे । अचानक उन्हें श्वास की तकलीफ होने लगी । **मु. मेघरत्न वि.म.** ने **गणिवर्य हेमप्रभविजयजी** आदि को जगाया । नवकार की धून चालू की । नवकार का श्रवण करते-करते अत्यंत ही समाधि के साथ उन्होंने अपने नश्वर देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया ।

भद्रिक परिणामी मुनि श्री भद्रविजयजी

दीक्षा
वि.सं.2010
कार्तिक वदी-10

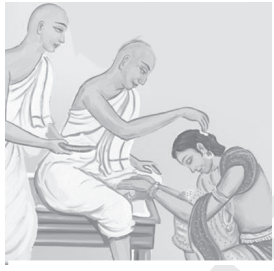

कालधर्म
वि.सं.2011

दीक्षापर्याय 1 वर्ष

धर्मभूमि राधनपुर की धन्य धरा पर वि.सं. 1958 जेठ सुदी-1 के शुभदिन पिता हरजीवनदास और माता   के सुपुत्र के रूप में पैदा हुए भोगीलालभाई ने वि.सं. 2010, कार्तिक वदी-10 के शुभदिन 52 वर्ष की प्रौढ़ वय में अध्यात्मयोगी **पूज्य पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के चरणों में अपना जीवन समर्पित कर दिया और उन्हीं के शिष्य **मुनिश्री भद्रविजयजी** बने ।

बचपन से ही परिवार में धार्मिक वातावरण मिला था । माता-पिता भी खूब संस्कारी थे । अतः दिल में यह भावना अत्यंत दृढ़ बनी हुई थी कि मानव-जीवन की सफलता निर्मल संयम धर्म के पालन में ही है ।

उनके जीवन में खूब सरलता थी । कहीं भी माया-कपट का नाम नहीं ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद भी इस काया की माया का रंग न लग जाय, इसके लिए वे खूब सावधान थे । वे अपनी आराधना-साधना में दत्तचित्त थे ।

आयुष्य की डोर बहुत छोटी थी । किसी को भी यह कल्पना नहीं थी कि ये महात्मा इतनी जल्दी विदाई ले लेंगे ।

वि.सं. 2011 में एक दिन सामान्य बीमारी में अत्यंत समाधिपूर्वक मुंबई में उन्होंने अपना देह छोड़ दिया और परलोक के पथ पर प्रयाण कर लिया ।

धन्य हो अल्प समय में अपने जीवन को सफल व सार्थक बनानेवाले महात्मा को !

शिष्य

संयममूर्ति पू. मु. श्री वारिषेणविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2012
वैशाख सुदी-11

कालधर्म
वि.सं.2051
वैशाख सुदी-1
डीसा

दीक्षापर्याय 39 वर्ष

गुजरात की धन्य धरा जूना डीसा नगर में श्रेष्ठिवर्य मगनभाई की धर्मपत्नी अमरबहन ने वि.सं. 1966 जेठ कृष्णा-14 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया चिमनलाल !

परिवार संस्कारी होने से चिमनभाई को बचपन से ही धर्म के संस्कार मिले। यौवन में प्रवेश के बाद लग्न-ग्रंथि से जुड़े। धर्मपत्नी का नाम केसर बेन था। क्रमशः तीन पुत्रों और एक पुत्री का जन्म हुआ।

तीन पुत्रों में सबसे बडे पुत्र जेसिंगभाई को बचपन से ही धर्म में तीव्र रुचि थी। 16 वर्ष की उम्र में ही पौषध में रहे जेसिंगभाई ने कहा, ``मुझे दीक्षा की अनुमति दोगे तो ही पौषध पारूंगा।'' जेसिंगभाई के इस सत्त्व को देख सबने अनुमान किया कि जेसिंगभाई अवश्य दीक्षा लेगा।

आखिर 21 वर्ष की युवा वय में जेसिंगभाई ने भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी** के शिष्य **मु.श्री जिनप्रभविजयजी** बने।

पुत्र की दीक्षा के पूर्व ही चिमनभाई की भी दीक्षा लेने की तीव्र इच्छा थी, परंतु पारिवारिक जवाबदारियों के कारण वे तत्काल दीक्षा न ले सके, परंतु उनका वैराग्य भाव अत्यंत ही तीव्र था।

वे संसार में रहते हुए भी एक आदर्श श्रावक का जीवन जीते थे।

जूना डीसा में प्रथम बार इलेक्ट्रिक लाइट आई और घर-घर में पानी के नल आ गए । फिर भी चिमनभाई ने अपने घर में नल व लाइट का कनेक्शन नहीं लिया । वे नदी पर से ही मर्यादित जल कुएं व नदी से ले आते थे और रात्रि में लालटेन का उपयोग करते थे ।

चिमनभाई व्यापार धंधे के लिए बाहर गाँव जाते तो भी कुएं से पानी लेकर, उसका संखारा भी उसी कुएं में कर परिमित जल से खुले में ही स्नान करते । वे स्नान के लिए बाथरूम व शौच क्रिया हेतु शौचालय में नहीं जाते ।

46 वर्ष की उम्र में वि.सं. 2012 वैशाख सुदी-11 के शुभ दिन जूना डीसा में उन्होंने भव्य महोत्सव के साथ भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे **पू.पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के शिष्य **मु. श्री वारिषेण-विजयजी** बने ।

– दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे खूब दृढ़तापूर्वक संयम धर्म के आचारों का पालन करते थे ।

– वे निर्दोष भिक्षाचर्या के खूब आग्रही थे । निर्दोष पानी के लिए उन्हीं घरों में बार-बार न जाकर नए-नए घरों में जाते थे ।

निर्दोष जल न मिले तो चौविहार उपवास कर लेते थे ।

– विहार दरम्यान उनकी खूब कसौटी होती थी परंतु वे अपने नियम में खूब दृढ़ रहते थे ।

– दीक्षा के बाद अनेक वर्षों तक वे नियमित एकासना ही करते थे, उसमें भी उनके अनेक वस्तुओं का त्याग रहता था ।

– केले सिवाय सभी फलों का तथा बादाम सिवाय सभी Dry Fruits का उन्हें त्याग था । सुदी-11 व दोनों चतुर्दशी को उपवास करते थे ।

– उनका सुबह का प्रतिक्रमण भी खूब जागृति पूर्वक होता था ।

वे प्रत्येक खमासमणे में अपना मस्तक जमीन को स्पर्श कराते थे ।

– `सकलतीर्थ' सूत्र खूब भावपूर्वक बोलते थे, उसमें 15 मिनिट का समय लगता था ।

पच्चक्खाण पारने में भी खूब शांति व उपयोगपूर्वक सूत्र बोलते थे ।

–वे प्रतिदिन प्रथम पंचसूत्र का अर्थ सहित चिंतन करते थे ।

निःस्पृहता

संयम जीवन में वे खूब स्वावलंबी थे । उनका ही पौत्र शैलेष दीक्षा के लिए तैयार हुआ, तब उसने उनका शिष्य बनने की भावना व्यक्त की, परंतु तुरंत ही उन्होंने कहा, `तू **जिनप्रभविजयजी म.** का शिष्य बन ! उनका शिष्य मेरा ही शिष्य है ।'

6 वर्ष बाद दूसरा पौत्र विपुल दीक्षा के लिए तैयार हुआ, तब बोले, `तू **युगप्रभविजयजी** का शिष्य बन ।'

वस्त्र-पात्र आदि में उन्हें किसी प्रकार की ममता-आसक्ति नहीं थी !

गुणानुराग

उनमें गुणानुराग का गुण भी विशिष्ट था । छोटे-बड़े सभी के विनय आदि गुणों की हृदय से अनुमोदना-प्रशंसा करते थे ।

निर्दोष-चारित्र

पू. प्रेमसूरिजी म.सा. के समुदाय में पिता-पुत्र **पू. वारिषेणविजयजी** और **जिनप्रभविजयजी** का चारित्र प्रशंसनीय माना जाता था, गृहस्थपने से ही उनका यतना का परिणाम साधु-जीवन में भी सदैव वृद्धिंगत रहा ।

अंतिम बीमारी में उन्हें Hospital में Admit करने के लिए खूब आग्रह किया गया, परंतु संयमप्रेमी महात्मा ने इन्कार कर दिया । वि.सं. 2051 वैशाख सुदी-1 को दिन में 10.20 बजे नवाडीसा में नेमिनाथ नगर के उपाश्रय में विशाल संघ की उपस्थिति में नवकार का श्रवण करते हुए उन्होंने भौतिक देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया । धन्य तपस्वी । धन्य महात्मा !!

शिष्य

पू. मुनिश्री महासेनविजयजी महाराज

दीक्षा
वि.सं.2013
वैशाख सुदी-3

कालधर्म
वि.सं.2044
जेठ वदी-6

दीक्षापर्याय 31 वर्ष

वि.सं. 1971 कार्तिक शुक्ला एकम्-नूतन वर्ष के मंगल प्रभात में मोटा मांढा (हालार-गुजरात) निवासी पुंजाभाई की धर्मपत्नी मांकाबेन ने अपने चौथे पुत्ररत्न को जन्म दिया और बालक का नाम माणेक रखा गया।

गत जन्म की आराधना-साधना के फलस्वरूप 7-8 वर्ष की उम्र में भी बालक माणेक के हृदय में जीवदया का अपूर्व प्रेम था।

❋ संध्या का समय था। माणेक भोजन के लिए बैठा था। माँ ने उसकी थाली में बाजरी का रोटा परोसा। दोपहर को कुछ खाया नहीं था, अतः माणेक को कड़कड़ाहट की भूख लगी हुई थी, माणेक खाने की तैयारी कर रहा था। उसी समय घर के बाहर से किसी भिखारिन का करुण शब्द सुनाई दिया। उसका बच्चा सुबह से भूखा था। वह करुण शब्दों से रोटी के लिए पुकार रही थी।

भिखारिन के करुण शब्दों को सुन माणेक का हृदय पिघल गया। वह खड़ा हो गया। थाली में से रोटला ले लिया और उसने जाकर भिखारिन को दे दिया।

बालक की इस उदारता को देख माँ का हृदय प्रसन्नता से भर आया। माँ ने सोचा, **'बचपन में ऐसी उदारता है तो जरूर यह बालक बड़ा होकर बड़ा दानवीर बनेगा।'**

घर की स्थिति मध्यम थी अतः मात्र 10 वर्ष की उम्र में ही गाँव छोड़कर नौकरी के लिए यह बालक अपने बड़े भाई के साथ मुंबई आ गया ।

11-12 वर्ष की उम्र में वह केन्या-नायरोबी जाकर 1 वर्ष बाद वापस भारत आ गया ।

माणेक धीरे-धीरे बड़ा होने लगा । न्याय-नीतिमत्ता के संस्कार माता-पिता से मिले थे ।

21 वर्ष की उम्र में दानवीर धरमशीभाई की पुत्री जीवीबेन के साथ माणेक की शादी हो गई ।

लग्न के बाद पारिवारिक जवाबदारी बढ़ गई । माणेकभाई ने अपने छोटे भाई केशुभाई के साथ महाराष्ट्र के वर्धा जिले के यवतमाल गाँव में शुद्ध घी का धंधा प्रारंभ कर दिया ।

–माणेकभाई की धर्मपत्नी सती स्त्री के समान थी । उसके मस्तक में से वासक्षेप झरता था ।

(इस बात का कभी प्रचार नहीं किया गया ।)

❋ माणेकभाई ने अपने पुत्र (केशु) को कभी अपशब्द बोलने नहीं दिया ।

एक बार किसी ने शिकायत की ,कि तुम्हारा बेटा गाली देता है ।

केशु ने बचाव किया, `नहीं पिताजी ! मैंने गाली नहीं दी है ।'

उसी समय माणेकभाई का पुण्य प्रकोप प्रकट हुआ और केशु को तमाचा लगा दिया ।

अपने पुत्र के संस्करण के लिए वे कठोर भी बनते थे ।

जैन धर्म का विशेष परिचय

वि.सं. 1995 में माधवबाग-लालबाग मुंबई में **पू.मु. श्री कनकविजयजी** का चातुर्मास हुआ । मित्र की प्रेरणा से माणेकभाई ने पूज्य मुनिश्री का एक ही प्रवचन सुना और उसके दिल में जैन धर्म के सिद्धांतों के प्रति एक विशेष आकर्षण पैदा हो गया । वह नियमित रूप से प्रवचन-श्रवण करने लगा । धर्म के प्रति उसकी श्रद्धा व आस्था बढ़ने लगी ।

वि.सं. 1996 में संयममूर्ति **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का लालबाग में चातुर्मास हुआ ।

प्रथम दर्शन-वंदन व प्रवचन-श्रवण के साथ ही माणेकभाई के अन्तर्मन में एक ऐसा आकर्षण पैदा हो गया कि उन्होंने अपने हृदय में उनको **'सद्गुरु'** के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया ।

धीरे-धीरे माणेकभाई की जीवन-चर्या में परिवर्तन आने लगा । दैनिक जिनपूजा, जिनवाणी-श्रवण, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय आदि में रस बढ़ने लगा ।

एक दिन माणेकभाई ने अपने छोटेभाई को भी प्रवचन-श्रवण हेतु प्रेरणा दी और मात्र एक ही प्रवचन से केशुभाई के दिल में भी अपूर्व आकर्षण पैदा हो गया ।

उपधान व चतुर्थव्रत स्वीकार

वि.सं. 1998 में **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** की निश्रा में अँधेरी-मुंबई में भाणजीभाई सापरिया की ओर से महामंगलकारी उपधान तप का आयोजन हुआ । इस उपधान तप में माणेकभाई, केशुभाई, मेघजीभाई और जीवीबेन भी जुड़े ।

अध्यात्मसाधक पू. गुरुदेवश्री के निरंतर सत्संग के फल स्वरूप केशुभाई का वैराग्य अति दृढ़ हो गया ।

मोहवश माता-पिता दीक्षा दिलाने में सहमत नहीं थे । केशुभाई को माणेकभाई का पूरा-पूरा पीठबल था ।

माणेकभाई की ही प्रेरणा से दीक्षा के लिए अनुमति न मिले तब तक केशुभाई ने छह विगई का त्याग कर दिया ।

केशुभाई के दृढ़ सत्त्व को देख माता-पिता का मोह उतर गया और एक शुभ दिन वि.सं. 1999 वैशाख सुदी-5 के शुभ दिन केशुभाई की भागवती दीक्षा हो गई और वे **पू.मु.श्री भद्रंकरविजयजी** के शिष्य **मु. श्री कुंदकुंद-विजयजी** बन गए ।

लघुबंधु की भागवती-दीक्षा के बाद माणेकभाई को भी लगा कि अब मुझे भी कुछ बड़ा साहस करना चाहिए ।

धर्मपत्नी जीवीबेन गर्भवती थी । उसकी कोख में एक बालक पल रहा था । माणेकभाई ने अपनी पत्नी से बात की और उसकी सहमति प्राप्त कर मात्र 26 वर्ष की भर युवावस्था में आपने गुरुदेव के पास चतुर्थ ब्रह्मव्रत स्वीकार लिया ।

वि.सं. 1998 जेठ सुदी-2 के शुभ दिन जीवीबेन ने एक तेजस्वी पुत्र-रत्न को जन्म दिया । राशि के अनुसार बालक का नाम वर्धमानकुमार रखा गया । परंतु छोटे भाई की दीक्षा के बाद भाई की याद में अपने पुत्र का नाम **'केशवजी'** रखा गया ।

साधर्मिक बहुमानः

माणेकभाई अपने हालारी बंधुओं को धर्म में जोड़ने के लिए अपनी खुद की टिकिट से पूज्य गुरुदेव के पास ले जाते ।

वि.सं. 2001 में मालेगाँव से मांडवगढ़ का छ'री पालक संघ पूज्य गुरुदेवश्री की निश्रा में निकला, तब मांडवगढ़ में माणेकभाई ने सभी साधर्मिकों का सोने की गिन्नी से संघ-पूजन किया । जितना संघपति ने संघ में खर्च किया, उससे डेढ़ गुणा खर्च माणेकभाई ने संघपूजन में कर अपनी साधर्मिक भक्ति का श्रेष्ठ आदर्श प्रस्तुत किया ।

वि.सं. 2001 में पाटण में पू. गुरुदेव की निश्रा में नाण समक्ष चतुर्थव्रत के साथ परिग्रह परिमाणव्रत भी ले लिया ।

माणेकभाई अपना समय आराधना व स्वाध्याय में व्यतीत करने लगे । उपमिति के स्वाध्याय से उनकी वैराग्य भावना और दृढ़ बनी ।

उदारता : सिंहच नदी का डेम टूटने पर दाँता में तीन दिन तक आपद्ग्रस्त लोगों को 36 मण लापसी खिलाई और पशुओं को घास-चारा खिलाकर उनकी सहायता की ।

संतान के हितैषी : 'संतान के आत्महित की चिंता करनेवाले ही सच्चे माता-पिता हैं' इस सत्य को जानकर अपनी इकलौती संतान को 2 वर्ष की उम्र में ही रात्रि-भोजन आदि छुड़वा दिया और प्रभुशासन का रसिक बनाने का प्रयत्न चालू किया ।

पू. प्रेमसूरिजी म. के आदेश से वि.सं. 2006 में पू. गुरुदेव **श्री भद्रंकरविजयजी म.** के भगवती सूत्र के योगोद्वहन चालू हुए तब वैद्यराज भी साथ में थे । रुग्णावस्था के कारण इस पीरियड में माणेकभाई ने पू. गुरुदेव की अपूर्व सेवा-भक्ति-वैयावच्च की ।

संतान के आत्म-हित की इच्छा से 7-8 वर्ष की उम्र में ही अपनी

इकलौती संतान गुरु-चरणों में अर्पित कर दी । धीरे-धीरे केशु के धार्मिक अभ्यास के साथ वैराग्य के संस्कार दृढ़ होने लगे ।

वि.सं. 2011 में वै.सुदी-7 के शुभ मुहूर्त में **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.** के चरणों में अपनी इकलौती संतान गुरु चरणों में समर्पित कर दी । दीक्षा के बाद केशव का नाम **मु. श्री वज्रसेनविजयजी** रखा गया ।

पुत्र की दीक्षा के बाद माणेकभाई अपना अधिकांश समय आराधना में व्यतीत करने लगे । पू. गुरुदेव की चिंतन की डायरियाँ खास पढ़ते थे ।

शंखेश्वर में उपधान

वि.सं. 2013 में हिम्मतभाई की ओर से पू. गुरुदेव की निश्रा में आयोजित उपधान तप में माणेकभाई व उनकी श्राविका दोनों जुड गए ।

उस उपधान में वे दादा की भक्ति में खूब ओतप्रोत बन गए ।

उपधान के बाद माणेकभाई की धर्मपत्नी का स्वास्थ्य बिगड़ गया और एक दिन अत्यंत ही समाधि के साथ उन्होंने अपना देह छोड़ दिया । मरने के पूर्व जीवीबेन की प्रेरणा थी कि मेरे पीछे शोक मत करना और जीवन में धर्म की वृद्धि करना ।

धर्मपत्नी की भावनानुसार प्रभुभक्ति के भव्य महोत्सव का आयोजन किया गया ।

भागवती दीक्षा स्वीकार : माता-पिता व पत्नी की मृत्यु व इकलौते पुत्र की दीक्षा के बाद माणेकभाई का निर्णय था कि शारीरिक प्रतिकूलता व रोगादि के कारण दीक्षा तो शक्य नहीं हैं, अतः घर में रहकर आराधना करूंगा ।

महोत्सव में निश्राप्रदान हेतु **पू. कुंदकुंदविजयजी म.** का हालार में आगमन हुआ ।

पू. कुंदकुंदविजयजी ने माणेकभाई को प्रेरणा की–तुमने मुझे व पुत्र को दीक्षा दिलाई । माता-पिता व पत्नी का देहांत हो गया है, अतः अब तो दीक्षा ही लेनी है ।

माणेकभाई का सवाल था– मेरा स्वास्थ्य इतना अनुकूल नहीं है । **पू.कुंदकुंद वि.** ने कहा, ``सारी जवाबदारी मैं लेता हूँ ।''

आखिर माणेकभाई तैयार हो गए और धर्मपत्नी के स्वर्गारोहण महोत्सव के साथ ही पू. गुरुदेव द्वारा प्रदत्त मुहूर्त में उनकी भागवती दीक्षा हो गई और वे **मु. महासेनविजयजी** बने ।

हालार में धर्म-प्रभावना

सरल व भद्र परिणामी हालारी प्रजा को धर्ममार्ग में जोडने में **पू. कुंदकुंदविजयजी** एवं **महासेनविजयजी** की बंधु बेलड़ी ने भरचक प्रयत्न किए ।

दीक्षा बाद **महासेनविजयजी म.** ने दो चातुर्मास हालार में मोटा मांढा व गोईंज में किए और वहाँ की प्रजा को धर्म में स्थिर किया ।

वि.सं. 2015 के जूनागढ़ चातुर्मास में एक बार अतिवर्षा के कारण मंदिर से बाहर नहीं निकल पाए । लगभग 8-10 घंटे तक प्रभु के जाप में स्थिर रहे ।

पू. महासेनविजयजी म. में अपने गुरुदेव के प्रति अपूर्व समर्पण भाव था, उनकी आज्ञा से उन्होंने अपने संयमजीवन का आधा भाग अर्थात् 15 चातुर्मास हालार के छोटे-छोटे गाँवों में किए और अपूर्व धर्म प्रभावना की ।

उनकी प्रेरणा से हालार में 16 जिनमंदिरों का निर्माण हुआ । चैत्रमास की सामुदायिक ओली, नवकार महामंत्र के तीन, पाँच व नौ दिन के एकासने, सामुदायिक अट्ठम तप, उपधान तप, चैत्य परिपाटी, छ'री पालक संघ आदि अनेक अनुष्ठान हुए और उनमें हालारी प्रजा को खूब जोड़ा ।

वि.सं. 2038 में आचार्य पदवी के बाद जब **पू. कुंदकुंदसूरिजी म.** हालार पधारे तब **पू. महासेनविजयजी म.** की प्रेरणा से गाँव-गाँव में अपूर्व शासन प्रभावना हुई ।

अपूर्व समता

वि.सं. 2027 में रायण-कच्छ के चातुर्मास दरम्यान **पू. महासेन वि.म.** को पेट में दर्द बढ गया । डॉक्टर की सलाह थी कि 5 कि.मी. दूर मांडवी में ऑपरेशन कराना होगा । भक्त श्रावकों ने एंबुलेंस तैयार कर दी, परंतु उन्होंने स्पष्ट इन्कार कर दिया । वे भयंकर दर्द को भी समतापूर्वक सहन करने लगे । श्रावकगण पू. गुरुदेव के पास पिंडवाड़ा गए, परंतु पू. गुरुदेव ने भी **महासेनवि.** की भावनानुसार दर्द में समता समाधि की ही प्रेरणा की । आखिर दर्द बढ़ने पर सोते-सोते डोली में ही उन्हें मांडवी ले

जाया गया परंतु वाहन का उपयोग नहीं किया । वहाँ उपचार से राहत हुई । वहाँ से विहारकर अहमदाबाद आए । जहाँ 4 घंटे के ऑपरेशन द्वारा पथरी के 124 टुकड़े बाहर निकाले । भान में आने पर उनके मुँह से **'नमो अरिहंताणं'** ही निकला ।

अपूर्व समर्पण भाव

पू. महासेनविजयजी म. के हृदय में अपने गुरुदेव के प्रति अपूर्व समर्पण भाव था । वे मानते थे कि मेरे जीवन में जो कुछ है, वह गुरुदेव का ही है । एक बार नानामांढा में ओली की पत्रिका में श्रावकों ने भूल से उनका नाम बड़े अक्षरों में छाप दिया और गुरुदेव का नाम छोटे अक्षरों में । यह देख उन्होंने कहा, `जिनकी कृपा से मैं हूँ, उनके नाम की उपेक्षा ?' हरगिज नहीं ! उन्होंने सारी पत्रिकाएँ cancel कर दीं ।

वे कहते-**``गुरुदेव तो मेरे हृदय के हार हैं ।''**

रसना–विजेता

उनका स्वास्थ्य पहले से ही कमजोर था । प्रातः चाय के बिना पेट साफ नहीं होता । परंतु रसना की आसक्ति न बढ़ जाय, इसके लिए दो कप चाय में तीन कप गर्म पानी मिला देते ।

दोपहर व शाम को भी वे बिल्कुल सादा आहार ही लेते थे ।

नाम नहीं, काम के प्रेमी

एक बार महोत्सव की पत्रिका में **मु. हेमप्रभवि. म.** ने उनके नाम के आगे 2-3 विशेषण लगा दिए । उनके हाथ में प्रूफ आया तो उन्होंने वे विशेषण काट दिए । फिर भी **हेमप्रभवि. म.** ने पुनः वे विशेषण लिखकर पत्रिका छपवा दी ।

पत्रिका हाथ में आते ही वे बोले, ``इस महोत्सव में मेरी निश्रा नहीं रहेगी ।''

फिर बहुत अनुनय करने पर भविष्य में कभी ऐसी भूल नहीं होगी, इसी शर्त पर उन्होंने महोत्सव में आने की सहमति दी । वे मानते थे कि मुनि पद में ही सब आ गया तो अलग विशेषण क्यों ?

भक्ति की मस्ती

अंतिम वर्षों में **महासेनविजयजी म.** को कमर का खूब दर्द रहता था, परंतु जब किसी अनुष्ठान में प्रभुजी की भव्य अंगरचना होती और वहाँ प्रभु के आगे सामुदायिक भक्ति होती तो वे अपने दुःख-दर्द को भी भूल जाते थे और घंटों तक भक्ति में तल्लीन हो जाते थे ।

गुणानुरागी दृष्टि

किसी भी व्यक्ति के जीवन में रहे विशिष्ट गुण-तप-साधना-वैराग्य-शासन प्रभावना आदि की मुक्तकंठ से अनुमोदना किए बिना नहीं रहते थे ।

वर्षों पूर्व मेरी मुनि अवस्था में हालार में मेरे प्रवचनों की बातों को सुनकर मोटा मांढा में मैं जब उनसे मिला तो मुझे कहने लगे, **''तू तो भविष्य में आचार्य बनेगा !''** उनमें दूसरों के गुण देखने की अपूर्व गुणदृष्टि थी ।

सादगीपूर्ण जीवन

पू. महासेनविजयजी म. को जीवन में सादगी खूब पसंद थी । वस्त्र, पात्र, कामली आदि में उन्हें सादगी पसंद थी । मूल्यवान कामली के बजाय वे दूसरे महात्माओं के काम में ली गई कामली का ही उपयोग करते थे ।

क्षमा माँगने में संकोच नहीं

पू. महासेनविजयजी म. खूब मर्यादाप्रेमी थे । कभी कोई वस्त्र परिधान आदि में मर्यादा का भंग करता तो वे कड़क शब्द भी बोल जाते थे ।

कभी संघ के अग्रणी श्रावकों के साथ भी व्यवस्था आदि के लिए कड़क शब्दों में बोल देते तो बाद में क्षमा याचना भी कर लेते थे । उनके अन्तर्मन में किसी प्रकार का अहंकार का भाव नहीं था ।

वे खड़े-खड़े प्रतिक्रमण करते थे । उनकी धारणा थी कि बच्चे उपदेश से नहीं, किंतु अपने आचरण से ही सीखते हैं । अतः उनको आदर्श देने के लिए ही मैं खड़े-खड़े प्रतिक्रमण करता हूँ ।

मर्यादा-प्रेमी

वर्तमान काल में नारी-जीवन में से धीरे-धीरे मर्यादाओं का लोप होता जा रहा है ।

पू. महासेनविजयजी म. खूब मर्यादाप्रेमी थे । मंदिर-उपाश्रय-प्रवचन व अनुष्ठान आदि में बहनें अपनी मर्यादा को ताक में रखकर जब कभी आतीं तो वे टोके बिना नहीं रहते । इसी का परिणाम था कि मर्यादारहित वेष में उनके पास आने की बहनें हिम्मत ही नहीं कर पातीं ।

सत् साहित्य-प्रचार

संत पुरुष अपनी वाणी द्वारा किसी का जीवन सुधारते हैं तो सत्साहित्य मौन रहकर भी अवश्य उपदेश देता है ।

भारत की आर्यभूमि में पाश्चात्य संस्कृति की लहर से जो आचार-परिवर्तन आया, यह देख **मुनिश्री महासेनविजयजी** के दिल में एक वेदना थी । इस देश की नारियों के समुत्थान के लिए उन्होंने **'नारी तू नारायणी'** पुस्तक का आलेखन करवाकर उसकी 60000 नकलें वितरीत कराईं तो पुरुष के जीवन को संस्कारी बनाने के लिए **'नर तू नारायण'** पुस्तक का खूब प्रचार-प्रसार करवाया ।

जीवदया-प्रेमी

वि.सं. 2042 के आसपास जामनगर में सरकार की ओर से नए कतलखाने की योजना बनी तो तुरंत ही उनके दिल में विरोध की आग पैदा हो गई ।

जामनगर में धर्मसभाओं के माध्यम से प्रचार के लिए उन्होंने **मुनिश्री रत्नसेनविजयजी म.** को (मुझे) भेजा और नए कतलखाने का विरोध कराया । उनके निरंतर प्रयत्न से नए कतलखाने की योजना रद्द हो गई ।

शिवमस्तु की भावना से ओतप्रोत

हर साधक को किसी न किसी मंत्र के प्रति विशेष लगाव होता है ।

उनके अन्तर्मन में **'शिवमस्तु सर्वजगतः'** जगत् के प्राणी मात्र का कल्याण हो यह भावना ओतप्रोत हो गई थी ।

वे किसी भी शुभ अनुष्ठान व प्रवचन का प्रारंभ इस भावना से ही करते थे ।

दीर्घ दर्शिता

गृहस्थ जीवन में माणेकभाई को हमेशा शरीर की प्रतिकूलता रहती थी । कभी पेट में दर्द तो कभी कमर में दर्द तो कभी सिर में दर्द । परंतु वे अपने छोटे बालक को साथ में लेकर प्रतिक्रमण की क्रियाएँ खड़े होकर ही करते थे ।

एक बार किसी ने पूछा, ``आपको इतनी तकलीफ है तो प्रतिक्रमण की सभी क्रियाएँ खड़े-खड़े क्यों करते हो ?''

उन्होंने कहा,–`मेरे साथ मेरा बच्चा भी प्रतिक्रमण करता है । मैं बैठे बैठे प्रतिक्रमण करूंगा तो वह भी बैठे बैठे ही करेगा । उसको गलत संस्कार न मिल जाय, इसलिए खडे खडे प्रतिक्रमण करता हूँ ।'

निश्चय तप को उन्होंने इस प्रकार आत्मसात् किया था कि उनका देहाध्यास छूट गया था ।

एक बार जंघा में फोडा हुआ–बढ गया, फिर भी उन्होंने लेश भी दीनता नहीं की । उस पीडा को भी हंसते मुंह सहन किया था ।

वचनसिद्धि

एक बार **महासेनविजयजी म.** ने वाघजीभाई को कहा था, `एक दिन यह आराधना धाम आराधकों से धमधमता होगा ।' उनके वचन आज प्रत्यक्ष सिद्ध है ।

समाधि-प्रदाता

गृहस्थ जीवन से ही **महासेनविजयजी म.** का एक विशिष्ट गुण था किसी को भी समाधि प्रदान करना । आराधना-अनुष्ठान आदि में कोई भी व्यक्ति बीमार हो जाय तो अपने कार्य को गौण करके भी वे ग्लान की समाधि के लिए प्रयत्नशील रहते ।

एक बार लंदन से एक बहिन उपधान के लिए आई । आराधना दरम्यान अचानक उस बहन को कान में तकलीफ हो गई और सुनना बंद हो गया ।

उन्हें पता चला तो वे उस बहन के उतारे में गए । अभिमंत्रित वासक्षेप डाला और उसके साथ ही उसके कान की पीड़ा दूर हो गई ।

पंच-कल्याणक भावना

एक ओर हालारी प्रजा को धर्माभिमुख बनाने के लिए **पू.मु. श्री महासेनविजयजी म.** सतत प्रयत्नशील थे तो दूसरी ओर आत्म-समाधि के लिए भी उतने ही जागरूक थे ।

परोपकार के साथ स्वोपकार की भी उनकी साधना उतनी ही प्रबल थी ।

वे प्रतिदिन आत्महित के लिए अपनी आत्मा को `तारक तीर्थंकर परमात्मा के पंच कल्याणक की भावना से भावित करते थे ।'

प्रतिदिन अपनी दुष्कृतगर्हा, सुकृतअनुमोदन एवं अरिहंत आदि चार की शरणागति में अपनी आत्मा को ओतप्रोत कर देते थे ।

वे प्रतिदिन प्रायः 3 घंटे तक प्रभु के पंच कल्याणक की आराधना करते थे । इस आराधना के प्रभाव से उन्हें अपूर्व आत्मबल प्राप्त होता था । उनकी सारी थकावट, शारीरिक श्रम दूर हो जाता था ।

हालार की धन्यधरा पर वि.सं. 2043 ज्येष्ठ वदी-6 के दिन अत्यंत समाधि के साथ उन्होंने काल धर्म को प्राप्त किया । उनकी स्मृति में आराधना धाम में उनका गुरुमंदिर बना है । जहां हालारी प्रजा आज भी उस महापुरुष को याद करती है ।

1

प्रशिष्य

वात्सल्यमूर्ति पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.1998
वैशाख सुद-5

कालधर्म
वि.सं.2050
पौष वदी-2

दीक्षापर्याय 52 वर्ष

अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि **पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** के प्रशिष्यरत्न सौजन्यमूर्ति **पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.** पोरबन्दर (गुजरात) में पौष वदी (गुज.) 2, वि.सं. 2050, दिनांक 29-1-1993 को संध्या समय 5.13 बजे चतुर्विध संघ की उपस्थिति में नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यन्त ही समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

पूज्यपाद आचार्यदेवश्री के कालधर्म से जैनसंघ, जैनशासन और समुदाय को **'समता व समाधि के साधक महात्मा'** की अपूरणीय क्षति पहुँची है ।

पूज्यपादश्री का जन्म अरावली पर्वत की श्रृंखलाओं के बीच राणकपुर, मुछालामहावीर और राता-महावीर आदि देवविमानतुल्य जिनमन्दिरों से विभूषित राजस्थान की पुण्यधरा गोड़वाड़ की पुण्य भूमि **'बिसलपुर'** गाँव में विक्रम संवत् 1971, जेठ सुद 11 के शुभ दिन श्रीमान् हजारीमलजी की धर्मपत्नी जतनाबाई की रत्नकुक्षि से हुआ था । बालक का नाम **'प्रेमचन्द'** रखा । उस समय किसके दिल में कल्पना होगी कि यह बालक प्रेमचन्द भविष्य में जैनश्रमण बनकर क्रमशः साधना के शिखर पर आगे बढ़ता हुआ

'जैनाचार्य' पदारूढ़ होकर अनेक जीवों का कल्याण करने में सक्षम बनेगा ।

गौर वर्ण, शान्त मुखमुद्रा और सौम्य प्रकृति के कारण बालक प्रेमचन्द, अपने परिवार में सभी का प्रेम-पात्र बन चुका था । प्रेमचन्द का प्राथमिक अभ्यास बिसलपुर में ही हुआ । 10 वर्ष की लघु वय में पिता की अकाल-मृत्यु की घटना ने प्रेमचन्द के दिल को हिला दिया । **'मृत्यु'** का करुण दृश्य देख प्रेमचन्द के दिल में इस असार संसार के प्रति विरक्ति का बीजारोपण हुआ । तत्पश्चात् पारिवारिक संयोगों की प्रतिकूलता के कारण उन्हें लग्नग्रन्थि से जुड़ना पड़ा ।

वि.सं. 1985 में जब परमगीतार्थ **आचार्यदेव श्रीमद् विजय दानसूरीश्वरजी म.सा.** का अपने शिष्य-प्रशिष्य **प.पू. पंन्यासप्रवर श्री प्रेमविजयजी गणिवर्य** एवं **प.पू. प्रवचनकार मुनिश्री रामविजयजी म.** आदि के साथ बम्बई में आगमन हुआ...तब पूज्य **मुनि श्री रामविजयजी महाराज** की भवनिस्तारिणी-वैराग्यवाहिनी धर्मदेशना का श्रवण कर एक ओर अनेक बाल-युवा पुण्यवन्त आत्माएँ वीतराग-परमात्मा द्वारा प्ररूपित प्रव्रज्यामार्ग को स्वीकार करने के लिए उत्कण्ठित हुईं तो दूसरी ओर अज्ञान व मोह से आच्छादित कई आत्माएँ उस त्याग-मार्ग का प्रचण्ड विरोध करने के लिए भी तैयार हो गई थीं ।

इधर-उधर की सुनी-अनसुनी बातों से बहकावे में आकर एक बार तो ये **'प्रेमचन्द'** भी **'दीक्षा-विरोधी'** समूह से जुड़ गये...परन्तु सद्भाग्य से **'प्रेमचन्द'** को लालबाग में चातुर्मास हेतु बिराजमान 22 वर्षीय **विद्वान् युवामुनि श्री कनकविजयजी म.** के अत्यन्त ही प्रेरणादायी प्रवचन-श्रवण का सुअवसर मिला और उसके साथ ही **'प्रेमचन्द'** के जीवन में अद्भुत-परिवर्तन प्रारम्भ हो गया । निरन्तर प्रवचन-श्रवण से उनके दिल में रही अनेक भ्रान्तियाँ समूल नष्ट हो गईं और उन्हें वीतराग-प्ररूपित सत्य मार्ग का स्पष्ट बोध होने लगा ।

इसके बाद में सद्भाग्य से प्रेमचन्द को वर्तमान काल के **'आनन्दघन'** महात्मा **प.पू. मुनिराज श्री भद्रंकरविजयजी म.** के साथ समागम हुआ । उनकी सौम्य, शान्त-प्रशान्त मुखाकृति के दर्शन से एवं शास्त्र के अतल

रहस्यों को समझानेवाली गम्भीर व वैराग्यवाहिनी देशना के श्रवण से प्रेमचन्द का अन्तर्मन प्रव्रज्या के पावन मार्ग पर गतिशील होने के लिए उत्कण्ठित हो उठा ।

यद्यपि प्रेमचन्द लग्न-ग्रन्थि से जुड़े होने के कारण संसार के माया-जाल में फँस चुके थे...परन्तु पूर्वजन्म की आराधना-साधना के फलस्वरूप उन्हें ऐसी धर्मपत्नी मिली कि जो उनके त्याग-मार्ग में बाधक बनने के बजाय अत्यन्त अनुकूल बनी ।

प्रेमचन्द की दृढ़ वैराग्य भावना को देखकर, उनकी छोटी बहिन–**हैमी बहन** के दिल में भी वैराग्य के संस्कार दृढ़ बनने लगे...और एक दिन तीनों ने प्रव्रज्या-मार्ग को स्वीकार करने का अपना संकल्प अपने परिवार के सामने स्पष्ट कर दिया...परन्तु उनके इस निर्णय में उन्हें अपने परिवार में से किसी का भी समुचित सहयोग प्राप्त नहीं हुआ ।

स्वतन्त्र-उड्डयन की चाह वाले नील गगन के पंखी को स्वर्ण का पिंजरा भी बंधन रूप ही लगता है । बस, इसी प्रकार कर्म-मुक्ति से ही आत्मा की सच्ची स्वतन्त्रता-प्राप्ति के रहस्य को समझे हुए प्रेमचन्द को भी यह बाह्यदृष्टि से सुखमय संसार दुःख रूप प्रतीत होने लगा और वे इस संसार के मायाजाल से जल्दी छूटने के लिए तलपापड़ बनने लगे ।

...एक शुभ दिन प्रेमचन्द ने सावरकुण्डला में **पू. मुनिश्री कनकविजयजी म.** के वरद-हस्तों से अपनी धर्मपत्नी और अपनी बहन को दीक्षा प्रदान करा दी और उसके बाद वे स्वयं भी दीक्षा के लिए सुसज्ज बन गये ।

तीव्र वैराग्य भावना के फलस्वरूप एक शुभ दिन प्रेमचन्द के जीवन में **'सोने का सूरज'** उदित हुआ और महाराष्ट्र के वणी गाँव में **प.पूज्य मुनि श्री भद्रंकरविजयजी म.** के वरद-हस्तों से पूर्व निर्धारित हालार-निवासी केशुभाई की दीक्षा के साथ, दीक्षा अंगीकार करने का संकल्प कर अपने परिवार को दीक्षा की सूचना देकर प्रेमचन्द अपने गुरुदेव के चरणों में वणी पहुँच गया । वहाँ **पू. मुनि श्री भद्रंकरविजयजी म.** के वरदहस्तों से वि.सं. 1998 वैशाख सुदी 5 के शुभ दिन प्रेमचन्द व केशुभाई की भागवती दीक्षा अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुई । प्रेमचन्द का नाम **मुनिश्री**

प्रद्योतनविजयजी रख कर उन्हें **मुनिश्री चरणविजयजी** का शिष्य घोषित किया गया । केशुभाई का नाम **मुनिश्री कुन्दकुन्दविजयजी** रखकर उन्हें **पू.मुनिश्री भद्रंकरविजयजी म.** का शिष्य घोषित किया गया ।

भागवती-प्रव्रज्या अंगीकार करने के बाद 27 वर्षीय युवा मुनि श्री प्रद्योतनविजयजी महाराज गुरुकुलवास में रहकर श्रमण-जीवन की ग्रहणशिक्षा और आसेवन-शिक्षा प्राप्त करने लगे । संयम-पर्याय की वृद्धि के साथ-साथ उनकी गुण-समृद्धि भी बढ़ती गई । संस्कृत-प्राकृत भाषा ज्ञान, प्रकरण-काव्य-आगम आदि के अभ्यास के साथ-साथ उनकी तप साधना भी आगे बढ़ने लगी । दीक्षा ग्रहण करने के बाद वे नियमित एकाशन तप के साथ सतत वर्धमान तप की ओली करने लगे, जिसके परिणामस्वरूप वि.सं. 2030 में पूज्यपादश्री ने वर्धमान तप की 100 ओली भी पूर्ण की और उसके बाद पुनः पाया डालकर नौ ओलियाँ भी कीं ।

शान्त स्वभाव, निरभिमान व्यक्तित्व, सौम्य मुखाकृति, वात्सल्यपूर्ण प्रेरणा-प्रदान की शैली, आदि-आदि गुणों के कारण वे जहाँ भी चातुर्मास अथवा महोत्सव में निश्रा प्रदान के लिए जाते, सर्वत्र लोक-मानस में प्रतिष्ठित हुए बिना नहीं रहते ।

वि.सं. 2033 में उनकी अन्तरंग योग्यता को जानकर पूज्यपाद सुविशाल **गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की आज्ञा से पूज्यपाद अध्यात्मयोगी **गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य श्री** ने उन्हें गणि व पंन्यास पदारूढ़ किया । तब से वे पूज्य पंन्यास श्री प्रद्योतनविजयजी गणिवर्य के नाम से प्रख्यात हुए ।

उनकी वात्सल्य-सभर प्रकृति के कारण ही, पूज्यपाद अध्यात्मयोगी गुरुदेव ने अपने स्वर्ग-गमन के पूर्व अपने शिष्य-प्रशिष्यादि के योगक्षेम की समस्त जवाबदारी **पू.पं. श्री प्रद्योतनविजयजी म.** पर डाली, जिसे पूज्यश्री ने अपने जीवन के अन्त तक निभाया ।

पूज्यपाद अध्यात्मयोगी गुरुदेवश्री के कालधर्म के बाद, पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य भगवन्त ने जब **पूज्य पंन्यासश्री प्रद्योतनविजयजी म.** को आचार्य पदारूढ़ करने का निर्णय लिया, तब निःस्पृह शिरोमणि

पूज्य पंन्यास श्री प्रद्योतनविजयजी म. ने अत्यन्त ही विनम्रतापूर्वक स्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया कि...**'इस पदभार को वहन करने के लिए मुझ में कोई योग्यता नहीं है, न तो मेरा कोई विशेष पुण्य है...और न ही कोई ज्ञानशक्ति है...आप अन्य योग्य आत्माओं को इस पद पर आरूढ़ करें और मुझे इस पदभार से मुक्त रखे...यही नम्र प्रार्थना है।'**

उनकी इस निःस्पृह वृत्ति को देख पूज्य गच्छाधिपति भगवन्त अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और **'स्वयं को पदप्राप्ति के लिए अयोग्य मानने वाला ही विशेष योग्य है'** के न्यायानुसार उन्हें आचार्यपद स्वीकार करने के लिए स्पष्ट आज्ञा ही कर दी।

आचार्यपद की लेश भी इच्छा नहीं होने पर भी गुर्वाज्ञा-अधीन पूज्यपादश्री को **'आचार्यपद'** स्वीकार करना पड़ा। वि.सं. 2038 में ढोढ़र (म.प्र.) में **प.पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा. के** वरद हस्तों से वे आचार्य पदारूढ़ हुए और तब से **पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.** के नाम से प्रख्यात हुए।

स्वर्गस्थ तथा विद्यमान पूज्य गुरुवर्यों के अत्यन्त कृपा-पात्र बने पूज्य आचार्य भगवन्त का पुण्य-प्रभाव दिन दूना-रात चौगुना बढ़ता गया...और उनके सान्निध्य में गोल (उम्मेदाबाद), भद्रंकरनगर (लुणावा) तथा हालार तीर्थ में भव्यातिभव्य अंजनशलाका-प्रतिष्ठा महोत्सव तथा नरसंडा, वड़ालिया सिंहण, आमला (हालार) आदि में भव्यातिभव्य प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुए।

अपनी जन्मभूमि बिसलपुर तथा गोड़वाड़ के आस-पास के अनेक गाँवों बेड़ा, पिंड़वाड़ा, शिवगंज, पाली, घाणेराव, देसूरी, सेवाड़ी, सादड़ी, वांकली, रानीगाँव आदि-आदि गाँवों में स्वतन्त्र चातुर्मास कर अनेक पुण्यवन्त आत्माओं को प्रभुशासन के सन्मार्ग में जोडा था। आयम्बिल का तप उन्हें अत्यन्त ही प्रिय था। उसे अपने जीवन में आत्मसात् किया था, अतः उनके उपदेशामृत का पान कर अनेक भावुक आत्माएँ आयम्बिल तप में सहज जुड़ जाती थीं।

इस प्रकार क्रमशः जिनशासन की आराधना प्रभावना करते हुए **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.** ने हालार-

तीर्थ की ऐतिहासिक अंजनशलाका-प्रतिष्ठा करने के बाद पोरबन्दर (गुजरात) में अपना अन्तिम चातुर्मास किया । लगभग 22 वर्ष के बाद पोरबन्दर संघ में पूज्य आचार्य भगवन्त आदि 7 महात्माओं का चातुर्मास होने से संघ में कोई अपूर्व उत्साह था । चातुर्मास दरम्यान पूज्य आचार्य भगवन्त के सान्निध्य में अनेकविध आराधना-अनुष्ठान सम्पन्न हुए ।

एक बार पू. आचार्य भगवंत स्थंडिल हेतु वाडे में गए, वहां अचानक गिर गए । दरवाजा अंदर से बंद था । काफी देर बाद भी जब पूज्य आचार्य भगवंत बाहर नहीं आए तो **पं. श्री हेमप्रभविजयजी म.** ने दरवाजा खटखटाया । कुछ जवाब नहीं मिला ।

पू. हेमप्रभविजयजी ने आवाज दी तो धीमे से आवाज आई, `**हेमप्रभ महाराज** ! मैं गिर गया हूँ !'

दरवाजा मजबूत होने से खुलने की संभावना नहीं थी ।

हेमप्रभवि. म. पहली मंजिल पर गए और वहां से 22 फूट नीचे वाडे में आंख मूंदकर कुद पडे ।

पास में पत्थर था, अतः **मु. श्री हेमप्रभविजयजी** को पत्थर से थोडी चोंट लगी । खून निकला, परंतु पू. आचार्य म. की ट्रीटमेंट में उन्हें ख्याल ही नहीं रहा ।

फिर पता चला कि उनके बाए हाथ में से खून निकला है ।

पू. हेमप्रभविजयजी की गुरू भक्ति गजब की थी । ऊपर से कूद पडना और समय पर पू. आचार्य म. की ट्रीटमेंट करना यह गुरु भक्ति के बिना संभव नहीं है ।

वृद्धावस्था आदि के कारण पर्युषण बाद अचानक भादों सुदी 4 के दिन स्थंडिल के बाद चक्कर आने से उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया और दाहिने अंग में लकवे का असर हो गया...परन्तु तत्काल चिकित्सा आदि मिल जाने से स्वास्थ्य में सुधार होने लगा । पूज्यपादश्री पौष दशमी की आराधना कराने के लिए पोरबन्दर के निकटवर्ती बलेज तीर्थ में पधारे । उसके बाद पुनः पोरबन्दर पधार गये । पूज्यपादश्री के स्वास्थ्य में धीरे-धीरे

सुधार हो रहा था...परन्तु अचानक ही कालधर्म के दो दिन पूर्व पूज्यपाद आचार्य भगवन्त के स्वास्थ्य में एकदम परिवर्तन आया । पूज्यपादश्री की शारीरिक अस्वस्थता दरम्यान **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा., पू. तपस्वी मुनिश्री जिनसेनविजयजी म.सा., पू. मुनिश्री चारित्रभूषणविजयजी म., पू.मुनिश्री हेमप्रभविजयजी म. तथा पू. मुनिश्री जयधर्मविजयजी म.** ने अपूर्व सेवा-शुश्रूषा की ।

शारीरिक अस्वस्थता में भी पूज्यपादश्री की मानसिक समता व समाधि अपूर्व कोटि की थी । पौषवदी 2 के दिन प्रातःकाल से ही नवकार का जाप और धुन चालू थी । इस प्रकार नवकार मंत्र का जाप व श्रवण करते हुए बराबर संध्या के 5.13 बजे पूज्यपादश्री ने इस नश्वर देह का त्याग कर परलोक के लिए प्रयाण किया । पूज्यपादश्री के स्वर्गगमन से संघ, शासन व समुदाय को एक समता-साधक महात्मा की अपूरणीय क्षति हुई है । दूसरे दिन संघ के उपाश्रय से जरीयन की पालखी में पूज्यपादश्री की अन्तिम-यात्रा प्रारम्भ हुई । जिसमें पोरबन्दर के जैन-जैनेतर हजारों व्यक्तियों ने भाग लिया । **'जय-जय नंदा, जय-जय भद्दा'** के गगनभेदी नारों के साथ पोरबन्दर के मुख्य-मुख्य राजमार्गों से प्रसार होकर समुद्र-तट के पूर्व निर्धारित स्थल पर पूज्यपादश्री के पार्थिव देह को चन्दन आदि की चिता पर स्थापित किया गया । तत्पश्चात् पूज्यपादश्री के सांसारिक पुत्र विमलकुमार, प्रकाश तथा मोतीलालजी आदि ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से पूज्यपादश्री के पार्थिव देह में अग्नि प्रज्वलित की और कुछ ही देर में अग्नि की भड़कती ज्वालाओं में पूज्यपादश्री का पार्थिव देह पंचभूत में विलीन हो गया ।'

पोरबंदर चातुर्मास में पूज्य आचार्य भगवंत ने प्रेम और वात्सल्य के द्वारा छोटे–बडे सभी का दिल जीत लिया था, इस कारण जब उनकी अंतिम यात्रा पालखी निकली तब मानो उपाश्रय की दीवारें भी रूदन कर रही थी ।

जन्म के साथ तो मृत्यु जुड़ी हुई है । सर्जन के साथ विसर्जन, उत्पत्ति के साथ विलय लगा हुआ है ।

भूतकाल में भटकती हुई इस आत्मा के बालमरण तो अनन्त

हुए हैं, परन्तु उन मरणों द्वारा भी भावी मरणों में ही अभिवृद्धि हुई है, जबकि पण्डित- मरण-समाधिमरण में भावी के अनन्त मरणों का अंत लाने की अपूर्व शक्ति रही हुई है । जीवन में समता की साधना द्वारा जो आत्माएँ समाधिमय मरण प्राप्त करती हैं, वे अल्प भवों में ही भव के बन्धन से मुक्त होकर शाश्वत अजरामर पद प्राप्त कर लेती हैं ।

वि.सं. 2033 में मेरी भागवती-दीक्षा के पावन प्रसंग पर पूज्य श्री बाली पधारे थे. पूज्यश्री की मुझ पर असीमकृपा थी । वि.सं. 2044 में रानीगाँव (राज.) तथा 2045 में पाली-राज. में उन्हीं के सान्निध्य में चातुर्मास करने का सुयोग प्राप्त हुआ था । उन्हीं की कृपा एवं आशीर्वाद से प्रवचन की जवाबदारी वहन करने का बल मिला था । पूज्य गुरुदेव के कालधर्म के बाद उन्हीं के सान्निध्य में वर्षों तक रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । वे वात्सल्य की साक्षात् मूर्ति थे । परनिंदा आदि पापों से वे कोसो दूर थे । उनके रोम रोम में गुणानुवाद एवं गुणानुमोदन का गुण कूट-कूट कर भरा हुआ था ।

उनके दिए प्रेम और वात्सल्य को मैं कभी भूल नहीं सकता ।

समता की साधना एवं समाधिमरण द्वारा मुक्तिपन्थ के यात्रिक बने पूज्यपाद आचार्यदेवश्री जहाँ हों वहाँ से हम पर कृपा बरसावें और आध्यात्मिक आराधना-साधना में आगे बढ़ने के लिए पूरक बल प्रदान करें...यही अन्तर की अभिलाषा है ।

परिशिष्ट

वैयावच्चप्रेमी पू.मु. श्री खांतिविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2006
वैशाख सुद-6

कालधर्म
वि.सं.2043
पौष वदी-13

दीक्षापर्याय 37 वर्ष

कच्छ की पावन भूमि गोधरा गाँव में उमरशीभाई की धर्मपत्नी वेलबाई ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम खेराजभाई रखा गया। बाल्यवय में अपनी जन्मभूमि में प्राथमिक व्यावहारिक शिक्षण प्राप्त कर व्यवसाय के लिए खेराजभाई मुंबई आ गए।

शरीर से खूब हृष्ट-पुष्ट होने से खेराजभाई धंधे में खूब मेहनत करने लगे।

वि.सं. 1996 में नमस्कार महामंत्र के बेजोड़ साधक **पू. मुनिराज श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** मुंबई-माधवबाग (लालबाग) में बिराजमान थे। उनकी धर्मदेशना का श्रवण कर अनेक पुण्यवंत आत्माएँ मोह-माया के बंधनों से मुक्त हो रही थी।

खेराजभाई अपने किसी संबंधी के लग्नप्रसंग पर माधवबाग की ओर आए हुए थे, तभी उन्हें पता चला कि माधवबाग में कोई प्रभावशाली अध्यात्म साधक महात्मा पधारे हैं।

भूखे को घेवर के भोजन की प्राप्ति की भाँति खेराजभाई के अन्तर्मन में आनंद की ऊर्मियाँ उछल पड़ीं। वे भी पहुँच गए अध्यात्मयोगी मुनिराजश्री की धर्मदेशना के अमीपान के लिए।

वैराग्यसभर एक ही प्रवचन ने खेराजभाई की जीवन की दिशा ही बदल दी। आज तक वे धन को ही जीवन का सर्वस्व मानकर उसी की प्राप्ति

के पीछे पागल थे, परंतु पूज्यश्री की एक ही देशना ने उनके जीवन की दिशा ही बदल दी। उन्हें आयंबिल में खूब रस था। उन्होंने प्रयत्नकर लालवाड़ी मुंबई तथा अपनी जन्मभूमि गोधरा आदि में भी आयंबिल खाता चालू करवाया।

एक शुभ दिन उनका पुण्य जागृत हुआ और 44 वर्ष की भर युवावस्था में मोहमाया के बंधनों का त्यागकर वि.सं. 2006 वैशाख वदी-6 के शुभ दिन शत्रुंजय महातीर्थ की धन्यधरा पर सिद्धांत महोदधि **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** परम शासन प्रभावक **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** तथा अध्यात्मयोगी **पू.मुनि श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** आदि शताधिक मुनिवर्यों की तारक निश्रा में भागवती दीक्षा अंगीकार की और **पू. भद्रंकरविजयजी** की आज्ञा स्वीकार कर **पू.मुनि श्री कुंदकुंदविजयजी म.सा.** का शिष्यत्व स्वीकार किया।

एक साथ में चार-चार गुरुवर्यों की छत्रछाया में उनके संयमजीवन का प्रशिक्षण प्रारंभ हुआ।

'गुरु-आज्ञा' को उन्होंने अपना जीवनमंत्र बना दिया। अपने गुरुवर्यों के हृदय में ऐसा स्थान प्राप्त कर लिया कि उन्हें आज्ञा करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट नहीं होती थी।

बाल, वृद्ध, ग्लान और तपस्वी मुनियों की सेवा-भक्ति में उन्हें खूब रस था।

दीक्षा के बाद वर्षों तक अखंड एकासने चालू रखे–उन्होंने वर्धमान तप की 81 ओलियाँ भी कीं। 20 वर्ष तक प्रति वर्ष पर्युषण में वे अट्ठाई करते थे।

– नवपद की ओली तो जीवन के अंतिम वर्ष तक चालू थी।

– दो वर्ष तक उन्होंने लूखी नीवी भी की थी।

– स्वाध्याय में खूब रुचि थी, परंतु क्षयोपशम मंद होने से ज्यादा अभ्यास तो न कर सके, परंतु उन्होंने स्तुति-स्तवन व सज्झाय खूब कंठस्थ किए। परमात्म-भक्ति में उन्हें खूब रस था, प्रतिदिन मंदिर में घंटे, दो घंटे तक परमात्मा की खूब भक्ति करते थे।

वि.सं. 2034 में वे अपने गुरुदेव **कुंदकुंदविजयजी म.** के साथ पालीताणा से विहार कर पिंडवाड़ा की ओर विहार कर रहे थे, तभी पाटण पहुँचने पर **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की ओर से आदेश मिला कि **``तुम्हें धर्मरत्नविजयजी म.सा. की सेवा में पाटण रुक जाना है ।''**

बस, गुर्वाज्ञा होते ही लेश भी आनाकानी या विकल्प किए बिना गुरुदेव की आज्ञा स्वीकार ली और लगभग 1 वर्ष तक उन्होंने लकवाग्रस्त **मु.श्री धर्मरत्नविजयजी म.सा.** की अखंड सेवा की । ग्लान मुनि को खूब समाधि दी ।

– वि.सं. 2040 में नांदिया (राज.) से शत्रुंजय महातीर्थ का छ'री पालक संघ **पू.आ.श्री कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.** तथा **पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** आदि की निश्रा में निकला ! जिस दिन संघ का पालीताणा में नगर-प्रवेश हुआ उस समय 11 बज चूकी थी फिर भी **खांतिविजयजी म.सा.** उस दिन भी दादा की यात्रा के लिए ऊपर चढ गए । चार बजे नीचे आकर उन्होंने एकासना किया ।

उसके बाद जितने दिन भी पालीताणा में स्थिरता रही, वे प्रतिदिन दादा की यात्रा अवश्य करते थे ।

वृद्धावस्था में भी उनके जीवन में लेश भी प्रमाद नहीं था ।

आज्ञापालन

वि.सं. 2040 में आराधना भवन-रतलाम संघ की चातुर्मास हेतु खूब आग्रहभरी विनंति थी ।

पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरिजी म.सा. ने रतलाम चातुर्मास में व्याख्याता के रूप में **मुनि श्री रत्नसेनविजयजी म.सा.** को भेजने का निर्णय किया परंतु साथ में वडिल के रूप में किसे भेजा जाय ? विचारविमर्श चल रहा था तभी 78 वर्ष के वयोवृद्ध **मुनि श्री खांतिविजयजी म.सा.** को बुलाकर उन्हें पूछा गया, `रतलाम चातुर्मास में निश्रा प्रदान हेतु तुम जाओगे ?'

78 वर्ष की वृद्धावस्था, चैत्र-वैशाख मास की भयंकर गर्मी के दिन और पालीताणा से रतलाम तक का 500 कि.मी. का विहार । विहार मार्ग में

कई प्रतिकूलताएँ, परंतु इन सबका लेश भी विचार किए बिना उन्होंने `तहत्ति' कहकर `हाँ' भर दी ।

चैत्र-वैशाख मास की भयंकर गर्मी में भी उन्होंने पालीताणा से रतलाम तक का पैदल विहार खूब उत्साह से किया । विहार में आनेवाली प्रतिकूलताओं को भी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया । विहार में 18-20-22 कि.मी. के भी विहार उत्साह से किए ।

एक बार 20 कि.मी. का लंबा विहारकर जब वे उपाश्रय में पधारे तब किसी श्रावक ने उन्हें कहा, ``साहेबजी ! आज खूब थक गए होंगे ?'' तुरंत ही उन्होंने कहा, ``थकावट किस बात की ? शरीर भले थके, परंतु मेरे भवभ्रमण की थकावट तो दूर हुई है ।''

◆ वृद्धावस्था में लंबे विहार में भी वे बियासना से कम पच्चक्खाण नहीं करते थे ।

◆ रतलाम चातुर्मास के बाद हम दोनों नागेश्वर आदि तीर्थों की यात्रा के बाद इंदौर पहुँचे । एक दिन बुखार आदि के कारण उनका स्वास्थ्य ज्यादा खराब हो गया । परंतु उस अस्वस्थता में भी पूरी रात उनके मुँह से **`अरिहंत-अरिहंत'** के सिवाय एक शब्द नहीं निकला । रोग में भी उनकी समाधि अजब गजब की थी ।

◆ इंदौर से विहार कर हम दोनों गुजरात की और आ रहे थें । दाहोद से गोधरा की 72 कि.मी. की दूरी थी, बीच में कहीं जिनमंदिर नहीं था । तो पहले दिन 22 कि.मी. का, दूसरे दिन सुबह-शाम मिलकर 30 कि.मी. तथा तीसरे दिन 18 कि.मी. का विहारकर हम गोधरा पहुँचे । जिनमंदिर के दर्शन से सिर्फ एक ही दिन वंचित रहे ।

◆ अपनी शक्ति अवस्था में तो वे विहार में जब प्रभु-दर्शन नहीं होते तो वे उपवास ही कर लेते थे ।

वि.सं. 2041 में भी उन्हीं की निश्रा में मेरा चातुर्मास पाटण में हुआ ।

पाटण अर्थात् जिनमंदिरों की नगरी । जहाँ 100 से भी अधिक प्राचीन जिनालय हैं । कलिकालसर्वज्ञ **आचार्य हेमचन्द्रसूरिजी म.सा.** की कर्मभूमि साधना भूमि है ।

–**कुमारपाल महाराजा** की भी राजधानी थी ।

–**पू. गुरुदेव अध्यात्मयोगी पू.पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की भी जन्मभूमि, साधनाभूमि और स्वर्गभूमि है ।

बस **पू.मुनि श्री खांतिविजयजी म.सा.** ने प्रतिदिन 5-7 जिन-मंदिरों के दर्शन का क्रम बना दिया ।

वे प्रतिदिन अलग-अलग मंदिरों में जाकर प्रभु की खूब भक्ति करते थे ।

वि.सं. 2042 में उन्होंने विद्याशाला अहमदाबाद में चातुर्मास किया ।

चातुर्मास बाद वि.सं. 2043 में डीसा में **पू.आ.श्री राजतिलकसूरिजी म.सा.** एवं **पू.आ.श्री प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** की निश्रा में **पू.पं. श्री जिनप्रभसूरिजी म.सा.** की आचार्यपदवी निश्चित हुई ।

पू.आ.श्री प्रद्योतनसूरिजी म.सा. के साथ **पू.खांतिविजयजी म.सा.** ने भी अहमदाबाद से डीसा की ओर विहार प्रारंभ किया । पाटण पहुँचने पर उनका स्वास्थ्य थोड़ा खराब हो गया ।

डॉक्टर की चैकिंग के बाद पता चला कि उनका हॉर्ट चौड़ा हो रहा है । शरीर में अशक्ति खूब बढ़ गई थी, विहार शक्य नहीं था, अतः 5-6 दिन के लिए उन्हें डोली में विहार करना पड़ा । डोली में बैठने का उन्हें खूब दुःख था, परंतु अन्य कोई विकल्प नहीं था ।

डीसा पहुँचने के बाद भव्य महोत्सव के साथ आचार्य पदवी का समारोह संपन्न हुआ ।

पौष वदी-13 वि.सं. 2043 के शुभ दिन वे डीसा के प्रायः आसपास के सभी जिनालयों के दर्शन करके आए । उसके बाद अचानक उनका स्वास्थ्य खराब हुआ ।

तीन-तीन आचार्य भगवंतों की तारक निश्रा में नमस्कार महामंत्र का स्मरण व श्रवण करते हुए अत्यंत समाधिपूर्वक उन्होंने अपने भौतिक देह का त्यागकर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया ।

समता व समाधि के साधक पूज्यश्री के पावन चरणों में कोटि कोटि वंदना ।

प्रशिष्य

सुसंयमी मुनि श्री हीरविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2005
वैशाख वदी-5

कालधर्म
वि.सं.2012

दीक्षापर्याय 7 वर्ष

हालार की धन्यधरा पर नवागाम गाँव में श्रेष्ठीश्री पूंजाभाई की धर्मपत्नी पानीबेन ने वि.सं. 1966 असाढ़ के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। नाम रखा गया हंसराजभाई !

हालार की भद्रिक प्रजा में सर्वप्रथम **पू. मुनि श्री कुंदकुंदविजयजी म.सा.** की भागवती दीक्षा हुई। उसके बाद हालार में दीक्षा के द्वार खुले।

सर्वप्रथम अपनी पुत्री को भागवती दीक्षा दिलाकर वि.सं. 2005 वैशाख वदी पंचमी के दिन भाणवड में 40 वर्ष की उम्र में हंसराजभाई ने भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे **पू. श्री कुंदकुंदविजयजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनि श्री हीरविजयजी म.सा.** बने।

दीक्षा अंगीकार कर गुर्वाज्ञानुसार सुंदर संयम धर्म का पालन करने लगे।

वर्धमान तप की 81 ओलियाँ भी कीं। वि.सं. 2012 में पूज्यों की आज्ञा से **मुनि श्री रुचकविजयजी म.सा.** की सेवा में गए। वहाँ अचानक उनकी तबियत खराब हो गई और 7 वर्ष का संयम पालन कर वि.सं. 2012 में के दिन अत्यंत ही समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए।

तपस्वी मुनिश्री चंद्रांशुविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2009
माघ शुक्ला-11

कालधर्म
वि.सं.2050
जेठ सुदी-4

दीक्षापर्याय 42 वर्ष

राजस्थान प्रांत के पाली जिले में लुणावा गाँव में **सुश्रावक हंसराजजी** की धर्मपत्नी फूलीबाई ने वि.सं. 1964 फागुण सुदी-2 के शुभदिन पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम चुन्नीलाल रखा गया।

अध्यात्मयोगी **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के संपर्क एवं उपदेशश्रवण से वि.सं. 2009 माघ शुक्ला-11 के शुभ दिन मुंबई में भागवती दीक्षा अंगीकार की और पूज्य पंन्यासजी म. ने उन्हें **मुनि श्री प्रद्योतनविजयजी म.सा.** का शिष्य बनाया। उनका नाम रखा गया **चंद्रांशुविजयजी म.सा. !**

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे स्वाध्याय, तप, वैयावच्च और प्रभु-भक्ति में लीन बन गए।

गुर्वाज्ञा को उन्होंने अपना प्राण बना लिया। बस, गुरुदेव की इच्छा, वही मेरी इच्छा ! इस प्रकार स्व-इच्छा को गौणकर गुरु-इच्छा को प्रधान करने के फलस्वरूप वे साधनामार्ग में आगे बढ़ते गए।

वि.सं. 2029, मार्गशीर्ष कृष्णा-11 के शुभ दिन अपने गुरुदेव **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की तारक निश्रा में वर्धमान तप की 100 वीं ओली 31 उपवास के साथ पूर्ण की अर्थात् 70 आयंबिल के ऊपर उन्होंने 31 उपवास की भीष्म तपश्चर्या की और उसके बाद अनिवार्य कारण सिवाय जिंदगी भर के लिए एकांतर उपवास का अभिग्रह लिया। उसके बाद उन्होंने

17 वर्षीतप किए । चालू वर्षीतप में भी नवपद की ओली नहीं छोड़ी । दोनों ओली में वे एकांतर उपवास व आयंबिल करते थे ।

–वर्षीतप में पारणे के दिन पोरिसी से कम पच्चक्खाण नहीं । वर्षीतप में नवकारसी में बियासना नहीं करते थे ।

स्वभाव परिवर्तन

वि.सं. 2039 में **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय राजतिलकसूरिजी म.सा., पू.आचार्यदव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** आदि की निश्रा में रानीगांव में महामंगलकारी उपधान था । इस उपधान में 275 लगभग आराधक थे ।

प्रतिदिन **पू. धुरंधरविजयजी म.सा.** तथा मेरे प्रवचन होते थे ।

एक शुभदिन **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय भद्रंकरसूरिजी म.सा.** (**पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय लब्धिसूरिजी म.सा.** के समुदाय के) भी सपरिवार पधारे । एक मास तक उनकी भी स्थिरता रही !

उपधान समाप्ति बाद पाली में पंडितजी के पास विशेष दार्शनिक अभ्यास के लिए **पू. चंद्रांशुविजयजी म.सा.** के साथ मेरा रानीगाँव से पाली की ओर विहार हुआ ।

22 मार्च 1983 को हम दोनों पाली पहुँचे ! **पं. रामकिशोरजी** पांडेय के पास मेरा मुक्तावली, षड्दर्शन समुच्चय, सांख्य तत्त्व कौमुदी आदि अनेक ग्रंथों का अभ्यास चालू हुआ । पाली संघ की आग्रह भरी विनंति से हम दोनों का पाली में चातुर्मास हुआ ।

पाली में हमारी 9 मास की स्थिरता रही । उन नौ मास में तपस्वी म. को कभी गुस्सा करते नहीं देखा ।

कई महात्मा कहते थे कि इनका स्वभाव खूब तेज है । परंतु मैंने तो कभी उन्हें क्रोध करते नहीं देखा ।

वास्तव में उन्होंने तप को पचा दिया था, तप का वास्तविक फल **'रसना-जय'** और **'क्रोध-जय'** है ।

आहार में उन्हें तनिक भी आसक्ति नहीं थी । मैं नियमित एकासना करता । में गोचरी लेकर 11-11.30 बजे आता, तब तक तो वे माला ही गिन रहे होते !

उपवास के पारणे में कई बार मैं कहता, ``11 बज गई है, गोचरी आ गई है, जल्दी बैठो ।''

वे कहते, ``अभी मेरा थोडा जाप बाकी है । पूरा होने के बाद ही वापरूंगा ।''

उपवास-छट्ठ के पारणे में भी कहीं कोई उतावल नहीं । सचमुच, समताभाव को उन्होंने अपने जीवन में आत्मसात् कर लिया था ।

100 ओली बाद 16 वर्ष तक वर्षीतप किए । फिर वृद्धावस्था व रोगादि के कारण उनका वर्षीतप छूट गया तो उसका उन्हें खूब खेद था ।

–अंतिम वर्षों में वे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के साथ में थे । **पू. हेमप्रभविजयजी म.सा.** तथा उनके शिष्यों ने उनकी खूब सेवा-भक्ति की ।

86 वर्ष की उम्र में 41 वर्ष के संयमधर्म का पालनकर वि.सं. 2050 में जेठ सुदी-4 के दिन आराधना धाम (हालार तीर्थ) में उन्होंने अत्यंत समाधि के साथ भौतिक देह का त्यागकर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया ।

धन्य हो तपधर्म को आत्मसात् करनेवाले तपस्वी महात्मा को ।

त्यागमूर्ति पूज्य पंन्यास प्रवर श्री जिनसेनविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2014
माघ सुदी-13

कालधर्म
वि.सं.2066
भादो सुदी-5

दीक्षापर्याय 52 वर्ष

गंगा, यमुना और सरस्वती नदी का जहाँ संगम हुआ है, वह भूमि प्रयाग तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुई है। अहिंसा, संयम और तप के संयोग से धर्म का जन्म होता है।

इसी प्रकार वैयावच्च, तप और त्याग का त्रिवेणी संगम देखना हो तो वह मिलेगा....पूज्य पंन्यासप्रवर श्री जिनसेनविजयजी म. में।

शूरवीरों की धरती राजस्थान के सिरोही जिले में एक छोटासा उथमण गाँव। उस गाँव में वि. सं. 1985 के वैशाख मास में माता टीपूबाई तथा पिता पोमाजी के कुलदीपक के रूप में पूज्यश्री का जन्म हुआ। बचपन में उनका नाम था जेठमल।

मात्र 15 वर्ष की उम्र में ही पिता का अवसान हो जाने से परिवार के निर्वाह की विशेष जवाबदारी उनके कंधों पर आ पड़ी। उस जवाबदारी का उन्होंने दृढ़तापूर्वक पालन भी किया।

18 वर्ष की उम्र में मद्रास जाकर वे व्यवसाय में जुड़ गए। परंतु सद्भाग्य से उन्हें कल्याण-मित्र रिखबदासजी स्वामीजी का संग मिल जाने से वे सद्धर्म की आराधना में आगे बढ़ते ही गए।

वि.सं. 2008 में परम पूज्य शासन-प्रभावक **आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.** के पास कलकत्ता में मुमुक्षु जेठमल ने चतुर्थ ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया।

वि.सं. 2011 में नौकरी से निवृत्त होकर आराधना साधना में अपना अधिकतम समय व्यतीत करने लगे ।

विक्रम संवत् 2011 में अध्यात्मयोगी पूज्यपाद पंन्यासप्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** की तारक निश्रा में अँधेरी मुंबई में नवकार महामंत्र की 20 दिवसीय सामुदायिक आराधना का भव्य अनुष्ठान रखा गया था । रिखबदास स्वामीजी मद्रासवालों की प्रेरणा से मुमुक्षु जेठमल भी इस आयोजन में संमिलित हुए...उन्होंने जीवन में पहली बार अध्यात्मयोगी नमस्कार महामंत्र के साधक **पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के दर्शन किए । पूज्य पंन्यासजी भगवंत के व्यक्तित्व में एक चुंबकीय आकर्षण था, मुमुक्षु जेठमल के दिल में एक आकर्षण पैदा हुआ ।

पूज्य पंन्यासजी भगवंत के नवकार विषयक गहन प्रवचनों को सुन-कर मुमुक्षु जेठमल ने उन्हीं के चरणों में अपना जीवन समर्पित करने का निश्चय किया, परंतु माता की अनुमति नहीं होने के कारण उन्हें घर पर रुकना पड़ा ।

अपने चारित्रमोहनीय के अंतरायों को तोड़ने के लिए मुमुक्षु जेठमलभाई ने वि.सं. 2011 श्रावण वदी 6 से वर्धमान तप का मंगल प्रारंभ किया ।

वि.सं. 2013 में शिवगंज बोर्डिंग में रहकर धार्मिक अभ्यास में आगे बढ़ने लगे । बोर्डिंग में रहकर दंडक, संग्रहणी, कर्मग्रंथ तथा संस्कृत की दो बुक का अभ्यास किया ।

पुत्र की तीव्र वैराग्य भावना को देखकर आखिर माता ने अपने लाड़ले पुत्र को संयम के पथ पर जाने के लिए सहर्ष अनुमति प्रदान की ।

उपकारी माँ के आशीर्वाद प्राप्त कर मुमुक्षु जेठमल पूज्य उपकारी गुरुदेव के चरणों में उपस्थित हो गए । पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा प्रदत्त मुहूर्तानुसार भुजपुर-कच्छ में वि.सं. 2014 महा सुदी 13 के शुभ दिन भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे पूज्यपाद पंन्यासजी भगवंत के प्रभावक शिष्यरत्न **मुनिश्री कल्याणप्रभविजयजी म.** के शिष्य **मुनिश्री जिनसेनविजयजी म.** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद पूज्य मुनिराज श्री ने **'गुरु-आज्ञा'** को अपना **'जीवन मंत्र'** बना लिया । अपने संकल्प-विकल्पों को छोड़ कर वे गुर्वाज्ञानुसार अपना जीवन व्यतीत करने लगे ।

अपने क्षयोपशमानुसार ज्ञानाभ्यास के साथ-साथ काया की माया को उतारने के लिए वे तपसाधना में जुड़ गए...उसी प्रकार आत्मा के अप्रतिपाती गुण **'वैयावच्च'** गुण को आत्मसात् करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहने लगे ।

तप और वैयावच्च के साथ वे त्याग की साधना में भी आगे बढ़ने लगे ।

स्वाध्याय, वैयावच्च, परमात्म-भक्ति, विनय, तप, कायोत्सर्ग, गुरुचरण-सेवा, इन्द्रियजय, क्षमा आदि गुणों को आत्मसात् किया । आयंबिल तप को उन्होंने अपने जीवन का एक अंग बना दिया । 1 वर्ष में लगभग 11 मास उनके आयंबिल तप में बीतने लगे । इस कठोर तप के साथ ही उन्होंने लगभग 15 वर्ष तक पूज्य प्रगुरुदेवश्री की अपूर्व सेवाभक्ति व वैयावच्च की ।

आत्म मस्ती

वि.सं. 2030 में मैं अध्यात्मयोगी पूज्यपाद गुरुदेवश्री के परिचय संपर्क में आया और 2031 के बेड़ा चातुर्मास में मुझे पूज्य गुरुदेव श्री के पावन सान्निध्य में रहने का अवसर मिला...उस बीच के 1 वर्ष दरम्यान मैं अनेक बार पूज्यपाद गुरुदेवश्री को वंदन के लिए आया...उस समय **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.सा.** का आसन (बैठक) पूज्यपादश्री के कमरे में व पास में ही रहता था । परंतु उन्होंने कभी उत्सुकतावश भी परिचय करना नहीं चाहा ।

पूज्यपादश्री के अंतरंग-बहिरंग विराट् व्यक्तित्व से आकर्षित होकर दूर-सुदूर से सैकड़ों लोग पूज्यपादश्री को वंदन हेतु आते रहते थे, परंतु आत्म-मस्ती में मस्त पू. मुनिवर ने जाने आने वालों के साथ कोई विशेष परिचय या संपर्क स्थापित करना नहीं चाहा ।

लोकसमूह के बीच रहकर भी लोगों से अलिप्त रहना यह पूज्य मुनिश्री का विशिष्ट गुण है । साधु जीवन में भी लोक-परिचय/संपर्क का एक 'रस' होता है जो साधु-जीवन के लिए नुकसानकर्ता ही है ।

पूज्य मुनिश्री में यह अलिप्तता, निर्लिप्तता का गुण सहज ही देखने को मिलता था ।

बम्बई के चार चातुर्मास दरम्यान वे मेरे ज्येष्ठ के तौर पर थे, कई

लोग वंदनार्थ आते-जाते थे, कई बार तो कोई व्यक्ति तीन-चार बार वंदनार्थ आ भी गया हो तो भी वे उसका नाम तक नहीं पूछते थे । यह उनकी अपने आप में आत्ममस्ती का ही द्योतक है ।

विरल व्यक्तियों में ही यह गुण देखने को मिलता है ।

अपूर्व स्वाध्याय प्रेम

दीक्षा लेने के पूर्व लगभग डेढ़ वर्ष तक मैं पूज्यपाद गुरुदेवश्री के सान्निध्य में मुमुक्षु अवस्था में रहा । उस समय दरम्यान मैंने चार प्रकरण, तीन भाष्य, छह कर्मग्रंथ, तत्त्वार्थसूत्र, वीतराग स्तोत्र, योगशास्त्र के चार प्रकाश, पाँचों पंचसूत्र आदि कंठस्थ किए थे । रात्रि में प्रतिक्रमण के बाद स्वाध्याय के लिए आलंबन चाहिए । पूज्य मुनिश्री को भी इनमें से बहुत से ग्रंथ कंठस्थ थे अतः मुझे बहुत बड़ा सहारा मिल जाता था । बेड़ा, लुणावा, पाटण, पाली आदि के कई चातुर्मासों में मैं पूज्यश्री के साथ रात्रि में स्वाध्याय करता ।

प्रकरण ग्रंथों के कंठस्थ करने के बाद यदि उनका पुनः पुनः स्वाध्याय न हो तो उन ग्रंथों का विस्मरण होना स्वाभाविक है ।

सामान्यतः देखा जाता है कि संयम जीवन के कुछ वर्षों तक तो कई महात्मा याद किए सूत्रों का स्वाध्याय पुनरावर्तन करते हैं, परंतु दीक्षा पर्याय लंबा हो जाने के बाद पुनरावर्तन में नीरसता आ जाती है...परंतु 40-40 वर्ष का दीक्षा पर्याय होने पर भी पूज्य मुनिराजश्री में यह स्वाध्याय प्रेम प्रत्यक्ष देखने को मिलता था ।

मूल सूत्रों को कंठस्थ करने के साथ साथ संस्कृत साहित्य के पठन-पाठन में भी उन्हें पूरी रुचि है । पूज्य तपस्वी मुनि श्री के सान्निध्य में ही मैंने प्रवचनसारोद्धार, उत्तराध्ययन सूत्र, आचारांग सूत्र, जीवाजीवाभिगम सूत्र, धर्मबिंदु आदि अनेक ग्रंथों का वाचन-स्वाध्याय किया था ।

समुदाय में जब भी चातुर्मास आदि दरम्यान ज्येष्ठ पूज्यों के सान्निध्य में आगम-वाचना या प्रकरण ग्रंथ वाचन का आयोजन होता तो वे उसका पूरा पूरा लाभ उठाते ! स्वाध्याय में उन्हें लेश भी प्रमाद नहीं ।

स्वाध्याय यह तो श्रमण-जीवन का प्राण है । जिस साधु के जीवन में स्वाध्याय का रस नहीं होता है, वे विकथा के जाल में फँस जाते हैं, जो आत्मा के लिए हानिकारक है ।

वर्धमान तप के प्रति अपूर्व प्रेम

दीक्षा अंगीकार करने के बाद कुछ वर्षों तक शारीरिक प्रतिकूलता के कारण पूज्य मुनिराजश्री वर्धमान तप की ओली नहीं कर पाए, परंतु मन में दृढ़ संकल्प और प्रणिधान होने से तप के अंतराय दूर हो गए और वर्ष में लगभग 10-11 महीने वर्धमान तप की ओलियाँ करने लगे ! परम तारक गुरुदेवश्री की शारीरिक सेवा-वैयावच्च के साथ-साथ उनकी यह तप साधना निरंतर आगे बढ़ती गई। पूज्य तारक गुरुदेवश्री के सान्निध्य में ही उन्हें 100 ओली पूरी कर लेने का मनोरथ था, परंतु सिर्फ कुछ ओलियाँ बाकी थीं...और क्रूर काल ने वि.सं. 2036 के वैशाख सुदी 14 के दिन पूज्य गुरुदेव रूप शिर-छत्र को सदा के लिए छीन लिया था।

पूज्य तपस्वी मुनिश्री की भावना मन में ही रह गई। फिर भी उनकी ओली की आराधना आगे बढ़ती गई।

वि.सं. 2037 में मेरा चातुर्मास पूज्य तपस्वी मुनिराजश्री के साथ उनकी जन्मभूमि उथमण गाँव में हुआ। चातुर्मास-समाप्ति बाद पूज्य तपस्वी मु. श्री ने पूज्य गुरुदेवश्री की पुण्यतिथि वैशाख सुद 14 के दिन 100 वीं ओली पूर्ण करने का संकल्प किया।

इधर उन्हीं दिनों में **प.पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.** एवं **प.पू.पं. श्री प्रद्योतनविजयजी म.सा.** (बाद में पू. आचार्य) की तारक निश्रा में राणकपुर से नागेश्वर तक 68 दिन का छ'री पालित संघ था, जिसमें मध्यप्रदेश के सभी मुख्य तीर्थों की क्षेत्र-स्पर्शना होने वाली थी।

संघयात्रा-प्रयाण के समय पूज्य तपस्वी मुनिश्री के 100 वीं ओली प्रारंभ हो चुकी थी। 100 वीं ओली की पूर्णाहुति का भव्य महोत्सव तीन महापूजन, स्वामिवात्सल्य आदि के साथ बाली में रखा गया था। भयंकर गर्मी के दिनों में प्रतिदिन 16-20 कि.मी. का विहार था ! फिर भी पूज्य मुनिश्री इस यात्रा-संघ में सम्मिलित हुए। मेरी इच्छा कुछ कम थी, परंतु पूज्य आचार्य भगवंतश्री की प्रेरणा से मैं भी इस संघ में जुड़ा।

उस लंबे विहार व तीर्थ-यात्रा दरम्यान पू. तपस्वी मुनिश्री का

स्वास्थ्य रतलाम में खराब हो गया, परंतु दृढ़ संकल्प के धनी पू. मुनिराजश्री लेश भी नहीं डिगे। चैत्र मास की भयंकर गर्मी के दिनों में मात्र 20 दिन में नागेश्वर से लगभग 400 कि.मी. का विहार कर हम बाली पहुँचे।

बाली में प.पू. श्री प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा. की तारक निश्रा में पूज्य तपस्वी मुनिश्री की 100 वीं ओली की पूर्णाहुति निमित्त भव्य महोत्सव का प्रारंभ हुआ। इस महोत्सव दरम्यान परम पूज्य तपस्वी सम्राट् **पू.आ. श्री राजतिलकसूरीश्वरजी म.सा., प.पू.मु. श्री जयभद्रविजयजी म., प.पू. वल्लभदत्तविजयजी म., प.पू.मु. श्री जितेन्द्रविजयजी म.** (बाद में आचार्य) **प.पू.मु. श्री महायशविजयजी म.** (बाद में उपाध्याय) आदि अनेक साधु-साध्वीजी भगवंत भी पधारे थे। अपनी 100 वीं ओली की पूर्णाहुति के उपलक्ष्य में **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** ने 5 उपवास करने का संकल्प किया।

वैशाख मास के भयंकर गर्मी के दिन ! परंतु पू.मुनि श्री के इस संकल्प को देख संघ में सामुदायिक अट्ठमतप कराने का निश्चय किया गया ! **पू.मु. श्री धुरंधरविजयजी म.** की प्रेरणा से उस समय संघ में 150 अट्ठम हुए, सभी तपस्वियों को 51 रु. की प्रभावना दी गई।

एक ही महानुभाव की ओर से सभी तपस्वियों के पारणे हुए।

स्वर्गस्थ अध्यात्मयोगी पू. गुरुदेवश्री की द्वितीय वार्षिक पुण्यतिथि निमित्त विशाल गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ। इस भव्य महोत्सव की समाप्ति के बाद हरखचंदजी राठौड़ परिवार की ओर से 11 छोड़ के भव्य उद्यापन का भी पंचाह्निक महोत्सव संपन्न हुआ।

पूज्य तपस्वी मुनिश्री ने वैशाख वद 1 के दिन 100 वीं ओली का पारणा किया और सिर्फ 5 ही दिन के बाद पुनः वर्धमान तप का पाया ड़ाला।

'साधु' की व्याख्या करते हुए पूज्य गुरुदेवश्री फरमाते थे **''जो साधना करे, सहायता करे और सहन करे वही साधु है।''**

पूज्य तपस्वी मुनिश्री में साधु के स्वरूप के ये तीनों लक्षण देखने को मिलते थे।

उनकी दैनिक जीवनचर्या में प्रमाद को कहीं स्थान नहीं था। वे रात्रि में 3 बजे उठकर कायोत्सर्ग की साधना करते थे। समुदाय में रहते हुए छोटे-

बड़े किसी भी महात्मा को वे आराधना-साधना में पूरे-पूरे सहायक बनते थे और शारीरिक प्रतिकूलता, रोग आदि को समतापूर्वक सहन करते थे ।

निःस्पृह साधक

त्याग, तप और तितिक्षा की साधना को अपने जीवन में आत्मसात् करने वाले पूज्य तपस्वी मुनिश्री निःस्पृह साधक थे । वस्त्र-पात्र-कामली आदि संयम के उपकरणों में कहीं टॉप टीप देखने को नहीं मिलेगी और जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों का पूरा-पूरा उपयोग करने की वृत्ति-प्रवृत्ति देखने को मिलेगी । नाम व प्रसिद्धि के व्यामोह से वे सदैव दूर ही रहते थे ।

दृढ़-प्रतिज्ञ

वि.सं. 2045 का वर्ष ! परम पूज्य **सौजन्यमूर्ति आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.** की शुभनिश्रा में पू. तपस्वी मुनिराजश्री आदि के साथ मेरा भी चातुर्मास पाली (राज.) में था । चातुर्मास दरम्यान प्रायः पर्युषण के पूर्व पू. तपस्वी मुनिराजश्री के वर्धमान तप की प्रायः 100 + 55 वीं लगभग ओली चल रही थी ! अचानक पू. मुनिराजश्री का स्वास्थ्य खराब हो गया । निदान करने पर पता चला कि उन्हें T.B. की बीमारी हो गई है । बाह्य उपचार चालू हुए । ड़ॉक्टरों की सलाह थी कि उन्हें फलों का उपयोग करना चाहिए । पूज्य मुनिश्री ने अपने जीवन में केले को छोड़कर सभी फलों का आजीवन त्याग कर दिया था । ड़ॉ. की सलाह थी कि ऐसी बीमारी में नियमपालन में कुछ छूट रखनी चाहिए । किंतु पूज्य मुनिश्री अपनी प्रतिज्ञा के पालन में अत्यंत दृढ़ थे । किसी भी संयोग में उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा का भंग नहीं होने दिया ।

आज छोटी-छोटी प्रतिज्ञाएँ लेने वाले भी अपने नियमों के साथ अनेक प्रकार की छूट ले लेते हैं । ऐसे व्यक्तियों के लिए पूज्य मुनिराजश्री का यह गुण परम आदर्शभूत है ।

आज्ञापालन का प्रेम

वि.सं. 2046 का वर्ष ! गोदन (राज.) निवासी कुंदनमलजी संघवी के अनेक प्रयत्नों के बाद पूज्य **मुनि श्री जयभद्रविजयजी** तथा पू. तपस्वी

मुनिश्री आदि के सान्निध्य में गोदन से जैसलमेर महातीर्थ के छ'री पालित संघ का आयोजन निश्चित हुआ ।

शिवगंज से एक शुभदिन मंगल मुहूर्त में **प.पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा.** के शुभाशीर्वाद पूर्वक पू. तपस्वी मुनिराजश्री के साथ मेरा भी विहार प्रारंभ हुआ । शिवगंज से विहार कर हम वांकली पहुँचे । उसी दिन जयपुर (राज.) निवासी पारसदासजी ढढ्ढा, पालीताणा से पूज्यपाद परम शासन प्रभावक सुविशाल गच्छाधिपति **आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** का पत्र लेकर वांकली आए ।

पत्र में पूज्यपाद गच्छाधिपतिश्री का **प.पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** के लिए आज्ञा-पत्र था, **''तपस्वी मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** तथा **मु. रत्नसेनविजयजी** गोदन से जैसलमेर संघ में निश्रा प्रदान हेतु जा रहे हैं उनके संघ की समाप्ति जोधपुर होने वाली है अतः थोड़ा कष्ट उठाकर भी तपस्वी **मुनि श्री तथा रत्नसेन वि.म.** जोधपुर से विहारकर जयपुर जायें और वहाँ जीर्णोद्धार हुए शिखरबद्ध मंदिर की प्रतिष्ठा में अपनी निश्रा प्रदान करें ।''

श्रीमान् पारसदासजी ढढ्ढा शिवगंज में बिराजमान **पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म.** की सम्मति लेकर वांकली आए और हम दोनों को जयपुर प्रतिष्ठा हेतु पधारने के लिए विनंति की ।

एक ओर गत चातुर्मास में हुई T.B. की बीमारी, गोदन से जैसलमेर होते जोधपुर का 51 दिन का पैदल संघ, उस संघ में रोज 18-20 कि.मी. का लंबा विहार, जोधपुर से जयपुर लगभग 350 कि.मी. । चैत्र मास की भयंकर गर्मी के दिन ! इन सब प्रतिकूल संयोगों की अवगणना करके भी पूज्य मुनिश्री, पूज्यपाद गच्छाधिपतिश्रीजी के आदेश-आज्ञा को शिरोधार्य करने के लिए तत्क्षण तैयार हो गए ।

मुझे लगा...इतनी बड़ी उम्र में भी, प्रतिकूल संयोगों में भी पूज्य मुनिश्री का गुर्वाज्ञा-पालन का प्रेम कितना है !

हम दोनों संघ की समाप्ति के बाद वै.सु. 6 की प्रतिष्ठा हेतु जोधपुर से जयपुर गए । प्रतिष्ठा हेतु जयपुर संघ में अपूर्व उत्साह था । प्रभु प्रतिष्ठा, तपागच्छ जैन उपाश्रय का उद्घाटन, पूज्य गुरुदेवश्री की श्रद्धांजलि-

संस्मरणिका आदि का विमोचन इत्यादि कार्यक्रम बहुत ही शानदार ढ़ंग से संपन्न हुए । इधर चातुर्मास हेतु जयपुर संघ का भी खूब आग्रह था...तो दूसरी ओर चातुर्मास कराने के लिए पिंड़वाड़ा संघ का भी खूब उत्साह-उल्लास था ।

आखिर **पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** का आज्ञापत्र मिला जिसमें पिंड़वाड़ा में चातुर्मास करने की आज्ञा फरमाई ! जयपुर से पिंड़वाड़ा तक लगभग 550-600 कि.मी. का विहार था ।

प्रतिकूल संयोगों में भी पूज्य मुनिश्री ने पूज्यपाद गच्छाधिपतिश्री की आज्ञा शिरोधार्य की । और भयंकर गर्मी के दिनों में विहार कर हम पिंड़वाड़ा पहुँचे । पाली चातुर्मास में टी.बी. की बीमारी होने के बाद भी पूज्य मुनिश्री के साथ उस वर्ष 1800 K.m. का लंबा विहार रहा ।

कर्तव्य-पालन में अपूर्व-जागृति

तपस्वी पूज्य मुनिराजश्री की दिनचर्या में प्रतिदिन अमुक स्वाध्याय जाप, कायोत्सर्ग, तप आदि निश्चित था । फिर भी संघीय स्तर पर जब कभी भी सामुदायिक अनुष्ठान, सामुदायिक चैत्यवंदन, मांगलिक-श्रवण, संघ प्रयाण, संध्या भक्ति, किसी तपस्वी आदि के घर-पगले आदि का कार्यक्रम हो तो वे अपनी दिनचर्या में इस ढ़ंग से Adjustment कर देते...और निर्धारित कार्यक्रम में लगभग ठीक समय पर उपस्थित हो जाते ।

अपने निमित्त दूसरों को कष्ट न पहुँचे अथवा अपने कारण दूसरों का समय व्यर्थ ही नष्ट न हो, इस बात का वे पूरा-पूरा ख्याल रखते थे ।

तप का अपूर्व प्रेम

वि.सं. 2046 का वर्ष ।

पूज्य तपस्वी मुनिश्री के साथ मेरा चातुर्मास भी पिंड़वाड़ा में था । चातुर्मास में नमस्कार-महामंत्र के नौ एकासने आदि अनेकविध सामुदायिक अनुष्ठान संपन्न हुए । इन सबके साथ मैंने सामुदायिक सिद्धितप के लिए प्रेरणा की । संघ में कुल 33 सिद्धितप हुए । संघ के तपोमय वातावरण से उल्लसित बने पूज्य तपस्वी मुनिराजश्री ने भी सिद्धितप की आराधना प्रारंभ कर दी और बहुत ही उल्लास के साथ सिद्धि तप की आराधना पूर्ण की ।

सिद्धि तप पूर्ण होने के लगभग 1 सप्ताह भर बाद ही उन्होंने वर्धमान तप की ओली चालू कर दी । फिर स्वास्थ्य की प्रतिकूलता के कारण उन्हें वह ओली छोड़नी पड़ी परंतु ओली छोड़ने का उन्हें बहुत दु:ख था ।

40 वर्ष के उनके संयम पर्याय में किए गये तप की ओर जरा नजर करें....दिल आश्चर्य से भर जाएगा–

40 वर्ष के कुल दिन	14616
40 वर्ष में कुल उपवास	1097
40 वर्ष में कुल आयंबिल	8830
40 वर्ष में कुल एकासने	1353
40 वर्ष में बियासने	2598
40 वर्ष में नवकारसी	738

पूज्य तपस्वी श्री ने अपने जीवन में वर्धमान तप के साथ सिद्धि तप, 1 वर्षीतप, वीश स्थानक तप, ज्ञान पंचमी तप की भी आराधना की थी । बादाम सिवाय समस्त मेवे का त्याग, केले सिवाय सभी फलों का त्याग व बहुत सी मिठाइयों के त्याग से पूज्य श्री का जीवन त्याग की साधना से ओतप्रोत रहा था ।

पूज्यश्री की वैयावच्च साधना

1) पूज्य मुनिराजश्री के संयम जीवन का पहला ही वर्ष था । पूज्यपाद प्रगुरुदेव पंन्यासजी भगवंत की आज्ञा से **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** का चातुर्मास वाव (गुज) में **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** के साथ हुआ । उस चातुर्मास में तपस्वी **मु. श्री विभाकरविजयजी** भी साथ में थे । **मु. श्री विभाकरविजयजी** का स्वास्थ्य बराबर नहीं रहता था । अपने अंतिम समय को जान, उन्होंने अनशन करने का निश्चय किया । **परमाराध्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** उस समय अहमदाबाद में चातुर्मास हेतु बिराजमान थे । पूज्यपादश्री द्वारा आज्ञापत्र आया कि **'मुनि श्री विभाकरविजयजी** की समाधि बनी रहे, तदनुसार उन्हें 1-1 उपवास का पच्चक्खाण करावें । तप से भी समाधि–भाव मुख्य है, उसका ध्यान रखना ।'

पूज्यपादश्री का पत्र मिलते ही **मु. श्री विभाकरविजयजी** ने 1-1 उपवास का पच्चक्खाण चालू किया । ठीक 28 उपवास के बाद मु. श्री ने अत्यंत ही समाधि पूर्वक अपने नश्वर देह का त्याग किया ।

अनशनव्रतधारी **पू.मु. श्री विभाकरविजयजी म.** को समाधि प्रदान करने में नूतनदीक्षित **पू. मुनि श्री जिनसेनविजयजी म.** का बहुत बड़ा भाग था । नूतन मुनि ग्लान-मुनि की सेवा में सतत खड़े पाँव हाजिर रहते थे ।

दीक्षा के पहले ही वर्ष में ग्लान व आराधक आत्मा की समाधि में सहायक बनकर जबरदस्त पुण्य उपार्जित किया ।

2) वि.सं. 2016 में आयुर्वेदिक औषधि के Reaction के कारण पू. बाल **मुनि श्री धुरंधरविजयजी म.** के दोनों पाँव कमजोर हो गए । बाल मुनि का चलना-फिरना बंद हो गया । उस समय **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** ने उनकी अपूर्व सेवा-भक्ति की । कंधे पर उठाकर प्रभु दर्शन के लिए ले जाना, मल-मूत्र आदि करवाना, आदि-आदि द्वारा उन्होंने बाल मुनि को थोड़ा भी कष्ट न पड़े, इस प्रकार सुंदर वैयावच्च की ।

3) वि. सं. 2027में 28 वर्ष से निरंतर एकांतर उपवास और एकासना करनेवाले महातपस्वी **पू.मु. श्री महाभद्रविजयजी म.** के साथ **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी** का चातुर्मास लुणावा में हुआ । इस चातुर्मास में व्याख्यान की जवाबदारी को वहन करते हुए **पू.मु. श्री महाभद्रविजयजी** की खूब सेवा भक्ति व वैयावच्च की । वि.सं. 2028 कार्तिक वदी 13 के दिन **मु. श्री महाभद्रविजयजी म.** अत्यंत ही समाधि पूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

4) **पूज्य मुनिराज श्री जिनसेनविजयजी म.सा.** वि.सं. 2028 से सतत **प.पू. अध्यात्मयोगी पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के सान्निध्य में रहे । वर्धमान तप की लंबी-लंबी ओली की आराधना-तपश्चर्या के साथ वे पूज्य उपकारी गुरुदेव की अपूर्व सेवाभक्ति करने लगे । अपनी अनुकूलता व सुख-सुविधा व इच्छाओं को गौण करके भी पूज्य मुनिराजश्री, पूज्यपाद पंन्यासजी भगवंत में इतने एकमेक हो गए कि उन्हें अपने स्वतंत्र अस्तित्व का कभी विचार ही नहीं आया ।

पिछले वर्षों में पूज्यपाद **गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का शारीरिक स्वास्थ्य अनुकूल नहीं था, उस स्थिति में भी पूज्य मुनिश्री वर्धमान तप की लंबी-लंबी ओलियों के साथ सेवा में सदैव खड़े रहते थे। रात हो या दिन...वे पूज्यपाद पंन्यासजी भगवंत को शाता देने में सतत उद्यमशील रहते थे।

इस प्रकार वि. 2028 से 2036 तक उन्होंने अपने परम उपकारी प्रगुरुदेवश्री की अपूर्व सेवाभक्ति और वैयावच्च की।

5) दीर्घसंयमी **पू.मु. श्री पुण्योदयविजयजी म.सा.** के लघु बंधु ज्योतिष मार्तंड़ **पू.मु. श्री विमलप्रभविजयजी म.सा.** को वायु की भयंकर तकलीफ थी, चलना-फिरना बंद हो गया था। ऐसी स्थिति में उन्हें सहायक मुनि की जरुरत थी।

पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म. का उनके साथ सांसारिक रिश्ता भी था। सेवा के इस अवसर को देख **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म., पू. पुण्योदयविजयजी म.** के पास पहुँच गए और वि.सं. 2039 से 2044 तक **पू. विमलप्रभविजयजी म.** की अखंड सेवा में रहे।

पू. मु. श्री विमलप्रभविजयजी म. भी उच्च कोटि के आराधक थे। संवत्सरी जैसे दिन में एकासना करना भी कठिन था, फिर भी उन्होंने ज्योतिष बल से निकट भविष्य में अपने आयुष्य की पूर्णाहुति जानकर 1-1 उपवास के पच्चक्खाण द्वारा अनशन व्रत को स्वीकार किया। ठीक 22 उपवास के बाद उन्होंने अत्यंत ही समाधिपूर्वक अपने देह का त्याग किया। उनके अंतिम समय तक **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** उनकी सेवा में उपस्थित रहे। एक आराधक आत्मा को शांति व समाधि प्रदान करने का उन्हें परम सौभाग्य प्राप्त हुआ।

6) वि.सं. 2049में **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.**का चातुर्मास पोरबंदर में पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरीश्वरजी म.सा. के साथ था। उस चातुर्मास दरम्यान प.पू.आचार्य भगवंत का स्वास्थ्य खूब खराब हो गया...परंतु पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म. ने उनकी खूब सेवाभक्ति की।

इस प्रकार **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.**ने अनेक ग्लान व वयोवृद्ध महात्माओं की सेवाभक्ति कर अपने संयम जीवन की साधना में चार चांद लगाए थे।

वैयावच्च एक अभ्यंतर तप है, जो आत्मा का अप्रतिपाती गुण है ।

पूज्य मुनिराजश्री ने इस गुण को अपने जीवन में अस्थि-मज्जावत् आत्मसात् किया ।

अभ्यंतर तप की इस उत्कृष्ट साधना के साथ-साथ पू. पंन्यास श्री जिनसेनविजयजी म. की बाह्य तप की साधना भी कोई कम नहीं थी ।

वर्धमान तप की 100-100 ओली दो बार पूरी करना, यह इस युग की एक विरल घटना ही है ।

वर्तमान श्रमण समुदाय में वर्धमान तप की दो बार 100 ओली पूर्ण करने का सौभाग्य तपस्वी सम्राट् **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय राजतिलकसूरीश्वरजी म.सा.** तथा तपस्वी **पू.मु. श्री दिव्यानंदविजयजी म.** को प्राप्त हुआ है । **पूज्य पंन्यास श्री जिनसेनविजयजी म.** ने इस कड़ी में तीसरा स्थान प्राप्त किया है ।

साध्वी समुदाय में **सा. श्री हंसकीर्तिश्रीजी** ने वर्धमान तप की तीन बार 100 ओली पूर्ण की है ।

'वर्धमान तप' की 100 ओली में कुल 5050 आयंबिल व 100 उपवास आते हैं । इन्द्रियजय का अमोघ शस्त्र यह वर्धमान तप है । एक बार 100 ओली पूर्ण करनेवाले तो अनेक महात्मा हैं, परंतु दूसरी बार 100 ओली करनेवाले तपस्वी विरले ही हैं । पहली बार 100 ओली पूर्णकर सिर्फ 5 दिन के पारणे कर पुनः वर्धमान तप का पाया डालकर 100 ओली के शिखर तक पहुँचने वाले **पूज्य तपस्वी पंन्यासप्रवर श्री जिनसेनविजयजी म.** का जितना गुणगान करें, उतना कम है ।

इस वर्धमान तप की आराधना साधना के साथ उन्होंने अपने जीवन में बीस स्थानक तप, सिद्धितप, वर्षीतप जैसी भी तपश्चर्याएँ की हैं ।

उन्होंने अपने 52 वर्ष के दीक्षा पर्याय में 1203 उपवास, 11753 आयंबिल, 1494 एकासने तथा 3330 बियासने किए थे ।

वि.सं. 2053 में वैशाख सुदी-6 के दिन मांडवी–कच्छ में संघ के अग्रणी हरिभाई की दीक्षा हुई । उनके नामकरण के समय उनके गुरु के रुप में **मु.श्री जिनसेनविजयजी** का नाम घोषित किया गया । दीक्षा के पूर्व हरिभाई को अपने गुरुदेव का कोई परिचय नहीं था ।

फिर भी तपस्वी मु.श्री के शक्तिपात से अशक्त महात्मा ने भी वर्धमान तप की 100 + 25 ओलियाँ कर ली थी ।

अंतिम–आराधना

जन्म के साथ मृत्यु जुड़ी हुई हैं-सर्जन के साथ विनाश जुड़ा हुआ हैं, परंतु जो समाधि द्वारा जीवन की समाप्ति करते हैं, उनकी मृत्यु भी अनुमोदनीय हो जाती है ।

वि.सं. 2066 में उनका चातुर्मास गिरिराज की धन्यधरा-पालीताणा में **पूं.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में था । चातुर्मास दरम्यान उन्होंने वर्धमान तप की 48 वीं ओली पूर्ण की । ओली के पारणे के बाद 14-15 दिन तक हिचकी की शिकायत रही, फिर थोडी राहत हुई तो उन्होंने 49 वीं ओली चालू कर दी । 8 दिन बाद कमजोरी बढ़ जाने से भादो सुदी-3 के दिन पुनः पारणा कराया गया ।

भादो सुदी-4 संवत्सरी महापर्व के दिन उन्होंने उपवास किया । ध्यानपूर्वक बारसा सूत्र का श्रवण भी किया । शांति से शाम को संवत्सरी प्रतिक्रमण किया । रात्रि में 1.30 बजे उठ गए और बोले, ``मुझे प्रतिक्रमण कराओ ।'' फिर प्रतिक्रमण किया । प्रातः पडिलेहण के बाद मंदिरदर्शन करके आए ।

फिर पच्चक्खाण पारने के लिए उन्हें कहा गया । उसी समय तीन बार हिचकी आई और ठीक 7.27 बजे नवकार महामंत्र का श्रवण करते हुए 52 वर्ष के अपने दीर्घ संयम धर्म का पालन करते हुए 83 वर्ष की उम्र में भादो सुदी-5 के दिन वि.सं. 2066 दि. 12-9-2010 के दिन कालधर्म को प्राप्त हुए ।

दूसरे दिन जरीयन की पालखी में उनकी अंतिम यात्रा निकली ।

तप-त्याग और संयम की निर्मल साधना द्वारा स्व-पर का श्रेयः साधने वाले महातपस्वी परम उपकारी पूज्यश्री के पावन चरणों में कोटि कोटि वंदना ।

तपस्वीरत्न पू. आ. श्रीमद् विजय मल्लिषेणसूरि म.

दीक्षा
वि.सं.2016
माघ शुक्ला-10

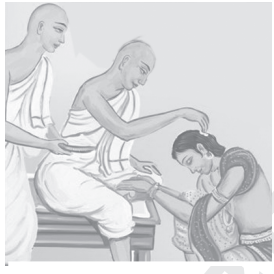

कालधर्म
वि.सं.2057
आसो सुदी-3

दीक्षापर्याय 41 वर्ष

राजस्थान प्रांत के सिरोही जिले में लास-कैलाशनगर गाँव में भीकमचंदजी साकलचंदजी की धर्मपत्नी ऊजीबाई ने वि.सं. 1990 कार्तिक कृष्णा 9 दि. 14-10-1933 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया मगनभाई ।

माता-पिता की ओर से बचपन से ही मगनभाई को धर्म-संस्कार प्राप्त हुए ।

नौ वर्ष की उम्र में ही मगन को नवपद ओली करने का मन हो गया और पुरुषार्थ कर नौ आयंबिल कर दिए । मात्र 13 वर्ष की उम्र में मगनभाई ने स्कूल छोड दी और धंधे में लग गये ।

दिशा-परिवर्तन

मुंबई में सट्टा बाजार में एक बार धंधे में बहुत बडा नुकसान हो गया । वहाँ से धंधे के लिए मगनभाई मद्रास गए । वि.सं. 2010 में **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय लक्ष्मणसूरिजी म.सा.** की निश्रा में मगनभाई उपधान तप में जुड़े । प्रवचनश्रवण से वैराग्य भाव दृढ हुआ । मोक्षमाला के साथ दीक्षा का संकल्प किया परंतु भवितव्यता कुछ और थी संयोगवश चालू उपधान मे से निकलना पडा ।

वि.सं. 2011 में पुनः मुंबई आकर हिम्मतभाई बेडावालो के वहाँ नौकरी करने लगे । वहाँ एक दिन फोर्ट में बिराजमान **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के दर्शन हुए । प्रथम दर्शन में ही हृदय में अद्‌भुत आकर्षण हुआ और मनोमन उन्हीं महापुरुष के चरणों में जीवन समर्पण करने का संकल्प कर लिया ।

वि.सं. 2013 में **पूज्य पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की तारक निश्रा में शंखेश्वर में हिम्मतभाई की ओर से उपधान तप का आयोजन हुआ । इस उपधान तप में 500 से भी अधिक आराधक जुड़े ।

इस उपधान की सारी व्यवस्था मणियार बापा राधनपुरवाले तथा लालचंदजी बेड़ावाले सँभालते थे तथा ऑफिस की जवाबदारी मगनभाई सँभालते थे ।

उस उपधान दरम्यान पूज्य पंन्यासजी भगवंत के विशेष संपर्क व परिचय से मगनभाई का वैराग्य तीव्र बना । वि.सं. 2014 में मगनभाई ने वर्षीतप किया ।

वि.सं. 2015 में पूज्य पंन्यासजी म.सा. का जामनगर में चातुर्मास था । उस चातुर्मास दरम्यान मगनभाई की दीक्षा का मुहूर्त तय हुआ । दीक्षा घर आँगण में ही कराने की भावना होने से माघ शुक्ला-10, संवत् 2016 का मुहूर्त दिया गया ।

एक बार पूज्यश्री ने मगनभाई को पूछा, ``किसका शिष्य बनना है ?''

मगनभाई का एक ही जवाब था । ***''आपके चरणों में जीवन समर्पित किया है, आपको जो उचित लगे, आप कर सकोगे !''***

वि.सं. 2016 महा सुदी-10 के शुभ दिन **पू.पं. श्री मानविजयजी म.सा.** के वरद हस्तों से मगनभाई की दीक्षा हुई । वे **पू.मुनि श्री हर्षविजयजी म.सा.** के शिष्य **मुनि श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** बने ।

विशिष्ट आराधना

दीक्षा के बाद उन्हें वैयावच्च गुण का ऐसा व्यसन लगा कि जिसके फलस्वरूप उन्हें अनेक वृद्ध व ग्लान महात्माओं की सेवा का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ ।

खूब प्रसन्नता व उत्साह-उल्लासपूर्वक अपने जीवन में अनेक महात्माओं की सेवा की ।

सुदीर्घ संयमी **पू. भावविजयजी म.सा., पू.मुनि श्री कैलाशप्रभ-विजयजी म.सा., पू.मुनि श्री जयमंगलविजयजी म.सा., पू. मुनिश्री ललितविजयजी म.** आदि अनेक महात्माओं की वर्षों तक सेवा-शुश्रूषा कर अपूर्व कर्मनिर्जरा कर अपने जीवन को सफल बनाया ।

माता-पिता को समाधि-प्रदान

दीक्षा के बाद उनके माता-पिता का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था । वि.सं. 2017 में **पू. मुनि श्री हर्षविजयजी म.सा.** के साथ **पू. मल्लिषेणविजयजी म.सा.** का भी चातुर्मास कैलाशनगर में हुआ । चातुर्मास दरम्यान उन्होंने मासक्षमण किया ।

माताजी को खूब समाधि दी । चातुर्मास बाद विहार के पूर्व माँ ने उन्हें मांगलिक गुड़ बहोराया । मुनिश्री विहार कर 9 कि.मी. गए और इधर माँ का समाधिपूर्वक स्वर्गवास हुआ ।

वि.सं. 2022 में पुनः उनका कैलाशनगर में चातुर्मास हुआ । चातुर्मास बाद उनके पिताश्री ने उपधान भी कराया । उसके बाद जेठ मास में उनके सांसारिक पिताश्री का भी समाधिपूर्वक कालधर्म हो गया ।

तप-साधना

वि.सं. 2045 में अपनी जन्मभूमि कैलाशनगर में चातुर्मास किया । उस चातुर्मास में उन्हें भी तपधर्म का ऐसा रंग लगा कि उन्होंने सारी जवाबदारियों के साथ सिद्धितप की तपश्चर्या की ।

वि.सं. 2047 में वांकली चातुर्मास में 108 अट्ठम प्रारंभ किए, जो वि.सं. 2049 में पूर्ण हुए ।

वि.सं. 2050 में बीस स्थानक की आराधना अट्ठम से चालू की और कुछ ही वर्षों में 400 अट्ठम पूर्ण किए ।

वि.सं. 2050 दाँतराई चातुर्मास में 18 उपवास किए ।

वि.सं. 2051 में माँडवला चातुर्मास में 16 उपवास किए ।

वि.सं. 2052 रामसीन चातुर्मास में 16 उपवास किए ।

वि.सं. 2053 में वाँकली चातुर्मास प्रवेश के साथ मासक्षमण और बाद में 15 उपवास भी किए । तप के साथ प्रवचन आदि की जवाबदारी भी सँभाली ।

बडे भाई भाभी-भतीजी की दीक्षा

उनके सांसारिक ज्येष्ठ बंधु फूलचंदभाई भी अच्छे आराधक थे । **पू. मल्लिषेणविजयजी म.सा.** की प्रेरणा से वे तथा उनकी पत्नी व पुत्री भी दीक्षा के लिए तैयार हो गये ।

कैलाशनगर में वि.सं. 2050 महा सुदी-8 के शुभ दिन उनकी भागवती दीक्षा हुई और वे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनि श्री धन्यसेनविजयजी म.सा.** बने ।

वि.सं. 2054 में हालार तीर्थ में **पू. आचार्य श्री राजतिलकसूरिजी म.सा.** आदि की निश्रा में आयोजित प्रतिष्ठा अंजनशलाका प्रसंग पर 8 भागवती दीक्षाएँ हुईं । उनमें सूरत निवासी मोहनभाई सवचंदभाई की भी दीक्षा हुई । वे **पू.मुनि श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** के शिष्य **मुनि श्री मुक्तिसेनविजयजी म.सा.** बने ।

आचार्य-पदवी

वि.सं. 2054 में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में जामनगर में चातुर्मास प्रवेश के शुभ दिन अ.सु. 10 को **पू. मुनि श्री जिनसेनविजयजी म.सा.** तथा **पू. मुनि श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** के भगवती सूत्र के योगोद्वहन प्रारंभ हुए । योगोद्वहन दरम्यान **पू. मुनि श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** अट्ठम के पारणे अट्ठम करते थे, उन्होंने मासक्षमण भी किया ।

जामनगर में मगसर सुद-10, वि.सं. 2055, दि. 6-12-1998 रविवार के शुभ दिन उनकी गणि व पंन्यास पदवी हुई और मगसर वदी-3 वि.सं.

2055 अर्थात् मात्र 8 दिन के बाद **पू.पं. श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** को आचार्यपद प्रदान किया गया ।

समाधि-मृत्यु

आचार्यपदवी के बाद **पू. श्री मल्लिषेणसूरिजी म.सा.** का पहला चातुर्मास गिरिराज की छत्रछाया में हुआ ।

वि.सं. 2057 का चातुर्मास सावरकुंडला में किया । साथ में **पू.मुनि श्री मनमोहनविजयजी म.सा.** तथा **पू. धन्यसेनविजयजी म.सा.** थे ।

चातुर्मास दरम्यान प्रवचन की जवाबदारी के साथ उन्होंने मास-क्षमण तथा **मु. धन्यसेनविजयजी म.सा.** ने मासक्षमण भी किया ।

प्रथम आसो सुदी-2 + 3 के दिन अचानक ही हार्ट का हमला आया । उस समय वे नवकारवाली से नवकार मंत्र का जाप कर रहे थे, उसी समय **पू.मुनि श्री मनमोहनविजयजी म.सा.** गोचरी लेकर पधारे । उनको झुका हुआ देखा । उसी समय नवकार सुनाना चालू किया और चंदक्षणों में ही उन्होंने अत्यंत समाधि के साथ नश्वरदेह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया ।

6-6 मासक्षमण, 400 अट्ठम व अन्य विविध तप के तपस्वी पूज्यश्री को कोटि कोटि वंदना ।

प्रशिष्य

तपस्वी पू. मुनि श्री अजितसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2021
माघ शुक्ला-7

कालधर्म
वि.सं.2046
चैत्री सुदी-9

दीक्षापर्याय 25 वर्ष

राजस्थान प्रांत के सिरोही जिले के मालवाड़ा गाँव में सुश्रावक धीरजीभाई की धर्मपत्नी कपूरीबेन ने वि.सं. 1964 के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया । जिनका नाम रखा गया लवजीभाई ।

बचपन से ही धर्म की तीव्र रुचि । सद्गुरु के समागम से संसार से विरक्त बने लवजीभाई ने दीक्षा के लिए खूब प्रयास किया ।

आखिर अंतराय दूर हुए । वि.सं. 2021 माघ शुक्ला-7 के शुभ दिन डूँगरपूर-मेवाड़ में **पू.मुनि श्री जिनप्रभविजयजी म.सा.** के वरद हस्तों से लवजीभाई की 57 वर्ष की उम्र में भागवती दीक्षा हुई । वे **पू. जिनप्रभविजयजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनि श्री अजितसेनविजयजी म.सा.** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद नियमित एकासना आदि संयम धर्म की आराधना-साधना करने लगे ।

वि.सं. 2046 चैत्र सुदी-9 के शुभ दिन डीसा में अत्यंत ही समाधि के साथ कालधर्म को प्राप्त हुए ।

प्रशिष्य

अल्पायुषी पू.मु. श्री कलाभूषणविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2022
जेठ वदी-2

कालधर्म
वि.सं.2025

दीक्षापर्याय 3 वर्ष

सिरोही (राज.) जिले के गोहिली गांव में सुश्रावक चिमनाजी की धर्मपत्नी केशरीबेन ने वि. सं. 1962 आसो वदी-5 के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम कपूरचंद रखा गया ।

सद्गुरु के समागम के फलस्वरूप संसार से विरक्त बने कपूरचंदभाई ने 60 वर्ष की प्रौढ़वय में पालीताणा में वि.सं. 2022 जेठ वदी-2 के शुभ दिन भागवती-दीक्षा अंगीकार की और वे **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के शिष्य **पू.मु. श्री कैलाशप्रभविजयजी म.सा.** के शिष्य **मु. श्री कलाभूषणविजयजी म.** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद संयम धर्म की निर्मल आराधना करते हुए । वि.सं. 2025 के शुभ दिन सादडी में नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधि के साथ कालधर्म को प्राप्त हुए ।

9

प्रशिष्य

अप्रमत्त साधक पू. मुनि श्री सोमप्रभविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2029
वैशाख वदी-6

कालधर्म
वि.सं.2062
जेठ सुदी-15

दीक्षापर्याय 33 वर्ष

उत्तर गुजरात के बनासकाँठा जिले में दिओदर तालुका में पालड़ी गाँव में वारैया गगलदास मगनलाल की धर्मपत्नी सुंदरबेन ने छह पुत्रों और एक पुत्रीरत्न को जन्म दिया, जिनमें सबसे बड़े **शांतिभाई** का जन्म वि.सं. 1985 आसो वदी-10 के शुभ दिन ननिहाल के मोलधर गाँव में हुआ था।

शांतिभाई को माता-पिता से धर्म के संस्कार प्राप्त हुए। यौवन वय प्राप्त होने पर लवाणा निवासी मोरखिया डायालाल मगनलाल की पुत्री वीजुबेन के साथ लग्नग्रंथि से जुड़े। फिर आसपास के गाँवों में छोटा-बड़ा व्यवसाय करने लगे।

पूर्व भव की आराधना-साधना के फलस्वरूप शांतिभाई का धर्मप्रेम बढ़ता गया। उन्हें एक पुत्र व एक पुत्री हुई।

मधुरभाषी **पू.मुनि श्री जिनप्रभविजयजी म.सा.** के प्रवचन श्रवण व समागम से हृदय में वैराग्य भाव पैदा हुआ।

इकलौता बेटा बाबू तैयार हो जाए तो उसे भी संयम मार्ग में जोड़ने की भावना से उसे **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के सान्निध्य में रखा, परंतु जब देखा कि पुत्र में संयम लेने की तीव्र भावना नहीं है, तो उन्होंने अब शीघ्र ही संयम लेने का निर्णय कर अपने माता-पिता से अनुज्ञा प्राप्त की और अपनी जन्म-भूमि पालड़ी में भव्य

अष्टाह्निक महोत्सव के साथ वि.सं. 2029 वैशाख वदी-6 के शुभ दिन **पू. मुनि श्री जिनप्रभविजयजी म.सा.** की निश्रा में भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे उनके शिष्य **पू. मुनि श्री सोमप्रभविजयजी म.सा.** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद कड़क आत्मानुशासन पूर्वक उन्होंने कई नियमों को आत्मसात् किया ।

उदा. :–

1. दीक्षाबाद नियमित एकासने का तप ।
2. वर्ष में 8 से 10 मास तक आयंबिल तप ।
3. प्रतिवर्ष नवपद की ओली ।
4. निर्दोष आहार-पानी की गवेषणा ।
5. लंबे लंबे विहारों में भी निर्दोष संयम चर्या ।
6. उपधि हेतु आदमी नहीं रखना ।
7. प्रतिदिन 5-6 घंटे तक जाप ।
8. प्रतिदिन मंदिर में देववंदन ।
9. नियमित स्वाध्याय ।
10. थोडा भी परिग्रह न रखना ।
11. सांसारिक बातचीत नहीं करना ।
12. संयम में दोष न लगे वैसी खूब सावधानी ।
13. जिज्ञासु को चारित्र की प्रेरणा ।

अप्रमत्त भाव में संयम की आराधना करते हुए वर्धमान तप की 93 ओली पूर्ण की ।

33 वर्ष का निर्मल संयम पालन कर वि.सं. 2062 जेठ सुदी-15 के दिन सूरत की ओर विहार दरम्यान रास्का नामक गाँव में अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

पापभीरु पू. मुनि श्री चारित्रप्रभविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2030
जेठ सुदी-10

कालधर्म
वि.सं.2057

दीक्षापर्याय 27 वर्ष

राजस्थान की वीरभूमि उदयपुर शहर में श्रेष्ठीश्री वरदीचंदजी की धर्मपत्नी मोहनकुँवरबेन ने वि.सं. 1976 जेठ वदी-13 के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम चोसरलाल रखा गया ।

बाल्यवय से ही धर्म के संस्कार प्राप्त हुए । लग्न-ग्रंथि से जुड़ने पर भी धर्मभावना में हानि नहीं हुई ।

पू. मुनि श्री जिनप्रभविजयजी म.सा. के उदयपुर चातुर्मास दरम्यान चोसरभाई की धर्मभावना वेगवती बनी ।

वि.सं. 2030 जेठ सुदी-10 के शुभ दिन चोसरभाई ने भागवती-दीक्षा अंगीकार की और वे **पू. मुनि श्री जिनप्रभविजयजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनि श्री चारित्रप्रभविजयजी म.सा.** बने ।

गुरुकुलवास में रहते हुए उन्होंने सेवा गुण को अपने जीवन में आत्मसात् किया था ।

उन्होंने अपने ज्येष्ठ गुरुबंधु **पू. अजितसेनविजयजी म.सा.** की वर्षों तक खूब सेवा-भक्ति की ।

अपने सुपुत्र **पू. मुनि श्री प्रेमप्रभविजयजी म.सा.** की भी खूब सेवा की ।

अंत में **पू. मुनि श्री विनयंधरविजयजी म.सा.** की शुभ निश्रा में 27 वर्ष के दीर्घ संयमजीवन का पालन कर वि. सं. 2057 में एक शुभ दिन अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए । धन्य संयमी ! धन्य साधना !

प्रशिष्य

मुनि श्री प्रेमप्रभविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2032
पौष वदी-13

कालधर्म
वि.सं.2057
पौष सुदी-4

दीक्षापर्याय 25 वर्ष

उदयपुर निवासी चौसरलाल की धर्मपत्नी रतनदेवी ने वि.सं. 2018 भादों सुदी-4 संवत्सरी के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक का नाम प्रमोद रखा गया।

पिताजी संयम के ही अभिलाषी होने से बचपन से ही धर्मसंस्कारों का सिंचन हुआ, जिसके फलस्वरूप पिताश्री की दीक्षा के दो वर्ष बाद वि.सं. 2032 पौष वदी-13 के शुभदिन बरलूट (राज.) में मात्र 14 वर्ष की लघु वय में प्रमोद ने दीक्षा अंगीकार की। उनका नाम **पू.मुनि श्री प्रेमप्रभविजयजी म.सा.** रखा गया और वे **पू. मुनि श्री चारित्रप्रभविजयजी म.सा.** के शिष्य बने।

पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय जिनप्रभसूरिजी म.सा. के काल-धर्म के बाद वे पिता मुनि के साथ एवं **पू. विनयंधरविजयजी म.सा.** की निश्रा में रहे !

वि.सं. 2057 पौष सुदी दूसरी चौथ के दिन अत्यंत ही समाधिपूर्वक सावरकुंडला में कालधर्म को प्राप्त हुए।

पू. मु. श्री मेरुप्रभविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2033
मार्गशीर्ष
शुक्ला-6

कालधर्म
वि.सं.2041
फाल्गुण
कृष्णा-2

दीक्षापर्याय 8 वर्ष

जालोर (राज.) की धन्यधरा पर सुश्रावक छगनलालजी की धर्मपत्नी उजीबेन ने वि.सं. 1965 माघ कृष्णा-5 के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक का नाम मांगीलाल रखा गया।

बचपन से ही धर्म में तीव्र रुचि थी। चारित्र के अंतराय के कारण दीक्षा की प्रबल भावना होने पर भी दीक्षा उदय में नहीं आई।

दृढ़ मनोबल और प्रबल पुरुषार्थ के फलस्वरूप वि.सं. 2033 मार्गशीर्ष शुक्ला-6 के शुभ दिन **पू.पं. श्री जिनप्रभविजयजी म.**के वरद हस्तों से दीक्षित हुए। उनका नाम **मेरुप्रभविजयजी** रखा गया। वे **पू.पं. श्री जिनप्रभविजयजी म.** के शिष्य बने। दीक्षा के बाद थोडे ही समय में पांव में फेक्चर हो गया परंतु संयम प्राप्ति का अपूर्व आनंद था।

8 वर्ष का संयम पर्याय पालन कर वि.सं. 2041 फाल्गुण कृष्णा-2 के दिन धानेरा (गु.) में अत्यंत ही समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए।

आज्ञापालक पू. मुनि श्री वीरसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2036
वैशाख सुदी-13

कालधर्म
वि.सं.2055
वैशाख वदी-9

दीक्षापर्याय 19 वर्ष

अध्यात्मयोगी पूज्यपाद पंन्यासप्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के वरदहस्तों से (कालधर्म के एक दिन पूर्व) भागवती दीक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त करनेवाले **पू. मुनि श्री वीरसेनविजयजी म.सा.** का जीवन खूब प्रेरणादायी है ।

उनका जन्म हालार की धन्यधरा पर छोटे से सिंगच गाँव में वि.सं. 1978, श्रावण वदी-2 के शुभ दिन हुआ था । उनकी माता का नाम जमनाबेन तथा पिता का नाम मेघजीभाई था । उनका सांसारिक नाम वेलजीभाई था ।

13-14 वर्ष की छोटी उम्र में व्यवसाय के लिए भायखला-मुंबई गए । वहाँ चातुर्मास में पधारने वाले महात्माओं के सत्संग में व्याख्यान-श्रवण से वेलजीभाई की धर्मभावना बढ़ने लगी, इसके साथ ही धर्म के संस्कारों का सिंचन होने लगा ।

हालार-रत्न **स्व. पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरिजी म.सा.** द्वारा आलेखित साहित्य का हालारी-प्रजा में प्रचार-प्रसार करने लगे । हालारी प्रजा को धर्माभिमुख बनाने की पवित्र भावना से **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरिजी म.सा.** के निकट परिचय में आए, जिसके फलस्वरूप उनकी अंतरात्मा में वैराग्य भाव का बीजारोपण हुआ । दीक्षा की प्रबल भावना होने पर भी लग्न-ग्रंथि से जुड़े होने से पारिवारिक जवाबदारियों का वहन करने के लिए उन्हें अनिच्छा से संसार में रहना पड़ा, परंतु उनके

अन्तर्मन में तो संयम की ही तीव्र अभिलाषा थी, आखिर उनकी भावना साकार बनी । 58 वर्ष की प्रौढ़वय में पाटण में वि.सं. 2036, वैशाख सुदी-13 के शुभ दिन **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कनकचंद्रसूरिजी म.सा.** के वरद हस्तों से रजोहरण प्राप्त किया और स्व. पूज्यपाद पंन्यासजी भगवंत का भी आशीर्वाद प्राप्त किया ।

उनकी दीक्षा के दूसरे ही दिन पू. पंन्यासजी म. का कालधर्म हो गया, मानो उनकी दीक्षा की ही प्रतीक्षा थी । एक महान् योगी पुरुष के वरद हस्तों से दीक्षाप्राप्ति का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

दीक्षा के बाद चार प्रकरण, तीन भाष्य, कर्मग्रंथ अर्थ सहित किए । फिर संस्कृत दो बुक कर संस्कृत ग्रंथों का वाचन कर उन पदार्थों को जीवन में आत्मसात् करने लगे । स्वाध्याय के साथ वर्धमान तप की 89 ओली, वीस-स्थानक तप तथा नवकार का 1 करोड़ का जाप भी किया ।

विनय-वैयावच्च आदि गुणों के साथ उनका मुख्य गुण था आज्ञा-पालन ।

बड़ी उम्र में दीक्षा लेने पर भी गुर्वाज्ञापालन में उनकी खूब तत्परता थी ।

गुरु को हृदय में बसाने के लिए हृदय में गुरु के प्रति आदरभाव चाहिए, परंतु गुरु के हृदय में बसने के लिए तो अपनी समस्त इच्छाओं को गौण कर 'गुर्वाज्ञा' को ही प्रधानता देनी होती है ।

पू. वीरसेनविजयजी म.सा. ने अपनी इच्छाओं को गौण कर दिया था । जब भी वडिलों ने आज्ञा की, कुछ भी विचार किए बिना उसका स्वीकार ही किया था ।

एक बार वे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के साथ हालार में विराजमान थे ।

पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरिजी म.सा. मारवाड में शंखेश्वर होते जामनगर पधार रहे थे । वे दो ही महात्मा होने से बीच मार्ग में गोचरी-पानी में तकलीफ पड़ सकती थी, अतः **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** ने **पू. वीरसेनविजयजी म.सा.** को कहा, ``कैसे व्यवस्था करेंगे ?'' तुरंत ही **पू. वीरसेनविजयजी म.सा.** ने कहा, ``आप जैसी आज्ञा करेंगे

मैं तैयार हूँ'' और दूसरे ही दिन **पू. वीरसेनविजयजी म.सा.** आदि दो महात्मा जामनगर से 18 दिनों में शंखेश्वर पहुँचे और वहाँ पहुँच कर वहाँ से पुनः दूसरे ही दिन विहार कर पू. आचार्य भगवंत के साथ जामनगर आए।

वि.सं. 2043 में सुरेन्द्रनगर तथा वि.सं. 2049 में गिरधरनगर अहमदाबाद में वे मेरे साथ चातुर्मास थे। वे मेरे से उम्र में काफी बड़े थे, फिर भी उनकी नम्रता, वैयावच्च व औचित्यपालन में वे कभी नहीं चूकते थे।

विहार-गोचरी-पानी, आराधना-अनुष्ठान आदि में खूब सहायक बनते थे। उनमें लेश भी अहंभाव या बड़प्पन का भाव नहीं था। बड़ी उम्र में भी वे मेरे साथ लंबे-लंबे विहार करते थे।

पू. महासेनविजयजी म.सा. के साथ वे हालार में भी खूब विचरे। अनेक को उन्होंने धर्म में जोड़ा।

महानिशीथ तक के योगोद्वहन कर उपधान आदि की क्रियाओं में भी खूब सहायक बनते थे।

वि.सं. 2055 वैशाख वदी-8 के दिन उन्हें आयंबिल था। वे **पू.पं. वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में आराधना धाम में थे। मोटा मांढा जिनालय दर्शन व अपनी बहन की समाधि के लिए मोटा मांढा जाने की भावना व्यक्त की, पू. पंन्यासजी म. ने तुरंत अनुमति दी।

पू. मुनि श्री जयधर्मविजयजी म.सा. के साथ वै.व.-9 को विहार किया। विहार दरम्यान **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरिजी म.सा.**की पुण्यतिथि नजदीक के दिनों में होने से उनके गुणों का स्मरण व बातचीत कर रहे थे।

आधा मार्ग पार होने पर अचानक उन्हें ठोकर लगी और वे गिर पड़े, **पू.मुनि श्री जयधर्मविजयजी म.सा.** के मुख से नवकार सुनते वहीं कालधर्म को प्राप्त हुए। 77 वर्ष की उम्र में 19 वर्ष का संयम पर्याय का पालन कर परम समाधिपूर्वक परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया। धन्य हो समाधिमग्न महात्मा को।

समाधि साधक पू. मुनि श्री पुण्यसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2043
जेठ सुदी-4

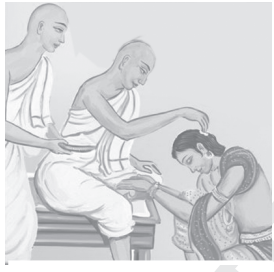

कालधर्म
वि.सं.2049
जेठ वदी-1

दीक्षापर्याय 6 वर्ष

गुजरात-कच्छ की धन्य धरा पर वाँकी में वि.सं. 1974, भादो सुदी-3 के शुभ दिन देवशीभाई की धर्मपत्नी जीवीबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम प्रेमजी रखा गया ।

व्यावहारिक शिक्षण की प्राप्ति के बाद प्रेमजीभाई व्यवसाय के लिए कानपुर (U.P.) गए । वहाँ न्याय-नीति पूर्वक व्यवसाय करते थे । गाँधीवादी विचारधारा के कारण वे राजनीति में रस लेने लगे और खादी के वस्त्र पहिनने लगे । वे अपने गाँव वाँकी में 15 वर्ष तक सरपंच भी रहे ।

मूल स्थानकवासी परंपरा में पैदा होने से स्थानकवासी संघ में 15 वर्ष तक प्रमुख के पद पर भी रहे ।

अपने परिवार को कच्छ में रखकर जब वे व्यवसाय हेतु मुंबई रहे तब रुम-पार्टनर के रूप में कल्याणमित्र केशुभाई और माणेकभाई का संपर्क हुआ ।

कुछ समय बाद केशुभाई की भागवती दीक्षा हो गई और वे **पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के शिष्य **मुनि श्री कुंदकुंदविजयजी म.सा.** बने ।

कल्याणमित्र के तौर पर **मुनि श्री कुंदकुंदविजयजी म.सा.** के साथ प्रेमजीभाई का निरंतर संपर्क बना रहा, जिसके फलस्वरूप तर्क, युक्ति

और आगम से मूर्तिपूजा की सत्यता का उन्हें सत्यबोध हुआ । जिसके फल-स्वरूप स्थानकवासी परंपरा को त्याग कर उन्होंने श्वे. मूर्तिपूजक परंपरा को हृदय से स्वीकार कर लिया ।

उसके बाद पू. पंन्यासजी म.सा. के साहित्य के अध्ययन व उनके संपर्क से उनकी आराधना-साधना में वेग आया ।

व्याख्यान-वाचस्पति **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचंद्रसूरिजी म.सा.** के वैराग्यपोषक प्रवचनों के श्रवण से उनकी वैराग्य भावना दृढ़ होने लगी ।

वि.सं. 2035 में उन्होंने कुणघेर में उपधान किया, तब उनके अन्तर्मन में यह भाव जागृत हुआ कि **'मैं तो अभी दीक्षा नहीं ले सकता हूँ, परंतु मेरी संतानें दीक्षा लें तो कितना आच्छा ।'**

उन्होंने अपनी भावना अपनी संतानों के आगे व्यक्त की । उनके तीव्र पुण्योदय से उनका छोटा बेटा हर्षद (अशोक) तुरंत ही दीक्षा के लिए तैयार हो गया । भाई की दीक्षा की भावना को देख दो छोटी बहनें भारती व जयश्री भी दीक्षा के लिए तैयार हो गईं ।

वि.सं. 2037 वैशाख वदी-6 के शुभ दिन धिणोज (महेसाणा-जिला) में तीनों ने भागवती-दीक्षा अंगीकार की । **मुनि हर्षद** का नाम **मुनि श्री हेमप्रभविजयजी म.सा.** रखा गया और वे **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय कुंदकुंदसूरीश्वरजी म.सा.** के शिष्य हुए ।

दोनो पुत्रियों का नाम **सा. श्री भाववर्धनाश्रीजी म.सा.** तथा **सा. श्री जयवर्धनाश्रीजी म.सा.** रखा गया और वे पू.बापजी म. के समुदाय में **सा. श्री पद्मलताश्रीजी म.सा.** की शिष्या बनी ।

वि.सं. 2043 में आराधना धाम (हालार तीर्थ) में उपधान दरम्यान 39 वें दिन उपवास के पच्चक्खाण के साथ प्रेमजीभाई की धर्मपत्नी तेजोबाई का स्वास्थ्य खराब हुआ और वे अपने पुत्र मुनि व पुत्री साध्वियों के श्रीमुख से नवकार का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधि के साथ कालधर्म को प्राप्त हुई ।

प्रेमजीभाई की सांसारिक जवाबदारी पूर्ण हो चुकी थी । मलाड में अपने पुत्र योगेशभाई के घर में गृह-जिनालय की प्रतिष्ठाविधि संपन्न होने के बाद प्रेमजीभाई स्वयं दीक्षा के लिए तैयार हो गए ।

प्रेमजीभाई की उम्र 69 वर्ष की थी, परंतु पुत्र मुनि ने उनकी सारी जवाबदारी अपने कंधों पर उठा ली ।

वि.सं. 2043 जेठ सुदी-4 के शुभ दिन हालार में वडालिया सिंहण में संभवनाथ प्रभु की पावन प्रतिष्ठा के प्रसंग पर प्रेमजीभाई की भागवती-दीक्षा संपन्न हुई और वे **पू.मुनि श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के प्रथम शिष्य **मुनि श्री पुण्यसेनविजयजी म.सा.** हुए ।

वृद्धावस्था में भी उन्होंने श्रमण क्रिया के सभी सूत्र कंठस्थ किए । वे अपनी आराधना-साधना में मस्त रहने लगे ।

आगे चलकर 18 घंटों तक मौनपूर्वक जाप करने लगे ! वे खूब भावुक प्रकृति के थे, उपदेश-वाचना में जो भी सुनते, उसे जीवन में आचरण में लाने की कोशिश करते थे ।

दीक्षा के बाद प्रथम बार कच्छ में आए, तब भद्रेश्वर तीर्थ में गिर जाने से फ्रेक्चर हो गया, परंतु उस वेदना में भी उनकी समाधि अपूर्व रही । ऑपरेशन बाद भी राजस्थान तक का विहार किया ।

उनके हृदय में अपूर्व समर्पण भाव था । छोटी से छोटी वस्तु भी गुरु की अनुज्ञा प्राप्त कर ही उपयोग में लेते थे ।

दीक्षा पर्याय में ज्येष्ठ अपने पुत्र मुनि को भी आत्म जागृति के लिए निरंतर प्रेरणा करते रहते थे ।

❋ प्रवचन के बाद जब **मु.श्री हेमप्रभविजयजी म.** अपने पिता मुनि के चरण स्पर्श के लिए आते, तब वे कहते, `महाराज ! व्याख्यान में Public ज्यादा हो तो इससे फूलने जैसा नहीं है । जब आत्मा का विकास होगा तो ही व्याख्यान सफल होगा ।

❋ अपने पुत्र मुनि को टकोर करना हो तो कभी चिट्ठी में लिखकर वह चिट्ठी **हेमप्रभविजयजी** के Table पर रख देते थे । इस प्रकार अलग अलग रीति से अपने पुत्र मुनि को आत्मिक आराधना हेतु सावधान करते थे ।

❋ वाचना आदि में कुछ भी उपदेश की बात सुनते तो तुरंत ही उसे आचरण में लाने की कोशिश करते थे ।

एक बार वाचना में सुना, **'साधु निष्कारण फ्रूट वापरे तो दोष लगता है ।'**

बस, दूसरे ही दिन से उन्होंने फ्रूट्स बंद कर दिए । इस प्रकार उन्होंने मिठाई भी बंद कर दी ।

अंत में वे मात्र चार ही द्रव्य लेते थे ।

अंतिम दिन `दवा देने लगे तो भी मना कर दिया ।

❋ **पू.मु.श्री हेमप्रभविजयजी म.** जब `आनंद की घडी आई' स्तवन बोलते तो **पुण्यसेन वि. म.** डोलने लगते थे ।

अंतिम दिन जिनालय में यह स्तवन आया तो खूब आनंद से प्रभु भक्ति में लीन बने थे ।

जब जब भी समकित की बात आती तो वे पूर्ण विश्वास से कहते, **`मेरी आत्मा में सम्यक्त्व प्रकट हुआ है ।'**

कोई कहे कि समकित की प्राप्ति सरल–सहज नहीं है' तो वे जोर से कहते, `नहीं, मुझे समकित प्राप्त हुआ है । वे हाथ की चमडी खींचकर कहते, **`मेरे रोम रोम में समकित रहा है, मेरा मोक्ष जल्दी होनेवाला है ।'**

वि.सं. 2049 में हालार तीर्थ में **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** की निश्रा में अंजनशलाका प्रतिष्ठा के बाद आराधना धाम में स्थिरता रही ।

उम्र के कारण शरीर धीरे धीरे कृश हो रहा था । जेठ सुदी-12 को स्वेच्छा से संलेखना जैसी स्थिति स्वीकार की । जेठ वदी-1 को पू. आचार्य भगवंत के पास शुद्धिपूर्वक महाव्रत उच्चरे, फिर चतुर्विध संघ की उपस्थिति में पुत्रमुनि व पुत्री साध्वीजी आदि सर्व परिवार के मुख से नवकार का श्रवण करते-करते 3.45 बजे भौतिक देह का त्याग कर दिया ।

उनकी भावना थी कि कालधर्म के बाद 48 मिनिट में ही अग्नि-संस्कार हो जाए तो अच्छा । उनकी भावना के अनुरूप थोडी ही देर बाद उनकी पालखी-अंतिम यात्रा निकाल दी गई ।

–उनका दूसरा मनोरथ था, `परिवार में से सभी दीक्षा लें तो अच्छा, उनकी भावनानुसार पुत्र-पुत्री-दामाद-दोहित्र आदि कुल 17 पुण्यात्माओं ने भागवती दीक्षा स्वीकार की ।

धन्य हो अपने परिवार के उद्धारक उन महात्मा को ।

तपस्वी मुनि श्री धन्यसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2050
माघ शुक्ला-8

कालधर्म
वि.सं.2067
पौष वदी-10

दीक्षापर्याय 17 वर्ष

कैलाशनगर (लास) राज. की धन्यधरा पर श्रेष्ठीश्री भीकमचंदजी की धर्मपत्नी उज्झीबेन ने वि.सं.1987, आसो सुदी-11 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम फूलचंद रखा गया।

वि.सं. 2013 में शंखेश्वर महातीर्थ में **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** की शुभ निश्रा में महामंगलकारी उपधान तप का आयोजन हुआ था। उपधान के आयोजक थे हिम्मतभाई बेड़ावाले।

उस उपधान में रसोड़े की देखरेख की जवाबदारी मगनभाई सँभाल रहे थे।

पूज्य पंन्यासजी म. के परिचय एवं सत्संग से मगनभाई के मन में वैराग्य का बीज विकसित हुआ, जिसके फलस्वरूप वि.सं. 2016 माघ शुक्ला अष्टमी के शुभ दिन मगनभाई ने भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे पू. पंन्यासजी म. के प्रशिष्य **मुनि श्री मल्लिषेणविजयजी म.सा.** बने।

अपने लघुबंधु की भागवती दीक्षा के बाद फूलचंदभाई भी पूज्यश्री के संपर्क में आने लगे। धीरे-धीरे उनकी वैराग्य भावना दृढ़ होने लगी, परंतु लग्न-ग्रंथि से जुडे होने से संसार का त्याग करना, उनके लिए कठिन था।

वर्षों बाद वि.सं. 2050 में उन्होंने अपनी पत्नी व पुत्री के साथ अपनी जन्मभूमि में भव्य समारोह के साथ भागवती-दीक्षा अंगीकार की और वे

पू.मुनि श्री वज्रसेनविजयजी म.सा. के शिष्य **मुनि श्री धन्यसेनविजयजी म.सा.** बने । उनकी धर्मपत्नी का नाम **पू.सा. श्री विनीतदर्शिताश्रीजी म.सा.** तथा सुपुत्री का नाम **पू.सा. श्री अनुपमदर्शिताश्रीजी म.सा.** रखा गया ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद **पू. धन्यसेनविजयजी म.सा.** तप-साधना में ओतप्रोत बन गए ।

उन्होंने दीक्षाजीवन में मासक्षमण, 44 उपवास, 45 उपवास, 51 उपवास, 68 उपवास भी किए । वर्षीतप, संलग्न 500 आयंबिल, वर्धमान तप की ओलियाँ व 108 अट्ठम भी किए ।

वे पूज्यों की निश्रा में सुंदर आराधना कर रहे थे । वि.सं. 2064 में धंधुका में चातुर्मास किया । उसके बाद विहारकर पालीताणा, गिरनार, जाम जोधपुर के बाद आराधना धाम (हालार तीर्थ) आए ।

वहाँ से जामनगर की ओर विहार करते हुए जा रहे थे । 4 कि.मी. चलने के बाद गाड़ी से Accident हो गया, वहीं कोमा में चले गए ।

शत्रुंजय महातीर्थ में उन्हें 108 उपवास की भावना थी, वह भावना तो फलीभूत नहीं हो पाई, परंतु उन्हें पालीताणा लाया गया ।

उनकी सेवा-समाधि के लिए अनेक महात्मा सतत प्रयत्नशील थे ।

पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय मनमोहनसूरिजी म.सा. उन्हें नवकार-स्तोत्र सुनाते थे । **पू. मुनि श्री जिनधर्मविजयजी म.सा.** ने रात-दिन उनकी खूब सेवा की । 10 मास तक कोमा में रहते हुए पौष वदी-12 वि.सं. 2067 के दिन गिरिराज की भाग्यभूमि पर नीलम विहार में उनका कालधर्म हुआ ।

धन्य तपस्वी ! धन्य तपस्या !!

सेवाभावी मुनि श्री दिव्यसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2050
वै.सु.-5

कालधर्म
वि.सं.2055
मगसिर वदी
अमावस्या

दीक्षापर्याय 4 वर्ष

विक्रम संवत् 2012 ज्येष्ठ शुक्ला 8 के शुभ दिन पाटण (गुज.) की धन्यधरा पर हिम्मतभाई की धर्मपत्नी ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम चंद्रकांत रखा गया ।

पाटण अर्थात् एक धर्मनगरी । 108 जिनमंदिरों से विभूषित इस नगरी में धर्म का वातावरण सहज था । बचपन से ही चंद्रकांत को धार्मिक संस्कार प्राप्त हुए । परमोपकारी **पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.** के संपर्क से चंद्रकांत की धर्म भावना में अभिवृद्धि हुई । फिर **पू. पंन्यास प्रवर श्री वज्रसेनविजयजी म.** के मार्गदर्शन से पाटण स्थित साधु–साध्वीजी भगवंतों की वैयावच्च सेवा–शुश्रुषा में जुडे ।

उनकी दो बहनों ने भागवती दीक्षा अंगीकार की जो **सा.श्री मैत्रीपूर्णाश्रीजी** और **सा. श्री मौनरसाश्रीजी** के नाम से सुंदर आराधना कर रही है ।

पारिवारिक जवाबदारियों को वहन करते हुए भी चंद्रकांत की धर्मभावना निरंतर बढती गई, जिसके फल स्वरुप 38 वर्ष की उम्र में वि.सं. 2050 वैशाख सुदी-5 के शुभ दिन हालार तीर्थ आराधना धाम में दीक्षा अंगीकार की और वे **पूं.पं.श्री वज्रसेनविजयजी म.** के शिष्य **मु.श्री दिव्यसेनविजयजी** बने ।

दीक्षा अंगीकार कर वे आराधना–साधना में जुड गए । पहले चातुर्मास के बाद ही शारीरिक रोगों का हमला चालू हो गया, परिणाम स्वरुप **पू.मु. श्री कीर्तिकांतविजयजी** आदि के साथ पाटण आए, वहां दो वर्ष तक द्रव्य–भाव उपचार किए फिर पालीताणा में स्थिरता की ।

टी.बी. के रोग का निदान होने से उसके उपचार चालू किए...परंतु दिन–प्रतिदिन अशक्ति बढने लगी ।

उनकी अंतिम बीमारी में **पू.आ.श्री रविप्रभसूरिजी म., पू.आ.श्री अजितसेनसूरिजी म., पू.मु. श्री चंद्रसेनविजयजी म.** आदि समाधि हेतु प्रेरणा देते थे ।

शारीरिक अस्वस्थता में भी उनकी आराधना सुंदर रीति से चल रही थी ।

वि.सं. 2055 मगसिर वदी अमावस्या के दिन प्रातः 6.18 बजे नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

मात्र 4 वर्ष के अल्प पर्याय में ही निर्मल संयम धर्म की आराधना कर अपने जीवन को सफल बना दिया ।

प्रप्रशिष्य

तपस्वी मुनि श्री हर्षसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2053
वैशाख सुदी-6

कालधर्म
वि.सं.2075
वै.सु.-9

दीक्षापर्याय 22 वर्ष

कच्छ की धन्यधरा मांडवी नगर के सुश्रावक देवशीभाई की धर्मपत्नी चंदुबाई ने वि.सं. 1992 माघ शुक्ला त्रयोदशी के शुभदिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम हरिभाई रखा गया ।

यौवन वय प्राप्त होने पर हरिभाई लग्न ग्रंथि से जुडे । क्रमशः उन्हें एक पुत्र रश्मिन एवं पुत्री रुपलबेन के रुप में दो संताने हुई ।

हरिभाई ने अपनी दोनों संतानों को संस्कारित करने की खूब कोशिश की ।

सुपुत्र रश्मिन को डायोस्ट्रोफी का रोग लागू पडा । धीरे धीरे शरीर के स्नायु संकोचित होने लगे । फिर भी उसने नवस्मरण, चार प्रकरण, तीन भाष्य एवं बी.कॉम का अभ्यास भी किया ।

हरिभाई मांडवी संघ में मंत्री के रूप में सेवा दे रहे थे । वि.सं. 2045 में मांडवी में **पू.पं. श्री पुंडरिकविजयजी** तथा **पू.पं.श्री वज्रेसनविजयजी** का चातुर्मास हुआ ।

उस चातुर्मास में एक दिन रश्मिन ने **पू.मु. श्री हेमप्रभविजयजी** को कहा, 'मैं तो दीक्षा नहीं ले सकता हूँ, परंतु मेरी मृत्यु के बाद मेरे पिताजी को आप जरूर दीक्षा देना ।' पूज्य मुनिश्री ने हाँ कहा । तीन वर्ष बाद रश्मिनभाई ने अत्यंत समाधिपूर्व देह छोडा ।

ग्लान पुत्र की मृत्यु के बाद श्राविका दयाबेन व रुपलबेन ने दीक्षा की भावना व्यक्त की ।

पत्नी व पुत्री की इस भावना को देख हरिभाई ने भी दीक्षा की तैयारी

बताई और कहा, `मुझ से ज्यादा तप नहीं होता हैं, अतः बियासना करुंगा । गाथाएं भी ज्यादा याद नहीं रहती है । परंतु आपकी आज्ञा का पालन करुंगा ।'

पूज्य पं.श्री वज्रसेनविजयजी म. ने उनकी योग्यता पात्रता देख हाँ भरी ।

वि.सं. 2053 वैशाख सुदी-6 के दिन हरिभाई ने पत्नी व पुत्री के साथ दीक्षा अंगीकार की । दीक्षा महोत्सव खूब शासन प्रभावक रहा ।

हरिभाई पू.तपस्वी **मु.श्री जिनसेनविजयजी** के शिष्य **मु.श्री हर्षसेनविजयजी** बने ।

तपस्वी गुरुदेव का शिष्यरत्न पाकर आयंबिल का तप उनमें संक्रमित हुआ ।

बियासना के बदले उन्होंने अपने जीवन में वर्धमान तप की 100 + 15 ओलियाँ की । पूज्यों के हितोपदेश को जीवन में आत्मसात् करते हुए दो मुख्य गुण अपनाए (1) किसी की अपेक्षा नहीं रखना (2) किसी की उपेक्षा नहीं करना ।

नित्य तप–जप–आराधना के साथ संयम धर्म का पालन करते हुए उन्होंने साधु क्रिया के सूत्र कंठस्थ किए । सज्झायों के द्वारा अपने वैराग्य भाव को खूब पुष्ट किया ।

18 वर्षों तक उन्होंने पू. उपाध्याय **श्री महायशविजयजी** एवं **पू. धुरंधरविजयजी** की खूब सेवा भक्ति वैयावच्च की ।

वि.सं. 2072 में आसो पूनम को वर्धमान तप की 100 ओली पूर्ण की ।

वि.सं. 2074 में **पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी** की प्रेरणा से पुनः पाया डालकर 15 ओलियाँ पूर्ण की ।

बडी उम्र में भी शत्रुंजय–गिरनार की पैदल ही यात्रा की । उन्होंने सांसारिक धर्मपत्नी सा. श्री दिव्ययशाश्रीजी को भी खूब समाधि प्रदान की ।

वि.सं. 2072 वैशाख सुदी 9 के दिन सिने में सहज दर्द हुआ । बाह्य उपचार किए गए । ठीक शाम को 4.45 बजे नवकार का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए । **पू.मु. कमलसेनविजयजी** तथा **पं. श्री जयधर्मविजयजी** की निश्रा में दूसरे दिन पालखी के चढावे बोले गए । जीवदया में भी लोगों ने अच्छा लाभ लिया । बडी उम्र में दीक्षा लेकर भी वर्ष के निर्मल संयम जीवन का पालन कर उन्होंने अपने जीवन को सफल व सार्थक बना दिया ।

समाधि साधक पू. मुनि श्री उदयरत्नविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2053
जेठ सुदी-10

कालधर्म
वि.सं.2067
वैशाख सुद-15

दीक्षापर्याय 14 वर्ष

सहज समाधिपूर्वक देह का त्याग करनेवाले सद्‌गत **महात्मा मुनि श्री उदयरत्नविजयजी म.** का जन्म राजस्थान के सुप्रसिद्ध तीर्थ **'राता महावीरजी'** के समीप आए **'बीजापूर'** गांव में हुआ था । परिवार में से पिता और बहन की हुई भागवती दीक्षा के फलस्वरूप उन्हे धर्म के संस्कार तो बचपन से ही मिले थे । लगभग 40 वर्ष की उम्र से वे धर्म आराधना में विशेष जुड गए थे ।

व्यवसाय और पारिवारिक जवाबदारियों को वहन करते हुए भी वे रात्रि भोजन का त्याग, सुबह-शाम प्रतिक्रमण-वर्धमान तप की ओलियों द्वारा आयंबिल की तपश्चर्या, व्याख्यान-श्रवण, जिनपूजा आदि अनेकविध नियमों का दृढतापूर्वक पालन करते थे । माहिम E साहुनगर में रहते हुए उन्होंने माहिम W के संघ में भी अपनी सेवाएं प्रदान की थी । शाहुनगर के छोटे से संघ में गृह जिनालय निर्माण में उनका पूरा-पूरा योगदान था ।

वे आराधना भवन दादर में वर्षों से पर्व तिथि को पौषध आदि की आराधना तपश्चर्या करते थे ।

'सर्वविरति के बिना आत्मा का उद्धार नहीं है ।' इस शास्त्रीय वचन की बात सद्‌गत महात्मा को अपने गृहस्थ जीवन में इस ढंग से जंच गई थी कि वे वर्षों से इसी भावना में रमते थे कि कब मुझे दीक्षा प्राप्त होगी ?

वि.सं. 2052 में मेरा चातुर्मास **पू. तपस्वी मुनि श्री जिनसेनवि-**

जयजी म.सा. के साथ ज्ञानमंदिर-दादर में था । आराधना भवन दादर में विद्वद्वर्य **मुनि श्री यशोविजयजी म.** का चातुर्मास था । रविवारीय वाचना-श्रेणी और अनेक प्रसंगों में हम दोनों के एक साथ संयुक्त प्रवचन होते थें । उन प्रवचनों से उम्मेदमलजी की दीक्षा की भावना और दृढ बनी ।

एक बार वे अपने कल्याण मित्र **चंदुभाई** को लेकर ज्ञानमंदिर में आए । दीक्षा की भावना व्यक्त की । 71-72 वर्ष की प्रौढ उम्र थी अतः दीक्षा देने में कैसे हिम्मत की जाय ? पू. तपस्वी मु. श्री से सलाह मशविरा किया, तब उनकी और **मु. श्री यशोविजयजी म.** की एक ही राय थी **'तुम इन्हे दीक्षा दो, सब अच्छा होगा । तपस्वी है, त्यागी है, वैरागी है और पूर्ण समर्पित है ।**

आखिर उन्हे दीक्षा देने का निर्णय लिया गया । उसी वर्ष वे कलिकुंड से पालीताणा के छ'री पालक संघ में भी जाकर आए । उन्हें आत्म–विश्वास हो गया कि मैं आराम से विहार कर सकूंगा ।

पुनः भायखला में पोष दशमी के सामुदायिक अट्ठम के प्रसंग पर उनके परिवारजन आए और बोले, **'बडी उम्र है अतः दीक्षा देने में आपकी भी जवाबदारी बढती हैं, अतः Last उम्र तक आप इन्हें अवश्य संभालना ।'** मैंने भी उन्हें विश्वास दिया कि आप विश्वास रखे, `इस जवाबदारी को मैं पूरे विश्वास से निभाने की कोशिश करुंगा ।'

इसी बीच कुल्पाकजी तीर्थ में **प. पू. आचार्य श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.** की निश्रा में चैत्रमास की नवपदओली का कार्यक्रम था वहां नवपद ओली कर पूज्य आचार्य भगवंत के आशीर्वाद प्राप्त किए । फिर सुश्रावक हिम्मतभाई ने भी उन्हे प्रोत्साहित किया, **'मैं तो दीक्षा नहीं ले सका, तुम अवश्य दीक्षा लो ।'**

आखिर पूज्य **तपस्वी सम्राट्** और **पूज्य गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय महोदयसूरीश्वरजी म.सा.** के पास दीक्षा मुहुर्त लिया गया । उभय पूज्यों ने आशीर्वाद पूर्वक वैशाख सुदी-10 संवत् 2053 का मुहुर्त प्रदान किया । दीक्षा की तैयारी होने लगी और पत्रिका भी छप गई । दीक्षा हेतु माहिम W में हमारा प्रवेश भी हो गया और दीक्षा के चार दिन पहले ही उनके दामाद **घीसूलालजी बालीवालों** की मृत्यु हो गई । उनकी श्राविका आदि

की ओर से एक विघ्न खडा हो गया **'दीक्षा इस समय नहीं, बाद में हो ।'**

आखिर उस समय दीक्षा स्थगित रही, फिर प्रयत्न हुए । उनकी भी उसी वर्ष में चातुर्मास के पूर्व ही दीक्षा लेने की तीव्र भावना थी । आखिर दूसरा मुहुर्त निकला **'जेठ सुदी-10'** का ।

उस शुभ मुहुर्त में खूब हर्षोल्लास के साथ में माहिम W में अपने गृहांगण में **पू. तपस्वी मु. श्री जिनसेनविजयजी म.** के वरदहस्तों से उनकी भागवती दीक्षा हुई और वे मेरे (मु.श्री रत्नसेनविजयजी के प्रथम) शिष्य बने ।

चारित्ररत्न की प्राप्ति हेतु उनके **भाग्य का उदय** होने से उनका नाम रखा गया **मुनि उदयरत्नविजयजी म.** । दीक्षा के बाद योगोद्वहन प्रारंभ हुए । असाढ सुद-2 को माधव बाग, C.P. Tank में **प.पू.आचार्य श्री चंद्रोदयसूरीश्वरजी म.सा.** एवं **प.पू. आचार्य श्री कनकशेखरसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से उनकी बडी दीक्षा हुई ।

दीक्षा के बाद पहला ही चातुर्मास सायन-धारावी में हुआ । वे स्वयं वर्धमान तप के तपस्वी थे ही । इसके साथ ही उन्हे 100 + 92 वीं ओली के तपस्वी महात्मा **पू.मु. श्री जिनसेनविजयजी म.सा.** का शुभ सान्निध्य मिला, बस वे भी वर्धमान तप में जुड गए । इस प्रौढवय में उनका वर्धमान तप दूसरों के लिए भी आदर्श रुप और प्रेरणादायी बनता था । फागुण वदी-5, दि. 18 मार्च 1998 में उनके वर्धमान तप की 87 वीं ओली पूर्ण हो रही थी, उस निमित्त को पाकर भायंदर संघ में 512 आयंबिल हुए थे ।

पोष वदी-14, संवत् 2058, दि. 11-2-2002 के दिन उनकी वर्धमानतप की 96वीं ओली की पूर्णाहुति निमित्त भायखला संघ में 96 जिन के 250 उपवास की आराधना हुई थी ।

दीक्षा लेने के बाद प्रौढ उम्र में भी वे पाद-विहार करते थे । बंबई से **धूलिया, धूलिया** से पूना, पूना से कराड, कराड से सोलापूर तक की विहार-यात्रा दरम्यान आयंबिल के तप के साथ वे 15-20 कि.मी. का विहार भी करते थे ।

गुण वैभव : लोक व्यवहार में आदमी की कीमत उसके पास रही धन-संपत्ति के आधार पर होती है, जबकि जैन शासन में साधक

की कींमत उसके पास रहे गुण वैभव के आधार पर होती है । दुनिया में आदमी धन से समृद्ध गिना जाता है, जबकि जैन शासन में व्यक्ति गुणों से समृद्ध माना जाता है ।

मुनि श्री ने 14 वर्ष के अपने संयम पर्याय में अनेक गुणों से समृद्ध बनने का प्रयास किया था ।

अल्प उपधि : दीक्षा स्वीकार के बाद व्यक्ति का मान-सन्मान लोक व्यवहार में खूब खूब बढ जाता है । साधु म. मना करते है, फिर भी लोग **'लो-लो'** कहकर वस्तु के लिए आग्रह करते है । स्वर्गस्थ मुनिश्री को वस्त्र-पात्र आदि का कुछ भी शौक नहीं था । 14 वर्ष में उनका एक छोटे से बाक्स में अल्प उपधि थी ।

निर्ममत्व भाव : 14 वर्ष में 14 संघों में उनके चातुर्मास हुए, परंतु किसी भी व्यक्ति के साथ उनका कोई घनिष्ठ संबंध नहीं । वे लोक परिचय से सर्वथा दूर रहते थे ।

उम्र से खूब बडे होने पर भी उनका गुरु-समर्पण भाव गजब का था ।

उन्होंने अपनी इच्छाओं को लगभग गौण कर दिया था । ***सब कुछ त्याग करना आसान है, परंतु मन की इच्छाओं को मारना सबसे कठिन है ।***

जब भी विहार की बात आई, उन्होंने किसी प्रकार की आनाकानी नहीं की । गोचरी आने के बाद भी गोचरी दिखाकर और अनुमति लेकर ही वापरते थे ।

गत चातुर्मास में प्रातःकाल की उनकी नवकारसी थोडी देरी से आई और मैं व्याख्यान में चला गया । **'गुरु को गोचरी बताए बिना कैसे वापरी जाय ।'** उन्होंने गोचरी नहीं वापरी ।

उन्होने अनेक स्तुति-स्तवन व सज्झाय आदि कंठस्थ किए थे ।

प्रतिक्रमण पढाने में उन्हें थोडा भी प्रमाद नहीं था । बडी भीड हो तो भी संवत्सरी-चौमासी आदि प्रतिक्रमण खूब जोर से शुद्ध उच्चारणपूर्वक पढा लेते थे । इन कार्यों में उन्हे थोडा भी प्रमाद नहीं था ।

आहार संयम : दीक्षा जीवन स्वीकार के बाद वे लंबी लंबी वर्धमान तप की ओलियां करते थे । ओली सिवाय के दिनों में भी वे लगभग एकासना

करते थे । रोग आदि के कारण बियासना करना पडे तो भी उनका मन एकासने के लिए ही लालायित रहता था ।

गत वर्ष हार्ट की तकलीफ हुई । उसके बाद वे बियासना करते थे । एकासने की इच्छा होते हुए भी उन्हें बियासना करना पडता था । पिछले काफी वर्षों से उन्होंने आम का जीवन पर्यंत त्याग कर दिया था, सिर्फ बीमारी में अपवाद रुप में कुछ फुट्रस लेते थे, उसके पूर्व वे सब छोड दिए थे ।

आहार पर उनका खूब संयम था । मांडली में जो भी आया, चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल-सहजतया स्वीकार कर लेते थे, किसी प्रकार की शिकायत नहीं थी ।

शांत स्वभाव : 14 वर्ष के संयम पर्याय में काफी विचरण रहा, परंतु कहीं भी किसी गृहस्थ के साथ उनका झगडा, बोला-चाली या मनमुटाव नहीं हुआ ।

वृद्धावस्था व तप के साथ क्रोध की संभावना रहती है । कई वृद्धों में चिडचिडापन देखने को मिलता है तो कई तपस्वियों को जल्दी गुस्सा आ जाता है । परंतु उन्होंने तप के फल समता को प्राप्त किया था ।

मित भाषिता : बोल बोल करते रहने की उनकी बिल्कुल आदत नहीं थी । जरुरत पडने पर वे थोडा ही बोलते थे ।

स्वावलंबिता : दीक्षा के बाद वर्षों तक वे अपना सब काम प्रतिलेखना आदि स्वयं ही करते थे-दूसरे किसी को करने नहीं देते थे । वर्षों तक अर्थात् जब तक स्वस्थ रहे, तब तक गुरु आदि वडिलजन का पडिलेहण करने से चुकते नहीं थे । उन्हें मना करते तो कहते **'थोडा काम तो मुझे भी चाहिये न !'** अर्थात् उनमें प्रमाद या स्वार्थवृत्ति नहीं थी ।

तप का अपूर्व प्रेम : उनके दिल में तप धर्म का अपूर्व प्रेम था । सूक-लकडी काया होने पर भी आयंबिल और उपवास तो उनके लिए बाए हाथ का खेल था ।

वर्धमान तप की 100 ओली उन्होंने खूब उत्साह उल्लास के साथ पूर्ण की । दो बार पांवों में फेक्चर हो जाने पर भी उनका मनोबल टूटा नहीं था । आयंबिल के प्रति उनके दिल में गाढ अनुराग था ।

दीपक ज्योतिटॉवर दि. 10-10-2004 भादो वदी-10 के शुभ दिन उन्होंने वर्धमान तप की 100 ओली पूर्ण की थी । एक दीर्घ तप की निर्विघ्न

पूर्णाहूति का उनके मन में खूब आनंद था । उस निमित्त संघ में भी नवाह्निक-महोत्सव, नौ दिवसीय नवकार मंत्र के सामुदायिक एकासने, नौ दिवसीय नवकारमंत्र का अखंड भाष्य जाप आदि हुए थे । पारणे के दिन उनके गांव की एक बहन के 100 आयंबिल का पारणा था, तो उनकी भावना को देखते हुए वे पांव में फेक्चर होने पर भी 6 मंजिल तक चढ गए ।

जाप व स्वाध्याय प्रेम : दीक्षा के बाद उनको दैनिक जाप, कायोत्सर्ग, नवकारवाली आदि का नित्य क्रम था । रात को देरी हो जाए तो भी देर रात तक अपनी नित्य आराधना पूर्ण करके ही सोते थे ।

जिनवाणी श्रवण, वाचना श्रवण आदि में भी पूरा–पूरा रस था, जब तक स्वस्थ रहे कभी भी प्रवचन–श्रवण चूकते नहीं थे । नवस्मरण, पंच–सूत्र आदि का नियमित पाठ करते थे ।

वृद्धावस्था में दीक्षा लेने के कारण एक बार वे बोले, `मुझ से पक्खी सूत्र (350 गाथा) नहीं हो पाएगा ।'

मैंने कहा, `चिंता न करे, प्रयत्न करना अपना फर्ज है । शायद प्रयत्न करो तो हो भी जाए ।' और 1-2 वर्ष में ही उन्होंने पक्खी सूत्र कंठस्थ कर दिया था ।

तन में व्याधि-मन में समाधि

दि. 12-2-2011 गोरेगांव में पेशाब की थैली Bladder में केंसर की गांठ के ओपरेशन के बाद आयुर्वेदिक निष्णात Ladydoctor की ट्रीटमेंट चालू थी । एक मास के बाद जब पुनः Blood के Report निकाले गए तो पता चला `**औषधोचार का कोई असर नहीं हो रहा है ।** रोग घटा नहीं, बल्कि बढ गया है ।' शांतिकमल में नवपदओली दरम्यान कभी कभी रात्रि में उनकी वेदना असह्य हो जाती थी । एक दिन रात्रि में पीडा बहुत बढ गई । मैंने पूछा, `क्या होता है ?'

उन्होंने कहा, **`पेशाब में पीडा सहन नहीं होती है ।'**

मैंने कहा, **`नवकार का स्मरण करो ।'** पूरा नवकार न गिन सको तो **`नमो अरिहंताणं' `नमो अरिहंताणं'** करो, फिर मैंने **`नमो अरिहंताणं'** कहकर उनके पास से भी बुलाया । बारी बारी से मैं और वे **`नमो अरिहंताणं'** बोलते । 15-20 मिनिट बाद पीडा कम हो गई । उन्हें नींद आ गई ।

उनकी आत्म समाधि के लिए प्रेरणा देते हुए कहा, `यह देह आराधना में सहायक बने, इसीलिए द्रव्य-उपचार करना हैं मुख्यता तो भावोपचार की है । यह शरीर तो एक दिन अवश्य छोडना है । बस, देह छोडते समय भी समाधि में जाए । इसके लिए पंच-सूत्र अर्थ सहित, पुण्य प्रकाश का स्तवन आदि का पाठ करना है ।'

आत्म जागृति के लिए **पंन्यासश्री मुक्तिवल्लभविजयजी म.** द्वारा आलेखित **'समाधिनी सीढी'** का वे नित्य स्वाध्याय करने लगे ।

डॉकयार्ड रोड की तीन दिन की स्थिरता दरम्यान भी एक दिन उन्हें असह्य पीडा थी पुनः उनके पास **नमो अरिहंताणं** बुलाने लगा ।

वहां से विहारकर विकास एपार्टमेंट परेल आए । वहां उनके सद्भाग्य से **देशी वैद्य नेमचंदभाई हरिया** के देशी इलाज नीम के पत्तों का उकाला आदि चालू किया । उस इलाज से उनकी पीडा में काफी राहत रही । धारावी में पिछले 10 दिन की स्थिरता दरम्यान केंसर की वह असह्य पीडा लगभग भूला दी गई । उसमें काफी राहत होने लगी, वेदना कम हो रही थी परंतु रोग तो अंदर बढता जा रहा था । कालधर्म के चार दिन पहले बोले, `दवाई से कंटाल गया हूँ, दवाई लेने की बिल्कुल इच्छा नहीं हो रही है ।'

दो दिन बुखार, मशे की तकलीफ आदि के कारण अन्य उपचार किए गए, पेशाब में पस बढने लगा । पानी व प्रवाही दिया जाने लगा तो धीरे धीरे उसमें भी अरुचि हो गई ।

वैशाख सुदी 6 को उनकी समाधि निमित्त संघ में समूह सामायिक एवं वै.सु. 13 को नवकार जाप रखा गया । वै.सु. 14 को **अध्यात्मयोगी पूज्य गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** की 31 वीं पुज्य तिथि थी । गुणानुवाद सभा में आने की उनकी खूब भावना थी परंतु वे न आ सके, उसका उन्हें खूब अफसोस था ।

उनकी अस्वस्थता बेचैनी आदि देख पुनः प्रेरणा करते हुए कहा, आज पूज्य गुरुदेव की पुण्यतिथि है । उनके नाम व फोटों के साथ अपना आत्मानुसंधान करे । वे खूब दयालु है, वे हमें समाधि में पूर्ण सहायता करेंगे । उनके नाम का जाप करो । मेरी बात में सहमति देकर उन्होंने गुरुदेव के नाम का **'श्री भद्रंकरविजयजी सद्गुरुभ्यो नमः'** पद का 108 बार जाप भी किया ।

शाम का पक्खी प्रतिक्रमण भी जागृति पूर्वक किया । 2-3 दिन पूर्व तो मेरे पास आकर सुबह के आदेश मांगकर राइ मुहपति कर लेते थे । 2 दिन

से ज्यादा कमजोरी होने से मैं स्वयं ही उनके आसन पर जाकर आदेश दे देता-वहां भी वे जागृति पूर्वक वंदन करते ।

कालधर्म के सिर्फ एक दिन पूर्व ही धारावी संघ के **ट्रस्टी सुरेशभाई** ने पूज्य तपस्वी मुनिराज श्री को (वैशाख सुदी-14 के दिन) सुखशाता पूछी । फिर विनती करते हुए कहा, **'साहेबजी ! यहां आपके स्वास्थ्य की दृष्टि से हवा-पानी अनुकूल है । आप कुछ दिन तक यहीं स्थिरता करने की कृपा करे ।'**

उन्होंने खूब सहजता से कहा, **'विहार का निर्णय गुरु महाराज करेंगे ।'** घटना बहुत सामान्य है, परंतु इसमें उनकी अन्तर परिणति के दर्शन होते है ।

अनुकुल-प्रतिकूल संयोगों में अपनी इच्छाओं को संपूर्णतया गौण करना, आसान बात नहीं हैं परंतु मुनि श्री ने अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण किया था । इस प्रसंग में गुरु समर्पण के साक्षात् दर्शन होते है ।

जिसके हृदय में पूर्ण गुरु समर्पण भाव होता है, उस आत्मा के लिए अंतिम समय में समाधि सहज होती है ।

डेढ वर्ष पूर्व प्रोस्टेट के ओपरेशन आदि के कारण मुझे 18 दिन दीप नर्सिंग होम-भिवंडी में रहना पडा तो वे उपाश्रय में रहते हुए भी मेरे स्वास्थ्य की चिंता करते थे । 14 वर्षों में मुझ से अलग रहने के प्रसंग नहींवत् ही आए हैं । इन सभी प्रसंगों में उनके हृदय में रहे गुरु समर्पण भाव के प्रत्यक्ष दर्शन होते है ।

वै.सु. 15 के दिन सुबह प्रभुजी समक्ष चैत्यवंदन भी भावपूर्वक किया । पच्चक्खाण पार कर थोडी दवाई आदि ली । संघ में आज सुबह 8 से 10 वाचना श्रेणी और साधर्मिक भक्ति थी । पूरा कार्यक्रम शांति से निपट गया था । ठीक 12.30 बजे तक मुनिश्री के सांसारिक पौत्र **निलेश** ने खूब भाववाही शैली में अर्थ सहित पंचसूत्र का पाठ कराया । उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक शरण गमन, दुष्कृत गर्हा और सुकृत-अनुमोदना की ।

मैंने एकासना किया - थोडा आराम किया और 1.50 बजे उनके चेहरे की बदलती स्थिति देख मैंने तथा **केवलरत्नविजयजी** ने नवकार सुनाना चालू किया और चंद क्षणों में ही अत्यंत ही समाधि पूर्वक प्रसन्नतापूर्वक देह का त्याग कर परलोक के पंथ पर प्रयाण कर दिया । काफी समय से **मुनिश्री केवलरत्नविजयजी** ने उनकी खूब सेवा-शुश्रुषा की थी । अंतिम समय में समाधि प्राप्त कर जीवन में की गई आराधना-साधना का फल प्राप्त कर लिया ।

दूसरे दिन उनकी भव्य पालखी निकली ।

अपूर्व समाधि साधक पू.मुनि श्री कनकसेनविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.2056
माघ कृष्णा-5

कालधर्म
वि.सं.2070
भादो सुदी-11

दीक्षापर्याय 14 वर्ष

राजस्थान की धन्यधरा पर सिरोही जिले के अन्तर्गत कैलाशनगर (लास) नाम का छोटा गाँव है । जहाँ चार सुंदर जिनालय हैं ।

उसी धर्मनगरी में वि.सं.1996, चैत्र सुदी-13, दि. 20-4-1940 के शुभ दिन राजमलजी की धर्मपत्नी गजीबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम **कांतिलाल** रखा गया ।

कान्ति का जन्म ही आत्मा की उत्क्रांति के लिए हुआ था । बचपन से ही उसे धार्मिक संस्कार मिले । सद्गुरुवर्यों के समागम से चारित्र का मनोरथ हुआ । लग्नग्रंथि से जुड़े होने से अपनी पारिवारिक जवाबदारियों को वहन करने में जीवन का अमूल्य समय बीत गया ।

चारित्र का तीव्र मनोरथ होने पर भी 59 वर्ष की प्रौढ़ उम्र में उनके चारित्र के अंतराय दूर हुए ।

अध्यात्मयोगी **पू. गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के प्रशिष्यरत्न कैलाशनगर के रत्न महातपस्वी **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय मल्लिषेणसूरिजी म.सा.** के निकट सान्निध्य से उनकी वैराग्य भावना सुदृढ बनी, जिसके फलस्वरूप धर्मपत्नी मणिबेन एवं चार पुत्रों व दो पुत्रियों के भरे पूरे परिवार का त्याग कर उन्होंने अपनी जन्मभूमि कैलाशनगर में **पू.आचार्य श्री मल्लिषेणसूरिजी म.सा.** आदि की शुभ निश्रा में भागवती दीक्षा अंगीकार की ।

प्रभुभक्ति उनके रोम-रोम में बसी थी, इसलिए गृहस्थ जीवन में भी उन्होंने नेहरू बाजार, मद्रास के जिनालय में मुनिसुव्रत स्वामी, काकटूर में कुंथुनाथ, हस्तगिरि में नेमिनाथ, जाम जोधपुर में नेमिनाथ, कैलाशनगर में आदिनाथ आदि की पावन-प्रतिष्ठा में उन्होंने अपनी लक्ष्मी का सद्व्यय किया था ।

उस प्रभु-भक्ति के प्रभाव से ही प्रौढवय में भी उन्हें चारित्ररत्न की प्राप्ति हुई थी ।

उन्होंने संसारी अवस्था में भी मासक्षमण, दो वर्षीतप, अनेक अट्ठाइयाँ, वर्धमान तप की अनेक ओलियाँ व निरंतर 250 आयंबिल की तपश्चर्या करके अपने शरीर को कसा था ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद हार्ट की तकलीफ, एसिडिटी, अल्सर आदि की तकलीफ होने पर भी उन्होंने नमस्कार महामंत्र का 1 करोड़ का जाप किया था ।

वे जाप-स्वाध्याय में लयलीन रहते थे । अपने गुरुदेव के कालधर्म के बाद वे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** की आज्ञा-निश्रा में रहते थे । उनकी आज्ञा को वे सदैव शिरोधार्य करते थे ।

वि.सं. 2068 में मेरा **(आचार्य रत्नसेनसूरिजी म.सा.** का) चातुर्मास पालीताणा में था, तब वे भी साथ में थे ।

श्रमणजीवन की समस्त क्रियाएँ अप्रमत्त भाव से करते थे । विनय-औचित्य पालन में कभी नहीं चूकते थे ।

शरीर की थोड़ी अवस्थता को देख उन्होंने मुझे कहा, ``मुझे अनशन की भावना है ।''

मैंने कहा, ``अनशनपूर्वक देहत्याग से भी समाधि की महत्ता है, अतः चित्तसमाधि बनी रहे, इसी ढंग से तप साधना करनी चाहिए ।''

मेरी इस बात को सुनकर उन्होंने अनशन का विचार स्थगित कर दिया ।

दो वर्ष बाद उन्हें कैंसर हो गया । तीनों कीमो व 33 रेडिएशन से कैंसर तो मिट गया, परंतु शरीर खूब कमजोर हो गया ।

वि.सं. 2070 में महोदय धाम-अहमदाबाद में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में पर्युषण बाद उन्होंने पुनः उपवास चालू किए ।

प्रभु की आज्ञा है, ''जब तक देह संयम में सहायक बने तब तक देह को भी भाड़ा देते रहना, परंतु जब यह देह संयम में सहायक न बने तो इसका प्रेमपूर्वक साथ छोड़ देना ।''

इस जिनवचन को आत्मसात् करते हुए **मुनि श्री कनकसेनविजयजी म.सा.** ने संकल्प किया कि अब मेरा देह जर्जरित हो चुका है, अब इसको टिकाए रखने में भी अनेक विराधनाएँ हैं, अतः क्यों न स्वेच्छापूर्वक इसका त्याग करूँ । उन्होंने अपनी भावना **पूज्य पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सामने रखी । पूज्यश्री ने उनके दृढ़ मनोबल को देखते हुए समाधि को मुख्य बनाते हुए एक-एक उपवास करने के लिए सहमति दी ।

पूज्यश्री का पूरा परिवार उनकी सेवा-समाधि में हाजिर था, दिन पर दिन बीतने लगे ।

पूज्य मुनि श्री के आठ उपवास हो गए । नौवें दिन उपवास में रात्रि में 1.55 बजे नवकार मंत्र का श्रवण करते हुए उन्होंने अपने नश्वर देह का त्याग कर दिया और परलोक के लिए प्रयाण कर दिया ।

8 दिन के अनशन पूर्वक काया की माया उतारनेवाले मुनिश्री धन्यवाद के पात्र हैं ।

मुनिश्री पुण्यभद्रविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2058
कार्तिक
वदी-14

कालधर्म
वि.सं.2067
चैत्र सुदि-1

दीक्षापर्याय 9 वर्ष

कच्छ की धन्यधरा के पत्री गाँव में श्रेष्ठिवर्य आसुभाई की धर्मपत्नी रतनबेन ने ई. 1948 सं. के शुभदिन एक तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम प्रेमजीभाई रखा गया। प्रेमजीभाई की कर्मभूमि मुंबई रही। व्यावहारिक शिक्षण के बाद प्रेमजीभाई व्यवसाय में जुड़े और प्रेमजीभाई (वांकी कच्छ) की सुपुत्री दयाबहिन के साथ लग्न-ग्रंथि से जुडे।

धीरे-धीरे समय बीतने लगा। अपने श्वसुर, **पू. पुण्यसेनविजयजी म.सा.** साले **पू. मुनि श्री हेमप्रभविजयजी म.सा.,** साली **पू.सा. श्री भाववर्धनाश्रीजी म.सा., पू.सा. श्री जयवर्धनाश्रीजी म.सा.** तथा भांजी आदि की भागवती दीक्षा के बाद प्रेमजीभाई का भी जीवन धर्म के रंग से रंगा गया। जिनपूजा आदि श्रावकोचित धर्म-आराधना में आगे बढ़े।

सद्गुरु के सत्संग समागम के प्रभाव से वि.सं. 2050 में दोनों पुत्रियाँ जागृति व अमिता ने भी भागवती दीक्षा स्वीकार की।

वि.सं. 2055 में अपने इकलौते बेटे 12 वर्षीय जिनेश को भी जिनशासन के चरणों में समर्पित कर दिया और वे **पू. मुनिश्री जिनभद्रविजयजी म.सा.** बने।

अपने ही परिवार में से हुई इन दीक्षाओं को देखने के प्रभाव से प्रेमजीभाई के दिल में भी वैराग्य भाव का अंकुर प्रस्फुरित हुआ।

अपनी पारिवारिक जवाबदारियों को वहन करते हुए वे आराधना में आगे बढने लगे ।

अचानक हार्ट की तकलीफ हो जाने से बायपास सर्जरी का ऑपरेशन भी कराया ।

शारीरिक प्रतिकूलता में भी उनका वैराग्य का दीप बुझा नहीं, जीवन की क्षणभंगुरता और `शरीर रोगों का घर हैं' इस सत्य को आत्मसात् करने के फलस्वरूप प्रौढ़वय में भी दीक्षा के लिए तैयार हो गए । धर्मपत्नी दयाबेन तो संयम के मार्ग पर जाने के लिए पहले से उत्सुक थी, अतः वि.सं. 2058 कार्तिक वदी-14 के शुभ दिन जूनागढ़ में **प.पू. महातपस्वी आचार्यदेव श्रीमद् विजय हिमांशुसूरीश्वरजी म.सा.** के वरद हस्तों से प्रेमजीभाई तथा दयाबेन ने भागवती दीक्षा अंगीकार की और प्रेमजीभाई **पू. मुनि श्री मनमोहन-विजयजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनि श्री पुण्यभद्रविजयजी म.सा.** बने । और दया बने **साध्वी श्री पद्मलताश्रीजी** के शिष्या **सा. श्री दिव्यवर्धनाश्रीजी** बने ।

दीक्षा के बाद श्रमणक्रिया के सूत्रों के अध्ययन के साथ 15 उपवास, वर्षीतप आदि की भी आराधना की ।

गुर्वाज्ञा का अच्छी तरह से पालन करते हुए संयम आराधना में आगे बढ़ते हुए आत्मजागृति में मग्न थे ! उनका हार्ट चौड़ा हो रहा था, दो वॉल लीक थे, डायबिटीज, जलोदर, हाई B.P. इत्यादि बीमारी में भी समाधि भाव में लीन रहने लगे ।

वि.सं. 2067, चैत्र सुदी-1 के दिन पालीताणा **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** में अपने सुपुत्र **पू. मुनि श्री जिनभद्रविजयजी म.सा.** आदि के मुख से नवकार का श्रवण व स्वयं नवकार का स्मरण करते हुए कालधर्म को प्राप्त हुए !

धन्य संयमी ! धन्य संयम साधना !

सुसंयमी पू.मुनिश्री मुक्तिसेनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2054
माघ शुक्ला-13

कालधर्म
वि.सं. 2060
कार्तिक वदी-3

दीक्षापर्याय 6 वर्ष

वि.सं. 1989 के शुभ दिन वीरावाव (पाकिस्तान) गांव में सुश्रावक रवचंदभाई की धर्मपत्नी रतनबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम मोहनभाई रखा गया ।

पूर्वभव के शुभ संस्कारों के कारण बचपन से ही धर्मरुचि पैदा हुई ।

पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म. के संसर्ग–संपर्क में धर्ममार्ग में विशेष जुडे ।

पू. मातुश्री रतनबेन की अस्वस्थता में उनकी खूब सेवा की ।

यौवन वय में लग्नग्रंथि से जुडे । धर्मपत्नी लीलाबेन को पेरालीसीस का हमला हुआ तो उसे भी समाधि प्रदान की ।

उसके बाद पालीताणा–शंखेश्वर आदि तीर्थों में विशेष आराधना करने लगे ।

आराधना के फल स्वरूप दीक्षा का तीव्र मनोरथ हुआ । बलेज तीर्थ में **पू.पं.श्री वज्रसेनविजयजी म.** को संयम के लिए विनंति की । 65 वर्ष की उम्र होने पर भी उनकी तीव्र भावना को देख पू. पंन्यासजी म. ने सम्मति दी ।

65 वर्ष की प्रौढवय में हालारतीर्थ में **पू. तपस्वी सम्राट् आ. श्री**

राजतिलकसूरिजी म. आदि की शुभ निश्रा में वि.सं. 2054 माघ शुक्ला 13 के शुभदिन भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे **पू.आ. श्री मल्लिसेनसूरिजी म.** के शिष्य **मु. श्री मुक्तिसेनविजयजी** बने ।

बचपन में एक पांव में थोडी लकवे का असर होने पर भी सुखपूर्वक विहार करते थे ।

`गुर्वाज्ञा को अपनी जीवन मंत्र बनाकर सुंदर आराधना करने लगे । उन्होंने वर्धमान तप की 43 ओलियाँ, सिद्धितप, शत्रुंजय तप भी किया । दीक्षा बाद हॉर्ट की तकलीफ चालू हुई । हॉर्ट की तकलीफ होने पर भी उनकी आराधना अच्छी तरह से चल रही थी ।

71 वर्ष की उम्र में छह वर्ष के निर्मल संयम जीवन का पालन कर वि.सं. 2060 कार्तिक वदी-3 के दिन प्रातः 6.08 बजे नवकार मंत्र की आराधना–साधना करते हुए अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

समाधि साधक पू. मुनि श्री कीर्तिरत्नविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2059
माघ शुक्ला-6

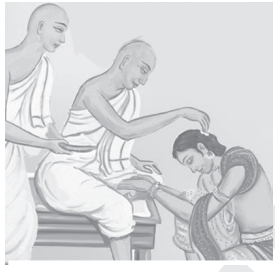

कालधर्म
वि.सं.2074
मागसिर
वदी-9

दीक्षापर्याय 15 वर्ष

स्व. मुनिश्री का जन्म राजस्थान की धन्य धरा पर सिरोही जिले के मेर मंडवारा गांव में वि.सं. 2017, महा सुदी-4, दि. 30-1-1961 सोमवार के शुभ दिन हुआ था। उनका नाम केसरीमल था। माता-पिता का नाम शांतिबाई खेमचंदजी रामसीणा था।

व्यवसाय हेतु रामसीणा परिवार देहु रोड-पूना में बस गया था। केसरीमल का व्यवहारिक अभ्यास वहीं पर चालू हुआ। बचपन से कुशाग्र बुद्धि होने से बारहवी कक्षा तक अभ्यास किया और उसके बाद अपने पिताश्री के साथ व्यवसाय में जुड गए।

बंगारपेठ (कर्णाटक) निवासी-केसरीमलजी सोमाजी की सुपुत्री चंदाबहन के साथ उनका पाणिग्रहण हुआ। क्रमशः उन्हें एक पुत्र व एक पुत्री हुई।

यौवन के रंग राग और भौतिक वातावरण के फलस्वरुप प्रारंभ में तो उनका मन धर्म से नहीं जुड पाया परंतु अपनी माताजी के स्वर्गवास के निमित्त को पाकर पांचों भाइयों ने मिलकर जिनभक्ति स्वरुप महोत्सव किया तब से केसरीमलभाई का धर्म से लगाव जुडा।

योगानुयोग वि.सं. 2056 में चिंचवड स्टे. पर प्रवचन प्रभावक, हिन्दी साहित्यकार **पू. गणिवर्यश्री रत्नसेनविजयजी म. (बाद में पू. आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.)** का सर्व प्रथम यादगार ऐतिहासिक

चातुर्मास हुआ, जिसमें आसपास के अनेक संघों से अनेक आराधक आराधना-अनुष्ठान में जुडे । पूज्यश्री के प्रवचनों से प्रभाविक होकर केसरीमलभाई भी चातुर्मास दरम्यान नियमित प्रवचन श्रवण करने लगे, जिसके फल स्वरुप उनके अन्तर्मन में वैराग्य की ज्योत प्रज्वलित हुई । संसार के क्षणिक सुखों का आकर्षण समाप्त हो गया । परंतु पारिवारिक जवाबदारियां होने से संसार त्याग में कई व्यवधान थे । धर्मपत्नी से बात की तो वह भी दीक्षा के लिए तैयार हो गई । फिर उन्होंने अपने सुपुत्र प्रफुल्लकुमार को संयम जीवन के प्रशिक्षण हेतु **पू. गणिवर्य श्री रत्नसेनविजयजी म.** के पास भेजा और सुपुत्री निकिता को **पू.सा. श्री निर्मलरेखाश्रीजी** के पास भेजा । दोनों बच्चों का भागवती दीक्षा हेतु दृढ निश्चय देख अब वे भी दीक्षा हेतु भगीरथ पुरुषार्थ करने लगे । जिसके फलस्वरुप पूना जिले में सर्व प्रथम बार देहुरोड की धन्यधरा पर भव्य महोत्सव पूर्वक हजारों की जनमेदिनी के बीच उनकी सपरिवार भागवती दीक्षा हुई ।

माघ शुक्ला-6, वि.सं. 2059 के शुभ दिन हालार केशरी **पू.आ. श्री जिनेन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** एवं अपने गुरुदेव **पू. गणिवर्य श्री रत्नसेनविजयजी म.** के वरद हस्तों से रजोहरण प्राप्त कर श्रमण वेष को धारण किया । उनका नाम **मु. श्री कीर्तिरत्नविजयजी** रखा गया और वे **पू. गणिवर्य** श्री के शिष्य बने । उनके सुपुत्र प्रफुलकुमार **मु. श्री प्रशांतरत्नविजयजी** हुए और उनके शिष्य बने । **मुमुक्षु रत्ना चंदाबहन पू.सा. श्री निर्मलरेखाश्रीजी** की शिष्या **पू.सा. श्री संयमलीनाश्रीजी** बनी और सुपुत्री निकिताकुमारी **पू.सा. श्री संयमलीनाश्रीजी** की शिष्या **सा. श्री मोक्षलीनाश्रीजी** बनी ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद **मु. श्री कीर्तिरत्नविजयजी म.** ज्ञान-ध्यान व तप की साधना में जुड गए । अट्ठाई, मासक्षमण, 36 उपवास, वर्धमान तप की 39 ओली, बीस स्थानक तप, सिद्धितप, नवपद ओली आदि तपश्चर्या द्वारा शरीर की माया को दूर कर दिया । तत्वप्रेमी **पू.मु. श्री विश्वदर्शनविजयजी म.** के संपर्क से उनमें तत्त्वरुचि पैदा हुई और **अध्यात्मयोगी पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के तात्त्विक साहित्य वांचन से अध्यात्म भाव में आगे बढे ।

पिछले 7 वर्षों से महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, बंगाल, बिहार, झारखंड आदि राज्यों में खूब विहार कर वहां के प्राचीन तीर्थों के दर्शन-वंदन व भक्ति कर अपने सम्यग् दर्शन को निर्मल बनाया। रतलाम, मालेगांव, आकोला, हिंगणघाट, राजनांदगांव, भिलाई एवं रतलाम में यादगार चातुर्मास कर अनेक लोगों को धर्माभिमुख बनाया। गत वर्ष रतलाम में चातुर्मास कर राजस्थान-गुजरात के प्राचीन तीर्थों की स्पर्शना कर दीक्षा बाद प्रथम बार ही शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा करने का मनोरथ कर रहे थे। इसी भावना से मालवा-मेवाड होते केसरियाजी दयालशा होते गोडवाड के मुख्य तीर्थ राणकपुर के दादा को शीघ्र भेटने की भावना से रोज 25-25 कि.मी. का विहार करते हुए, पोष वदी-7, दि. 9-12-2017 के शुभ दिन घाणेराव के 11 जिनालय के दर्शन कर दि. 10-12-2017 को मुछाला महावीरजी और सादडी के 12 जिनालयों के दर्शन-वंदन कर अपने सम्यग् दर्शन व भावी भव को सद्गतिगामी बनाते हुए दि. 11-12-2017 के मंगल प्रभात में आदिनाथ दादा के ही ध्यान में सादडी से राणकपुर विहार करते हुए राणकपूर से 2 कि.मी. पहले ही बिना किसी वेदना या दुःख दर्द की अभिव्यक्ति बिना, ममत्व भाव से मुक्त होकर काल के धर्म को प्राप्त हो गए।

सकल संघ के दर्शनार्थ उनका देह न्यातितोहरा-सादडी में रखा गया। दि. 12-12-2017 को विजय मुहूर्त में उनकी भव्य पालखी निकली। ठीक 2 बजे उनका देह पंच भूत में विलीन हो गया।

57 वर्ष की लघुवय में 15 वर्ष के निर्मल चारित्र धर्म का पालन करते हुए इस प्रकार अचानक विदाई ले लेंगे-यह तो किसी को पता नहीं था। उनकी आकस्मिक विदाई का हमें दुःख हैं तो साथ में सुंदर समाधि के साथ मृत्यु को महोत्सव बनाने का हर्ष भी है। वे जहां भी हो प्रभु शासन की आराधना कर शीघ्र मुक्ति गामी बने, यही मंगल कामना।

समाधि साधक पू.मुनिश्री नयविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2067
जेठ वदी-5

कालधर्म
वि.सं. 2068
चैत्र वदी
अमावस्या

दीक्षापर्याय 10 मास 10 दिन

बनासकांठा के सालडी गांव में विक्रम संवत् 1993, आसो वदी–8 के शुभ दिन सुश्रावक हरगोवनदास की धर्मपत्नी सीताबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया गोकुल ।

बचपन से ही गोकुल को धार्मिक संस्कार मिले । इसके प्रभाव से पात्र 7 वर्ष की लघुवय गोकुल को दीक्षा की भावना हुई, परंतु अशुभ कर्म के उदय से दीक्षा न हो पाई । परंतु दिन–प्रतिदिन आराधक भाव में वृद्धि होने लगी ।

72 वर्ष की उम्र हो गई, परंतु मन में एक ही मनोरथ था, `जाना तो साधुवेष में ही ।' इस भावना से अनेक महात्माओं के आगे दीक्षा की भावना व्यक्त की परंतु बडी उम्र होने से किसी ने सम्मति नहीं दी ।

आखिर किसी ने सलाह दी, `तुम **पं. श्री वज्रसेनविजयजी** के पास चले जाओ !'

वि.सं. 2066 में पू.पंन्यासजी म.सा. का चातुर्मास कस्तुरधाम पालीताणा में था ।

गोकुलभाई भी चातुर्मासिक आराधना में जुडे । पू. पंन्यासजी म. के परिचय में आए । उन्होंने अपने दिल की भावना व्यक्त की, **`संयम ग्रहण करने की अदम्य इच्छा है, परंतु बडी उम्र के कारण कोई महात्मा सम्मति नहीं दे रहे है ।**

आप कृपालु हो, दयालु हो, आप मुझे दीक्षा की अनुमति प्रदान करे ।'

गोकुलभाई की तीव्र भावना को देख पू.पंन्यासजी म. का हृदय पिघल गया और उन्होंने दीक्षा देने के लिए अपनी सम्मति दे दी ।

पूज्य पंन्यासजी म. पालीताणा से विहार कर पाटण पधारे ।

वि.सं. 2067 जेठ वदी-5 के शुभदिन खूब शासनप्रभावना के साथ उनकी भागवती–दीक्षा विधि संपन्न हुई और वे पू. पंन्यासजी म. की सूचना से **पू.आ. श्री मनमोहनसूरिजी म.** के शिष्य मु. श्री नयविजयजी बने ।

73 वर्ष की उम्र में दीक्षा अंगीकार करने पर भी उनका उत्साह–उल्लास बढ चढकर था ।

श्रमण क्रिया के सभी सूत्र भी कंठस्थ किए ।

`गुर्वाज्ञा पालन' को उन्होंने अपना जीवन–मंत्र बना दिया ।

चातुर्मास बाद हालार तीर्थ में आगमन हुआ । वहां चैत्र मास में हार्ट की तकलीफ हुई । डॉ. ने संपूर्ण आराम की सलाह दी ।

20-25 दिनों के बाद मोटा मांढा में जिनालय का स्वर्ण वर्ष अर्द्ध शताब्दी महोत्सव था ।

सभी महात्माओं के साथ वे भी मोटामांढा पधारे । प्रवेश के बाद व्याख्यान मंडप में जाने की तैयारी चल रही थी । उन्होंने भी उपाश्रय से प्रयाण किया । **मु.श्री हर्षकीर्तिविजयजी** साथ में थे, वे संयम जीवन की अनुमोदना कर रहे थे । अचानक पुनः हॉर्ट का हमला आया । उन्हें पुनः उपाश्रय में लाया गया और वहां सकल संघ की उपस्थिति में नवकार महामंत्र का श्रवण करते हुए मात्र 10 वर्ष 10 मास का संयम पालन कर परलोक के लिए प्रयाण कर दिया । बडी उम्र में दीक्षा लेकर भी उन्होंने अपने जीवन को सफल व सार्थक बना दिया ।

अल्पायुषी पू.मुनिश्री यशोभद्रविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2073
माघ शुक्ला

कालधर्म
वि.सं. 2073
माघ कृष्णा
अमावस्या

दीक्षापर्याय 22 दिन

विक्रम संवत् 2052, मार्गशीर्ष कृष्णा अमावस्या के दिन खोड (राज.) गांव में जन्मे सुश्रावक पोपटलालजी के सुपुत्र योगेशकुमार ने वि.सं. 2073, माघ शुक्ला 10 के शुभ दिन गोकाक (कर्णाटक) में **प.पू. मरुधररत्न आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से भव्य समारोह के साथ भागवती दीक्षा अंगीकार की और **मुनिश्री स्थूलभद्रविजयजी** के शिष्य बने। उनके माताजी ने भी **पू. नीतिसूरिजी म.सा.** समुदाय में दीक्षा अंगीकार की है।

मुनिश्री के वर्षी तप के साथ बडी दीक्षा के जोग चालू थे।

अल्पायुष का योग होने से संयम स्वीकार के 22 वें दिन माघ वदी अमावस्या की रात्रि में अचानक कालधर्म को प्राप्त हुए।

मुनिश्री का अकाल अवसान जीवन की क्षण भंगुरता को सिद्ध करता है। दूसरे दिन हुबली में उनकी भव्य पालखी निकली। दूज के दिन महावीर भवन जैन स्थानक में उनकी गुणानुवाद सभी भी हुई।

1

निश्रावर्ती

तपस्वी मुनिराज श्री भावविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1983
मार्गशीर्ष सुदी-5

कालधर्म
वि.सं.2043
पौष वदी-13

दीक्षापर्याय 60 वर्ष

राजस्थान प्रांत के पाली जिले मे नाणा गाँव में अंबाजीभाई की धर्मपत्नी जशादेवी ने वि.सं. 1955 में एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक का नाम ओटरमल रखा गया।

जन्म-जन्मांतर की आराधना के फलस्वरूप छोटी उम्र में ही ओटरमल में धार्मिक संस्कारों का बीजारोपण हो गया ! धीरे-धीरे धर्मभावना बढ़ती गई। यौवन के वन में प्रवेश करने पर भी संसार के भोग-सुखों की आसक्ति उनके अन्तर्मन को छू न सकी, जिसके परिणामस्वरूप उनकी धर्मभावना में वेग आ गया ! संसारी अवस्था में वर्धमान तप की 22 ओली की थी।

पूज्य आचार्यदेव क्षमाभद्रसूरीश्वरजी म.सा. के सत्संग व प्रवचन-श्रवण से ओटरमल के अंतर्मन में वैराग्य की ज्योत प्रज्वलित हुई और एक शुभदिन अपनी ही जन्मभूमि में 28 वर्ष की भर युवावस्था में **पू. आचार्यदेव क्षमाभद्रसूरीश्वरजी म.सा.** के वरदहस्तों से वि. सं. 1983 मार्गशीर्ष सुदी-5 के शुभ दिन भागवती दीक्षा अंगीकार कर **पू. अमीविजयजी म.** का शिष्यत्व स्वीकार कर **मुनिश्री भावविजयजी** बने।

ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम की मंदता, परंतु तप धर्म का जबरदस्त क्षयोपशम। गुरु-समर्पण भाव के साथ छोटे-बड़े मुनियों की वैयावच्च का अपूर्व प्रेम तो था ही, साथ में नियमित एकासने के साथ वर्धमान तप की भी तीव्र रुचि। उन्होंने वर्षी तप, चत्तारि अट्ठ, 16-11-8 उपवास भी किए।

वि.सं. 2013 में शंखेश्वर महातीर्थ में उन्होंने **प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** की शुभ-निश्रा में वर्धमान तप की 100 वीं ओली का पारणा किया ।

47 वर्ष तक वे अपने गुरुदेव आदि के साथ रहे । अपने गुरुदेव के कालधर्म के बाद अकेले हो गए । 75 वर्ष की उम्र भी हो चूकी थी ।

उनके हृदय में अध्यात्मयोगी **पू. पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.** के प्रति पूर्ण आदर-सद्भाव था । यद्यपि दीक्षा पर्याय में वे उनसे भी बडे थे, परंतु अपनी वृद्धावस्था और अंतिम समाधि को लक्ष्य में रखकर उन्होंने **पू. पंन्यासजी म.** की निश्रा स्वीकार करने का निश्चय कर शंखेश्वर से मारवाड़ की ओर विहार प्रारंभ किया । वे लुणावा में बिराजमान **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के पास पहुँच गए । बोले, **'मेरी अंतिम समाधि आपके हाथों में हैं ।'**

पूज्य पंन्यासजी म. ने उनकी विनती स्वीकार की और **पू. भावविजयजी म.** ने अपना जीवन समर्पित कर दिया ।

75 वर्ष की उम्र में भी वे नियमित एकासना करते थे ।

वि.सं. 2032 में **पू. पंन्यासजी म.** एवं **पू. आचार्य श्री कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.** का लुणावा में चातुर्मास था । उस समय **पू. भावविजयजी म.** भी साथ में थे ।

उस चातुर्मास दरम्यान मैं भी मुमुक्षु के रूप में पू. पंन्यासजी भगवंत के सान्निध्य में संयम-जीवन का प्रशिक्षण ले रहा था ।

उस समय मैंने प्रत्यक्ष देखा कि वे आग्रह करके सभी महात्माओं के स्थापनाचार्यजी का स्वयं पडिलेहन करते थे और पू. पंन्यासजी म. के पाँव भी दबाते थे । वे खूब शांत, सरल व तपस्वी थे । इतनी बडी उम्र में भी वे नियमित एकासना ही करते थे । वि.सं. 2036 में पूज्य पंन्यासजी भगवंत का कालधर्म हो गया, परंतु अपने कालधर्म के पूर्व ही पू. पंन्यासजी भगवंत ने अपने शिष्य परिवार को **पू. भावविजयजी म.** को अंतिम समय तक सँभालने की जवाबदारी सौंप दी । **पू. मल्लिषेणविजयजी म., पू. जयंतभद्रविजयजी म.** आदि ने उनकी जीवन पर्यंत खूब सेवा की ।

88 वर्ष की उम्र में 60 वर्ष के संयम जीवन का पालनकर लुणावा (राज.) में वि.सं. 2043 पौष वदी 13 के शुभ दिन नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए उन्होंने अत्यंत ही समाधि के साथ इस भौतिक देह का त्यागकर परलोक के लिए प्रयाण कर दिया ।

2

निश्रावर्ती

वर्धमान तप प्रेमी पू.पं.श्री रोहितविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1988
चैत्री पूनम

कालधर्म
वि.सं.2016

दीक्षापर्याय 28 वर्ष

जैनपुरी के नाम से प्रख्यात अहमदाबाद शहर में सुश्रावक चंदुलाल की धर्मपत्नी मोतीबेन ने वि.सं. 1971 महावदी-1 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रसिककुमार रखा गया ।

धर्मनगरी में जन्म लेने से चारों ओर धर्म का वातावरण बचपन से मिला, जिसके फलस्वरूप बचपन से ही रसिककुमार में धर्मसंस्कारों का वपन हुआ ।

पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. के प्रवचन-श्रवण से उनका वैराग्यभाव दृढ बना । फिर **पू. प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** की सत्प्रेरणा से दीक्षा के लिए तैयार हुए ।

वि.सं. 1988 में चैत्री पूनम के शुभ दिन भोयणी तीर्थ में शासनपक्षीय श्रमण सम्मेलन के प्रसंग पर 108 मुनि भगवंतों की उपस्थिति में व्याख्यान वाचस्पति **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय लब्धिसूरीश्वरजी म.सा.** के वरद हस्तों से भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के शिष्य **मुनि श्री रोहितविजयजी म.** बने ।

दीक्षा अंगीकार करने के बाद वे नियमित एकासने का तप करने लगे । छोटी उम्र में दीक्षा लेने के फलस्वरूप उन्होंने गहन शास्त्राभ्यास किया, जिसके फलस्वरूप वे **प्रभावक प्रवचनकार** भी बने ।

राजकोट, राणपुर, लिंबडी, सुरेन्द्रनगर, वढ़वाण, नवसारी, मुंबई, अहमदाबाद, नासिक, येवला, नंदुरबार, राधनपुर आदि क्षेत्रों में स्वतंत्र चातुर्मास कर खूब सुंदर धर्मप्रभावना भी की ।

पूर्व के ऋणानुबंध के कारण संयम स्वीकार के कुछ ही वर्षों बाद गुर्वाज्ञा से वे **पू.पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की निश्रा में रहकर आराधना-साधना करने लगे । **उनकी हर आज्ञा को गुर्वाज्ञा मानकर ही पालन करते थे ।**

उनकी योग्यता जानकर **पू. पंन्यासश्री भद्रंकरविजयजी म.** की प्रेरणा से वि.सं. 2011 में उनका एक शिष्य भी हुआ, जिनका नाम था, **मुनिश्री तत्त्वज्ञविजयजी म.** ।

वि.सं. 2015 वै. सु.-6 के शुभ दिन सुरेन्द्रनगर में उनकी गणि व पंन्यास पदवी भी हुई । स्वयं पदस्थ होने पर भी उनके मन में पद का लेश भी अभिमान नहीं था, वे अपने आपको सामान्य साधु ही मानते थे ।

वे जहाँ भी चातुर्मास करते, वहाँ नवकार का जाप और स्वाध्याय का यज्ञ चलता था । सैकड़ों की संख्या में लोग वर्धमान तप में और नवकार के जाप में जुड़ते थे ।

वि.सं. 2015 में मारवाड़ से शत्रुंजय के छ'री पालक संघ में वे भी जुड़े थे, परंतु जिरावला पहुँचने के बाद स्वास्थ्य बिगड़ जाने से दादा की यात्रा की भावना अधूरी रह गई थी ।

वि.सं. 2016 में **प.पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में जामनगर रहे थे, वहाँ उन्होंने वर्धमान तप की 64 + 65 वीं ओली भी की थी ।

शत्रुंजय दादा को भेंटने की भावना होने से जामनगर चातुर्मास बाद उन्होंने गिरनार की ओर विहार किया । उन्होंने गिरनार तीर्थ की 10-11 यात्राएँ भी भावपूर्वक कीं । उसके बाद शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा की भावना से आगे की ओर विहार किया, परंतु माँगरोल पहुँचने के बाद अचानक ही Heartfail हो जाने से 28 वर्ष के दीक्षा पर्याय में मात्र 46 वर्ष की युवा वय में उनका कालधर्म हो गया ।

उनके कालधर्म से जैनशासन को एक प्रभावक महात्मा की क्षति हुई ।

उन्होंने कलिकालसर्वज्ञ विरचित **'योगशास्त्र'** ग्रंथ को आंतर श्लोक के साथ कंठस्थ किया था । उसका वे नियमित स्वाध्याय करते थे, इसके सिवाय उपदेशमाला, तत्त्वार्थ सूत्र, प्रशमरति, धर्मरत्नप्रकरण, धर्मबिंदु, ज्ञानसार तथा षोड़शक आदि ग्रंथ भी कंठस्थ किए थे । उनका वे बार-बार स्वाध्याय करते थे ।

अपने संयमजीवन में वर्धमान तप की 65 ओली के सिवाय छट्ठ, अट्ठम, अट्ठाई व सोलह उपवास की भी तपश्चर्या की थी । जीवन भर के लिए कड़ा विगई और नमकीन का त्याग था, इसके सिवाय प्रतिदिन एकासने से कम तप नहीं था ।

उन्होंने महाराष्ट्र, गुजरात व सौराष्ट्र में विहारकर अपने उपदेश से लगभग 2000 आराधकों को वर्धमान तप का पाया भरवाकर वर्धमान तप में जोड़ा था ।

निश्रावर्ती

महा तपस्वी पू.मु. श्री महाभद्रविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1998
मार्गशीर्ष
शुक्ला-9

कालधर्म
वि.सं.2028
का. वदी-12

दीक्षापर्याय 29 वर्ष

भटेवा पार्श्वनाथ के जिनालय से प्रख्यात चाणस्मा नगरी !

उसी नगरी में वि.सं. 1954 मार्गशीर्ष शुक्ला-7 के शुभदिन लल्लूभाई की धर्मपत्नी मेनाबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम मोहन रखा गया ।

पूर्वभव की विशिष्ट आराधना और धार्मिक व संस्कारी परिवार में जन्म होने से मोहनभाई के जीवन में बचपन से धार्मिक संस्कारों का अच्छा सिंचन हुआ ।

यौवन के प्रांगण में प्रवेश करने के बाद व्यवसाय हेतु मोहनभाई मुंबई गए । उनमें मातृ भक्ति भी गजब की थी ! लग्न के बाद एक बार पत्नी ने माँ-बाप से अलग होने की बात की तो उन्होंने कह दिया, **'तुझे अलग होना हो तो मेरी छूट है, माँ–बाप से अलग होने की बात कभी मत करना ।**

उस समय मोहनभाई भी गाँधीवादी विचारधारा से खूब भावित हुए । देश की आजादी में वे अपने जीवन का सर्वस्व मानने लगे । वे खादी वस्त्र का परिधान करने लगे ।

परंतु एक बार लालबाग-मुंबई में चातुर्मासार्थ पधारे **पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** का एक ही प्रवचन सुना और

मोहनभाई की विचारधारा ही बदल गई । अब देश की आजादी के बजाय कर्म की जंजीरों से मुक्त होकर आत्मा की सच्ची आजादी पाने के लिए उत्कंठित बने !

नियमित प्रवचन-श्रवण के फलस्वरूप उनका अन्तर्मन वैराग्य से भावित हुआ, जिसके फलस्वरूप वि.सं. 1998 में मार्गशीर्ष शुक्ला-9 के शुभ दिन 44 वर्ष की प्रौढ़ वय में अपनी जन्मभूमि चाणस्मा में **पू.मु. श्री मुक्तिविजयजी** के वरदहस्तों से भागवती-दीक्षा अंगीकार की और वे **पू. आचार्यदेव श्री रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के शिष्य **मु.श्री महाभद्रविजयजी** बने ।

तप के प्रति उनके दिल में अमाप स्नेह था । दीक्षादिन से डेढ़ वर्ष तक नियमित एकासने किये । फिर जल्दी कर्म खपाने की भावना से छह मास तक छट्ठ के पारणे छट्ठ और पारणे में एकासना किया । परंतु इतनी शारीरिक शक्ति न होने से एकांतर उपवास और पारणे में एकासने का तप चालू किया, जो जीवन के अंतिम दिन तक चला ।

बीच में आयंबिल किया हो तो भी दूसरे दिन उपवास ही करते थे । अट्ठाई का पारणा हो तो भी एकासना ही करते थे । उनका तपप्रेम अपूर्व कोटि का था ।

अपने 29 वर्ष के संयमपर्याय में 28 वर्ष से भी अधिक एकांतर उपवास ही किए हैं ।

अपने जीवन के प्रारंभिक काल में पाटण बोर्डिंग में पढ़ते समय **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** का परिचय हुआ था, अतः वि.सं. 2003 से वे गुरु-आज्ञा प्राप्तकर **पू.मु. श्री भद्रंकरविजयजी म.** के सान्निध्य में रहने लगे ।

पू. पंन्यासजी म. के प्रति उनके दिल में गुरुवत् पूर्ण समर्पण भाव था । उनकी हर आज्ञा को गुर्वाज्ञा मानकर उसका अच्छी तरह से पालन करते थे ।

◆ वे रसनेन्द्रिय विजेता थे । फल व सूखे मेवे का संपूर्ण त्याग था । कुछ मिठाई को छोड़ अन्य सभी मिठाइयों का भी आजीवन त्याग था ।

◆ परमात्मा-भक्ति में भी उन्हें तीव्र रस था, वे घंटों तक स्तुति-स्तवन के माध्यम से परमात्मा की अपूर्व भक्ति करते थे ।

◆ छोटे बालमुनियों के प्रति उनके हृदय में अपूर्व वात्सल्य भाव था ।

◆ छोटे महात्माओं को ज्ञान-साधना में आगे बढ़ाने में वे खूब प्रयत्नशील रहते थे ।

द्रव्यानुयोग का उन्हें गहन अभ्यास था । **पू.मु. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** को उन्होंने 10 वर्ष तक अभ्यास कराया था । प्रतिदिन 5-6 घंटे तक स्वाध्याय कराने में भी उन्हें लेश भी कंटाला नहीं आता था ।

◆ प्रति वर्ष नवपद की ओली में एकांतर उपवास कर आयंबिल करते थे ।

– वे बालमुनियों का खूब ध्यान रखते थे ।

– अंतिम दिनों में वे संथारावश थे, तब भी एकांतर उपवास ही करते थे । सहवर्ती महात्मा कान में कहे कि आज एकासना का दिन है तो ही वापरते थे ।

– **पू.मु.श्री वज्रसेनविजयजी** बालमुनि थे, एक बार उन्हें छट्ठ करना था । छट्ठ के उत्तर पारणे में गोचरी बढ गई इस कारण रात्रि में उन्हें संथारे में ही उल्टी हो गई । **पू. महाभद्रविजयजी** को पता चला तो उन्होंने सफाई कर परठ दिया । बालमुनि की सेवा में उन्हें लेश भी संकोच नहीं होता था ।

–**पू.मु. श्री विभाकरविजयजी** को भी दश्ते खूब लगती थी, परंतु हर बार **पू. महाभद्रविजयजी म.** स्वयं उनकी सफाई कर देते थे ।

–एक बार **मु. श्री वज्रसेनविजयजी** गोचरी गए । किसी के घर में प्रवेश करते समय ठेस लग जाने से गिर गए । पात्रे भी टूट गए । गोचरी Mix हो गई, `जब वे उपाश्रय में आए तो **पू. महाभद्रविजयजी** ने पूछा, `तुम्हें कहीं चोंट तो नहीं लगी हैं ?' उनमें अपूर्व समताभाव था ।

◆ शिष्य आदि का उन्हें किसी प्रकार का मोह नहीं था । उनके इस निःस्पृहभाव से प्रभावित होकर पूज्य पंन्यासजी म. ने अपने पास आए दो मुमुक्षु जयंतिभाई और मोहनभाई को उनके शिष्य बना दिए थे, जिनके नाम

मु.श्री जयंतभद्रविजयजी और **मु. श्री जयमंगलविजयजी** थे ।

◆ प्रतिक्रमण-प्रतिलेखना आदि क्रियाएँ भी वे खूब अप्रमत्त भाव से जागृतिपूर्वक करते थे ।

◆ वे प्रतिदिन रात्रि में 2-2½ बजे जगकर कायोत्सर्ग और नवकार-जाप आदि साधना करते थे ।

◆ ***वि.सं. 2011 में झामरे के रोग के कारण उनकी एक आँख चली गई । फिर भी उन्हें किसी प्रकार का अफसोस या दुर्ध्यान नहीं था ।***

◆ ***आगे चलकर उनको दोनों आँखों से दिखना बंद हो गया तो भी उनमें किसी प्रकार की दीनता नहीं थी । वे खूब स्वावलंबी थे ।***

शारीरिक अशक्ति आदि के कारण अंतिम दो वर्षों में उनकी लुणावा में ही स्थिरता रही ।

धीरे-धीरे उनकी शारीरिक स्थिति खूब कमजोर हो गई । अंतिम डेढ़ मास की सख्त बीमारी में भी उनका तपप्रेम गजब का था । आँख, कान, जीभ आदि बराबर काम नहीं कर रहे थे, फिर भी उनकी अंतरंग समाधि बराबर बनी हुई थी । उपवास और पारणे में एकासना जीवन के अंतिम समय तक अखंड बना रहा ।

सिंहवृत्ति से संयम अंगीकार कर सिंहवृत्ति से संयमधर्म का पालनकर कार्तिक वदी-12, वि.सं. 2028 के दिन रात्रि में 10.35 बजे लुणावा में नमस्कार महामंत्र का श्रवण करते हुए अत्यंत ही समाधि के साथ अपने भौतिक देह का त्यागकर परलोक के मार्ग पर प्रयाण कर दिया ।

अपूर्व समाधि साधक पू.मुनि श्री विभाकरविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं.1999
मागसर सुद-6

कालधर्म
वि.सं.2014
आसो सुद-10

दीक्षापर्याय 15 वर्ष

वि.संवत् 2014 में अध्यात्मयोगी पूज्यपाद **पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के निश्रावर्ती तपस्वी **मुनिश्री विभाकरविजयजी म.सा.** का चातुर्मास वर्धमान तपोनिधि **पूज्य पंन्यासप्रवर श्री हर्षविजयजी म.सा.** तथा **पू. मुनिराज श्री कल्याणप्रभविजयजी म.सा.** के साथ वाव (बनासकाँठा) में था ।

चातुर्मास-प्रवेश पहले से ही **पू.मुनि श्री विभाकरविजयजी म.** का स्वास्थ्य ठीक नहीं था । अनेक उपचार करने पर भी स्वास्थ्य में सुधार नहीं हो पा रहा था ।

मुनिश्री ने सोचा, ``अब बाह्य औषध लागू नहीं पड़ रहा है'', तो क्यों न प्रभु की आज्ञा के अनुसार भाव औषध का सेवन कर आत्मा के भाव आरोग्य को प्राप्त करूँ ? यह काया तो नाशवंत ही है, आज नहीं तो कल यह काया ढलने ही वाली है तो क्यों न इसके मोह को दूर कर सागारिक अनशन कर इस देह का त्याग करूँ ! इस देह का पालन-पोषण भी तभी तक करना है, जब तक यह देह आत्मसाधना में सहायक बनता हो ! अब मेरा यह देह संयमसाधना में सहायभूत नहीं है तो इस देह के पोषण से क्या फायदा ?''

उन्होंने अपने दिल की बात **पूज्य पंन्यास श्री हर्षविजयजी म.** को कही ।

उन्होंने कहा, ``उपवास से भी ज्यादा कीमत समाधिभाव की है । ज्यों-ज्यों उपवास बढ़ते जाएंगे, त्यों-त्यों वेदना बढ़ती जाएगी । उस वेदना में समाधि रख सकोगे ?''

मुनिश्री ने कहा, ``प्रभु और पूज्य गुरुदेवों की असीम कृपा से मेरा समाधि भाव टिक सकेगा, ऐसा मुझे आत्मविश्वास है ।''

समस्त शास्त्रों का और संयम की साधना का सार भी यही है कि अंतिम समय में समाधिभाव पूर्वक इस देह का त्याग करना ।

पूज्य मुनिश्री के दृढ़ मनोबल को देख पूज्य पंन्यासजी म. ने कहा, ``तुम्हारी भावना अति उत्तम है । मैं शीघ्र ही **दादा गुरुदेव श्री प्रेमसूरिजी म.सा.** से अनुमति मँगवा देता हूँ । उनकी अनुमति मिलने के बाद तुम अपनी साधना में आगे बढ़ सकोगे ।''

पूज्य परदादा गुरुदेव चातुर्मास हेतु अहमदाबाद में बिराजमान थे । उनसे संपर्क किया गया ।

पूज्यपादश्री ने कहा, ``**मुनिश्री विभाकरविजय** की भावना अति उत्तम है । मुनिश्री की समाधि बनी रहे, इस ढंग से रोज एक-एक उपवास का पच्चक्खाण देना ।''

बस, दादा गुरुदेव की आज्ञा प्राप्त होते ही पू. मुनि श्री अपनी साधना के लिए सज्ज हो गए ।

वि.संवत् 2014 भादों सुदी-13 से उन्होंने सागारिक अनशन चालू किया । ज्यों-ज्यों दिन प्रसार होते गए त्यों-त्यों उनका आत्मबल और आत्मतेज बढ़ता ही गया ।

उनके व्यवहार और वचन में लगभग मौनपूर्वक की आराधना थी ।

दिन-पर-दिन बीतते गए । सहवर्ती **पू.मुनि श्री हर्षविजयजी म.** तथा **पू. मुनि श्री कल्याणप्रभविजयजी म.सा.** उनकी सेवा में बराबर लगे हुए थे । उनके समाधिभाव में पूर्ण सहायक थे । कई श्रावक रात्रि में भी मुनिश्री के पास रहकर नवकार महामंत्र का श्रवण करा रहे थे ।

इस प्रकार अपूर्व समाधिभाव एवं चित्त-प्रसन्नता पूर्वक पू. मुनिश्री ने

अपने 28 वें उपवास में आसो सुदी-10 विजयादशमी के शुभ दिन प्रातः 8.30 बजे चतुर्विध संघ की उपस्थिति में जीर्ण वस्त्र की भाँति अपने नश्वर देह का त्याग कर दिया ।

यद्यपि उनकी उम्र मात्र 42 वर्ष की थी, उनकी संयमपर्याय 15 वर्ष की ही थी, परंतु अपनी अल्प संयम पर्याय में ही उन्होंने अपनी अंतिम साधना में जो वीर्योल्लास बताया...उससे हम कह सकते हैं कि–

'कलिकाले पण प्रभु तुज शासन, वरते छे अविरोधजी ।'

हे प्रभो ! भले ही यह कलिकाल है । परंतु आपका शासन इस कलियुग में भी जीवंत है ।

पू. महोपाध्याय श्री यशोविजयजी म. ने ठीक ही गाया है–

भव सायर लीलाए उतरे, संयम किरिया नावे ।

धन्य ते मुनिवरा रे, जे चाले समभावे ।

अपूर्व समाधिसाधक पूज्य मुनिश्री का जन्म वि.सं. 1971 में भुज (कच्छ) में हुआ था । वि.सं. 1998 में **पू. आचार्य श्री रामचंद्रसूरीश्वरजी म.सा.** के प्रवचनों से वैराग्य वासित होकर मगसर सुदी-6, वि.सं. 1999 में दीक्षा अंगीकार कर **पू. मुनि श्री चारित्रविजयजी म.सा.** के शिष्य बने थे । परंतु कुछ वर्षों बाद वे **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की निश्रा में आ गए थे ।

वि.सं. 2000 फागुण वदी-8 से उन्होंने 12 वर्ष तक निरंतर वर्षी तप किया था । वर्षीतप में भी उपवास के पारणे में एकासना ही करते थे ।

वर्षीतप में भी उन्होंने वर्धमान तप की 45 ओली, दो बार सोलह उपवास, एक बार सत्रह उपवास, एक बार दस और नौ उपवास भी किए थे । प्रतिवर्ष वे कम-से-कम एक अट्ठाई तो करते ही थे ।

महानिशीथ तक के सभी जोग वर्षीतप में उपवास व आयंबिल द्वारा ही किए थे ।

उन्होंने अपने अल्प संयम पर्याय में पंच प्रतिक्रमण, श्रमण क्रिया के

सूत्र, चार प्रकरण, तीन भाष्य, 4 कर्म ग्रंथ, संस्कृत दो बुक, चूलिका सहित दशवैकालिक, धनंजय नाममाला, प्राकृत व्याकरण, सिद्धहैम धातु पाठ, तत्त्वार्थ सूत्र, योगशास्त्र, वीतराग स्तोत्र, आउर पच्चक्खाण, पंचसूत्र, हृदय प्रदीप षट्त्रिंशिका, परमानंद पंचविंशिका, आनंदघन चोवीशी आदि कंठस्थ किए थे ।

प्रतिदिन रात्रि में 10 बजे तक स्वाध्याय करते थे । प्रतिक्रमण बाद किसी से बात न कर स्वाध्याय में मग्न रहते थे । नवकार के नौ लाख जाप भी किये थे । प्रतिदिन बिना पुस्तक धारणापूर्वक नवकार मंत्र की अनानुपूर्वी गिनते थे ।

उन्होंने आवश्यक सूत्र की बडी टीका, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पसूत्र, आचारांग, प्रज्ञापना सूत्र, जीवाभिगम सूत्र, विशेषावश्यक भाष्य, तत्त्वार्थ, लोक प्रकाश, योगशास्त्र, उपदेशपद, धर्मबिंदु, अष्टक, षोडशक, ललितविस्तरा आदि अनेक ग्रंथों का सटीक अध्ययन भी किया था ।

ज्ञान और तप का उनके जीवन में अपूर्व संगम था । इसी के फलस्वरूप वे ज्ञान के अपूर्व फल-समाधि भाव को सहजता से साध सके थे ।

अंत समय में उनकी आँखें ध्यानस्थ योगी की तरह अर्द्ध उन्मीलित थी, जो लगभग ½ घंटे तक रही थीं ।

उनके कालधर्म के समाचार सुनकर आसपास के गाँवों से सैकड़ों लोग उनके अंतिम दर्शन के लिए उपस्थित हुए थे ।

देवविमान तुल्य उनकी पालखी में 5 से 6000 तक की जनमेदिनी उपस्थित थी-पालखी में चार बैंड थे । अग्निसंस्कार समय पुलिस बैंड ने भी उन्हे सलामी दी थी ।

पूज्य मुनिश्री की मृत्यु भी शासनप्रभावना में प्रबल निमित्त बनी थी ।

भक्ति में लीन पू. मुनि श्री चंद्रसेनविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं. 2009
माघ शुक्ला-11

कालधर्म
वि.सं. 2065
आसो सुदी-12

दीक्षापर्याय 56 वर्ष

भावनगर (गुज.) जिले के तलाजा तीर्थ में श्रेष्ठी श्री छगनभाई की धर्मपत्नी जवेरबेन ने वि.सं. 1984 कार्तिक शुक्ला एकादशी के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया । नाम रखा गया चंपकभाई !

पू. प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. की संयम निष्ठा से आकर्षित बने चंपकभाई के दिल में संयम की भावना जागृत हुई और पूज्यश्री के सान्निध्य में संयम की ट्रेनिंग लेने लगे ।

गुरुसमर्पणभाव ऐसा था कि दीक्षा की पूर्व रात्रि तक उन्हें पता नहीं था कि वे किसके शिष्य बनेंगे ? **पू. प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** के वरद हस्तों से वि.सं. 2009 माघ शुक्ला एकादशी के शुभ दिन मुंबई में दीक्षित बने चंपकभाई **पू. प्रेमसूरीश्वरजी** के निर्देशानुसार **पू. मुनि श्री चंद्रशेखरविजयजी म.** के शिष्य बने और उनका नाम **मुनि श्री चंद्रसेनविजयजी म.सा.** रखा गया । उसी दिन **पू. विमलसेनविजयजी म.सा.** तथा **पू. चंद्राशुविजयजी म.सा.** की भी दीक्षा हुई ।

दीक्षा के बाद प्रारंभिक वर्षों में ग्रहण और आसेवन शिक्षा ग्रहणकर **पू. प्रेमसूरिजी म.सा.** की आज्ञा से **पू. श्री मानतुंगविजयजी म.सा.** की निश्रा में रहने लगे ।

प्रभुभक्ति का सहज रस होने से **पू. मानतुंगसूरिजी म.सा.** के

साथ वे भी त्रिकाल देववंदन करते थे । प्रभुभक्ति के सैकड़ों स्तवन स्तुतियाँ चैत्यवंदन कंठस्थ की थी ।

वाचना व प्रवचन-श्रवण में भी खूब रुचि थी । **पू.आ. श्री मानतुंगसूरिजी म.** एवं **पू.आ. श्री रविप्रभसूरिजी म.सा.** के कालधर्म के बाद **पू. महाबलसूरिजी म.सा.** की सूचना से वे वि.सं. 2060 से **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में रहने लगे ।

उनमें किसी का भी सहायक बनने का विशिष्ट गुण था । विहार में भी आगे पहुँचने के बाद दूसरों के पात्र आदि पड़िलेहन करना, कोई बीमार हो जाय तो उसकी सेवा शुश्रूषा में कोई कमी नहीं रखना आदि उनके विशेष गुण थे । उनके जीवन में कषाय तो नामशेष हो गए थे ।

छोटे मुनियों को स्वाध्याय-वाचन कराने में भी खूब रुचि रखते थे ।

वि.सं. 2065 नीलम विहार पालीताणा मे चातुर्मास दरम्यान स्वास्थ्य बिगड़ा । श्वास की तकलीफ चालू हुई । उपचार से पता चला कि फेफड़े कमजोर हो गए हैं ।

आसो सुदी-12 की रात्रि में नींद नहीं आ रही थी तो गेलेरी में सिद्धगिरि के सामने बैठकर सिद्धगिरि का ध्यान करने लगे, वे सभी सहवर्ती मुनियों के नाम की माला गिनने लगे ।

रात को तीन बजे कुछ महात्माओं के नाम भूल गए तो **पू.पं. हेमप्रभविजयजी म.सा.** को बुलाकर नाम पूछे । फिर जाप करने लगे ! थोड़ी देर बाद **हेमप्रभविजयजी म.सा.** को कहा, ``मुझे कुछ सुनाओ ।''

पू.पं. हेमप्रभविजयजी म.सा. समाधि के स्तोत्र सुनाने लगे । 4 बजे प्रतिक्रमण चालू किया और 4.30 बजे हृदय पर हमला होने से सिद्धगिरि के सान्निध्य में नवकार का स्मरण व श्रवण करते हुए समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

निश्रावर्ती

तपस्वी मुनि श्री मित्रविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2010
महा सुदी-10

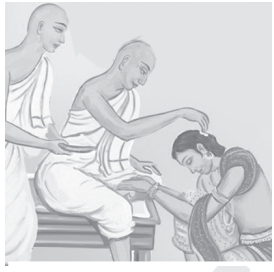

कालधर्म
वि.सं.2067
मार्ग शीर्ष
शुक्ला-12

दीक्षापर्याय 57 वर्ष

राजस्थान की धन्यधरा आहोर में सुश्रावक झूठाजी की धर्मपत्नी समुदेबेन ने वि.सं. 1982 भादों वदी-14 के दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम मिश्रीमल रखा गया ।

छोटी उम्र में ही पिता का अवसान हो गया । चार भाई–दो बहने और माताजी के 7 के परिवार की समस्त जवाबदारी बडे भाई के कंधों पर आ गई । इधर मिश्रीमल की वैराग्य भावना दृढ बनती गई ।

कुछ समय बाद बडे भाई का भी अवसान हो गया । परिणाम स्वरूप घर की सारी जवाबदारी मिश्रीमलभाई के ऊपर आ गई । आखिर 10 वर्ष तक पारिवारिक जवाबदारी वहन की ।

परिवार धार्मिक संस्कारों से भावित होने से 28 वर्ष की युवावस्था में मिश्रीमल ने वि.सं. 2010 महा सुदी-10 का भागवती दीक्षा अंगीकार की और वे पू. बापजी म. के समुदाय के **मुनि श्री सौभाग्यविजयजी** के शिष्य बने ।

अभ्यास आदि के लिए वे **पू. प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** की निश्रा में रहे । उन्हें वैयावच्च में खूब रस था ।

पू. प्रेमसूरिजी म.सा. के कालधर्म के बाद वे **पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की निश्रा में आ गए और जीवन पर्यंत उनके आज्ञानुवर्ती रहे । उनमें तप और वैयावच्च के दो मुख्य गुण थे । उन्होंने 108 अट्ठम भी किए और वि.सं. 2030 में वर्धमान तप की 100 ओली भी पूर्ण की ।

उसके बाद 101, 102 इस प्रकार 110 ओलियाँ भी कीं तथा 100 + 60 ओलियां भी कीं । अट्ठम, अट्ठाई, सिद्धितप, श्रेणीतप आदि अनेक तपश्चर्याएँ भी कीं ।

वडिलों की आज्ञा से दूर-दूर के क्षेत्रों में तथा लंबे-लंबे विहार में भी लेश भी संकोच नहीं रखते थे ।

किसी का भी सहायक बनना यह उनका मुख्य गुण था । पर के प्रति सरलता-नम्रता के साथ वे स्व के प्रति खूब कठोर थे । पू. पंन्यासजी भगवंत के कालधर्म के बाद वे **पू.आ.श्री प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** के साथ मे रहे ।

अन्य अन्य महात्माओं के सहायक बनने के लिए उन्होंने राजस्थान से मुंबई, मुंबई से राजस्थान, राजस्थान से गुजरात से गुजरात के भी खूब विहार किए ।

–स्वयं के आयंबिल का तप होने पर भी वे मांडली की भक्ति के लिए दो–दो बार भी झोली भरकर गोचरी ले आते थे । उन्होंने **पू. सिद्धिसूरिजी** (बापजी म.) की जीवन के अंतिम समय तक भक्ति की थी ।

–एक बार देलवाडा तीर्थ (आबू) के विहार में रींछ का उपद्रव हुआ था । रींछ ने कान काट लिया था, परंतु जोर जोर से **'नमो अरिहंताणं'** बोलने से रींछ भी भाग गया था ।

उन्हें तीन बार T.B. हो गया था, परंतु स्वस्थ होते ही वे आराधना–तपश्चर्या में जुड जाते थे ।

–उन्होंने अपने जीवन में 2 मासक्षमण, 1 सोलह उपवास, 1 बार 11 उपवास, 1 बार 9 उपवास, आठ बार अट्ठाई, 108 अट्ठम, दो वर्षीतप, तीन सिद्धितप, एक श्रेणीतप, नवपदजी की 110 ओली, वर्धमान तप 100 + 60 ओली, दो बार नव्वाणु यात्रा, बीस स्थानक तप, ज्ञान पंचमी तप, मौन एकादशी तप आदि खूब तुप कर काया की ममता दूर कर दी थी ।

अंतिम आराधना

87 वर्ष की उम्र में वे पालीताणा में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.** की निश्रा में कस्तुरधाम में बिराजमान थे ।

मृत्यु के 1½ मास पूर्व उन्होंने कहा, `मुझे गिरिराज की छाया में ही रहना है और मुझे संलेखना करनी है ।'

धीरे धीरे अंतरंग साधना आगे बढ रही थी । वे सतत पंच सूत्र और अमृतवेल की सज्झाय का स्वाध्याय करते थे ।

कार्तिक पूनम, कार्तिक वदी-8 व 14 के दिन गिरिराज की भावपूर्वक यात्रा की । अशक्ति बढ रही थी । डॉ. ने चेक किया तो हेमोग्लोबीन 3 हो गया था । Blood चढाने की बात आई तो उन्होंने इन्कार कर दिया । बस, अब मुझे सिर्फ आराधना कराओ ।

जिनालय में वे भावपूर्वक चैत्यवंदन बोलते थे । **'करी कुकर्म नरके गयो, तुम दरिसन नहीं पायो'** बोलते उनकी आंखों में आंसू आ जाते ।

कालधर्म के दो दिन पूर्व तक सभी स्थापनाचार्यजी का पडिलेहन स्वयं ही करते थे ।

अंतिम दिन उन्होंने पू. पंन्यासजी म. को कहा, **'आज मेरा अंतिम दिन है, मुझे उपवास का पच्चक्खाण दो ।'** उन्हें उपवास का पच्चक्खाण दिया गया, वे खूब खुश हो गए ।

फिर प्रभु दर्शन कर नवकार के जाप में लीन बन गए । थोडी देर बाद बोले, `बस, मुझे अंतिम आराधना का स्वाध्याय कराओं ।'

पू.मु. श्री हेमप्रभविजयजी म. ने अंतिम आराधना के स्वाध्याय के लिए महात्माओं की व्यवस्था कर दी ।

दोपहर 3.40 बजे तक श्रवण चालू रहा, फिर उन्हें स्थंडिल की शंका हुई । स्थंडिल में श्रम लगने से उन्हें सुला दिया गया ।

आंखें स्थिर होती दिखाई दी, चतुर्विध संघ इकट्ठा हो गया । नवकार की धून चली...और नवकार का श्रवण करते हुए अत्यंत समाधिपूर्वक मार्गशीर्ष शुक्ला 2, वि.सं. 2067 दि. 7-12-2010 के शुभ दिन 4.25 बजे अपने भौतिक देह का त्याग कर परलोक के लिए प्रयाण कर लिया ।

वंदन हो त्याग, तप व सेवाभाव की मूर्ति को ।

7

निश्रावर्ती

पू. सेवाभावी मुनि श्री तत्त्वज्ञविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2011
जेठ सुदी-10

कालधर्म
वि.सं.2045
फागुण वदी-1

दीक्षापर्याय 34 वर्ष

गुजरात की धन्यधरा पर वि.सं. 1975 के शुभदिन लालचंदभाई की धर्मपत्नी पार्वतीबेन की कोख से एक पुत्ररत्न का जन्म हुआ, नाम रखा गया तलकशीभाई ! बचपन से ही संयम का प्रेम होने पर भी परिवार के दबाव से लग्न करना पडा । एक पुत्र व पुत्री पैदा हुए ।

पू. प्रेमसूरिजी म.सा. के संपर्क से व्यवसाय बंद किया । दीक्षा का संकल्प किया । पुत्र को भी धर्ममार्ग में जोड़ने का पुरुषार्थ किया परंतु पूरी सफलता नहीं मिली ।

आखिर वि.सं. 2011 जेठ सुदी-10 के शुभ दिन खडकी-पूना में **पू. पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** की शुभ निश्रा में भागवती दीक्षा अंगीकार की ।

निःस्पृही ऐसे पू. पंन्यासजी म.सा. ने उन्हें **पू. रोहितविजयजी म.सा.** का शिष्य बनाया और नाम रखा गया **तत्त्वज्ञविजयजी म.सा.** ।

त्याग व तपोमय जीवन के साथ गुर्वाज्ञा-पालन में खूब उत्सुक थे । उन्होंने वर्धमान तप की 60 ओलियाँ भी कीं । हालार की प्रजा को धर्म-मार्ग में जोड़ने के लिए वे **पू. महासेनविजयजी म.सा.** के खूब सहयोगी बने ।

किसी भी विशेष प्रसंग पर मंगल के लिए वे भात-पानी का शुद्ध आयंबिल करते थे । पूर्व जन्म के पापोदय से उन्हें बड़ी उम्र में कैंसर हो गया, परंतु उस व्याधि में भी उनकी अपूर्व समाधि थी ।

वि.सं. 2045 फागुण वदी-1 के दिन अहमदाबाद गिरधरनगर में अत्यंत ही समाधि के साथ अपने भौतिक देह का त्याग कर परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया । ***धन्य संयमी ! धन्य तपस्वी !!***

अपूर्व समाधि साधक पू. मुनि श्री जयंतभद्रविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं. 2025
मग. सुद-6

कालधर्म
वि.सं.2044
जेठ सुदी-5

दीक्षापर्याय 19 वर्ष

राधनपुर (गुजरात) अर्थात् एक धर्मनगरी, जहाँ 25 से भी अधिक प्राचीन जिनालय हैं तो जहाँ लगभग घर-घर में से भागवती दीक्षाएं हुई है। जो अनेक आचार्यों व साधु-साध्वीजी भगवंतों की जन्मभूमि रही है।

ऐसी ही पवित्र भूमि में वि.सं. 1975 कार्तिक वदी-4 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न का जन्म हुआ जिसका नाम जयंतिभाई रखा गया।

माता-पिता खूब धर्मप्रेमी और संस्कारी होने से जयंतिभाई को बचपन से ही खूब संस्कार मिले।

सद्गुरु भगवंतों के समागम से बचपन में ही जयंतिभाई की धर्मश्रद्धा अत्यंत दृढ़ बन गई थी। परंतु उनके पिताजी का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था। इधर उनकी माताजी और बहन की भी दीक्षा की भावना हो गई।

उन्होंने अपने पिताजी की सारी जवाबदारी उठा ली और माताजी और बहन को दीक्षा के लिए अनुकूलता कर दी, जिसके फलस्वरूप वि.सं. 2014 में उन दोनों की दीक्षा हो गई।

अपनी माता व बहन की दीक्षा के बाद जयंतिभाई अलिप्त भाव से संसार में रहने लगे।

आजीविका के लिए जयंतिभाई को मुंबई जाना पडा, परंतु वहाँ भी नौकरी करते समय वे अपनी दैनिक आराधनाएँ दोनों टाइम प्रतिक्रमण, जिनपूजा, प्रवचनश्रवण, रात्रिभोजनत्याग आदि का अच्छी

तरह से पालन करते थे । उनके मन, धन से भी ज्यादा कीमत धर्म की थी ।

मुंबई में एक बार उन्हें **अध्यात्मयोगी पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.** का परिचय हुआ । एक ही परिचय में उन्होंने मन में **पूज्य पंन्यासजी महाराज** को अपने जीवन रथ के सारथी (गुरु) के रूप में स्थापित कर दिया । उन्होंने गुरुदेव को अपनी भावना व्यक्त की । गुरुदेव की सहमति प्राप्त कर जयंतिभाई गुरुदेव के सान्निध्य में रहकर संयम-जीवन का प्रशिक्षण लेने लगे ।

पूज्यश्री का जहाँ चातुर्मास होता वहाँ वे बालकों को धार्मिक शिक्षण देने लगे । हालार, राजस्थान व गुजरात के अनेक क्षेत्रों में उन्होंने अनेक को धार्मिक शिक्षण दिया ।

उनका स्वभाव अत्यंत ही शांत था । बालकों को शिक्षण देते समय जब कुछ बालक ज्यादा मस्ती करते तब कोई उन्हें कठोर बनने की सूचना करते तो वे कहते **''मुझे गुस्सा करना आता ही नहीं है । अतः मुझे शिक्षक के रूप में रखना हो तो मेरे इस स्वभाव को निभाना ही पडेगा ।''**

वि.सं. 2023 में अपनी जन्मभूमि राधनपुर में **पू.पं. श्री मुक्ति-विजयजी म.** की निश्रा में उन्होंने वर्धमान तप की 100 ओली भी पूर्ण की । कुछ समय बाद अत्यंत समाधि के साथ उनके पिताजी का स्वर्गवास हो गया ।

बस, अब उनके दिल में एक ही तमन्ना थी कि मुझे संयम की प्राप्ति कब होगी ?

उन्होंने अपनी भावना गुरुदेव को व्यक्त की । उनकी विशिष्ट योग्यता व पात्रता को देख गुरुदेव ने दीक्षा प्रदान के लिए अपनी सहमति प्रदान की और एक शुभ दिन लुणावा (राज.) में वि.सं. 2025 मार्गशीर्ष शुक्ला-6 के शुभ दिन उनकी भागवती-दीक्षा हुई । उनका नाम **मुनि श्री जयंतभद्रविजयजी** रखा गया और उन्हें **तपस्वी पू. मुनि श्री महाभद्रविजयजी म.सा.** के शिष्य के रूप में घोषित किया गया ।

जैनी भागवती दीक्षा अर्थात् अपने मन, वचन और काया के योगों का सर्वसमर्पण ! पू. मुनि श्री जयंतभद्रविजयजी म.सा. ने गुरुसमर्पण भाव को अपने जीवन में इस हद तक आत्मसात् कर लिया

था कि गुरु की आज्ञा होते ही उनके मुख से 'तहत्ति' के सिवाय दूसरा विकल्प नहीं होता था ।

बाल-वृद्ध-ग्लान की वैयावच्च में उन्हें तीव्र अभिरुचि थी । उन्होंने वयोवृद्ध **मुनिराज श्री कैलाशप्रभविजयजी म.सा.** की लुणावा में पाँच वर्ष तक अखंड सेवा की थी । उसके बाद **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.सा.** एवं **पू. धर्मरत्नविजयजी म.सा.** की भी खूब सेवा-भक्ति की थी ।

उन्हें आयंबिल का तप खूब प्रिय था । उन्होंने वर्धमान तप की 100 + 82 ओलियाँ द्वारा लगभग 9500 आयंबिल किए थे । आयंबिल में भी वे मात्र दो ही द्रव्य लेते थे । वर्धमान तप के सिवाय भी नवपद ओली, ज्ञान पंचमी आदि की सुंदर आराधनाएँ की थीं ।

परमात्म-भक्ति में भी उन्हें खूब रस था । वे जिनालय में नियमित देववंदन करते । सैकडों स्तुति-स्तवन व सज्झाय उन्हें कंठस्थ थीं । प्रतिदिन नए-नए स्तवन गाते थे । प्रतिक्रमण में हमेशा नई नई सज्झाय सुनाते थे ।

सूखा मेवा और फल आदि का लगभग त्याग था ।

मेरी भागवती दीक्षा वि.सं. 2033 में हुई । **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.** के साथ मेरा प्रथम चातुर्मास पाटण में हुआ । उस समय **मु. जयंतभद्र-विजयजी म.** भी साथ में थे । उसके बाद 2034 व 2035 में भी पाटण चातुर्मास में वे **पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.सा.** के साथ में थे ।

मैंने उनकी जीवन-चर्या को खूब निकट से देखा है । क्रोध का तो उनके जीवन में नामो निशान नहीं था । हर संयोग में उनके चेहरे पर प्रसन्नता ही नजर आती थी ।

पाटण में उनके साथ मेरे तीन चातुर्मास दरम्यान उनके जब वर्धमान तप की ओली चलती थी तो वे बाहर से गोचरी में निर्दोष लूखी रोटी ले आते थे और आयंबिल खाते से सिर्फ मूंग की दाल लेते थे । इसके सिवाय वे आयंबिल में कुछ भी चीज नहीं लेते थे ।

सचमुच, उनके आयंबिल में 'स्वाद-जय' की विशिष्ट साधना थी । विविध प्रकार की वस्तुएँ और गर्मागर्म वस्तुओं के द्वारा आयंबिल तप में भी रसना के शोषण के बजाय रसना का पोषण हो जाता है, परंतु उनकी आयंबिल की साधना में स्वाद का लेश भी पोषण नहीं था ।

वे हमेशा भगवान महावीर की पाटपरंपरा में हुए सभी प्रभावक

महापुरुषों को याद कर उनके प्रभावक कार्यों की अंतः करण से अनुमोदना करते थे । इसी के फलस्वरूप उनके जीवन में सदैव प्रसन्नता और समाधि थी ।

दुःख-दर्द या प्रतिकूल संयोगों में भी उनके जीवन में किसी प्रकार की दीनता नहीं थी ।

अध्यात्मयोगी पू. पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. के कालधर्म के बाद वे सौजन्यमूर्ति **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रद्योतन-सूरीश्वरजी म.सा.** के सान्निध्य में रहते थे ।

वि.सं. 2040 में **परम शासन प्रभावक गच्छाधिपति पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की निश्रा में उन्होंने सिद्धगिरि-पालीताणा में चातुर्मास किया । उस चातुर्मास दरम्यान उन्होंने अप्रमत्त भाव से 16 उपवास की भी तपश्चर्या की थी । उनके जीवन में लेश भी प्रमाद नहीं था, श्रमण जीवन की क्रियाओं से निवृत्त होते ही वे नवकार जाप में लीन हो जाते थे । प्रतिदिन वे नवपद आदि के विविध कायोत्सर्ग भी करते थे ।

वि.सं. 2044 में **पू. प्रद्योतनसूरिजी म.सा.** के साथ जामनगर से विहार कर शंखेश्वर पधारे । शंखेश्वर महातीर्थ में सामुदायिक नवपद ओली की आराधना बहुत ही सुंदर ढंग से संपन्न हुई । उस समय **मुनि श्री जयंतभद्रविजयजी म.** ने वर्धमान तप की 82 वीं ओली भी पूर्ण की ।

उसके बाद राता महावीरजी, सेवाड़ी आदि तीर्थों की यात्रा कर उम्मेदाबाद गोल में अंजनशलाका प्रतिष्ठा प्रसंग होने से उस ओर विहार कर जालोर पधारे ।

जालोर में लू लग जाने से मुनिश्री का स्वास्थ्य थोड़ा खराब हुआ । बाह्य उपचार चालू किए गए । फिर भी शरीर खूब अशक्त हो गया था ।

वैशाख जेठ वदी-14 को उनके स्वास्थ्य में सुधारा देखकर पू. आचार्य भगवंत ने उम्मेदाबाद की ओर विहार किया । **मुनि श्री नयभद्रविजयजी म.** उनकी सेवा में थे । वे जालोर ही रुक गए थे ।

ज्येष्ठ सुदी-5 के दिन उनका स्वास्थ्य ज्यादा खराब हुआ । बाह्य उपचार चालू थे । फिर भी उनकी समाधि उच्च कोटि की थी ।

ठीक दोपहर में 1 बजे नमस्कार महामंत्र का श्रवण व स्मरण करते हुए उन्होंने अत्यंत ही समाधि के साथ अपना भौतिक देह छोड दिया और परलोक के पथ पर प्रयाण कर दिया । धन्य हो समाधि-साधक महात्मा को !

निश्रावर्ती

आयंबिल प्रेमी पू.मुनि श्री जयमंगलविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2026
ज्येष्ठ शुक्ला-10

कालधर्म
वि.सं.2053
श्रा. सुदी-12

दीक्षापर्याय 27 वर्ष

पावनभूमि गिरनार तीर्थ के समीप जूनागढ़ गाँव में श्रेष्ठीश्री अमरशीभाई की धर्मपत्नी मोंघीबेन ने वि.सं. 1973 फा. वदी-11 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया मोहनभाई ।

गिरनार तीर्थ का शुभ सान्निध्य और माता-पिता के द्वारा सुसंस्कारों के सिंचन के फलस्वरूप मोहनभाई की धर्मभावना दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गई ।

वे स्वयं धर्म-आराधना और आयंबिल तप करते और दूसरों को भी आराधना में जुड़ने की प्रेरणा करते रहते थे ।

कैलाशनगर के मगनभाई को संयमजीवन की ओर प्रेरित करनेवाले ये मोहनभाई ही थे ।

एक बार मैत्री भाव के साक्षात् अवतार स्वरूप योगिराज पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. के परिचय संपर्क में आए और प्रथम परिचय में ही उनको अपने हृदय मंदिर में गुरुपद पर प्रतिष्ठित कर दिया । धीरे-धीरे उनके सान्निध्य में रहकर साधु-जीवन का प्रशिक्षण लेने लगे, जिसके फलस्वरूप वि.सं. 2026 जेठ सुदी-10 के शुभदिन बेड़ा (राज.) की धन्यधरा पर भागवती-दीक्षा अंगीकार की । पूज्य पंन्यासजी म. की आज्ञानुसार उन्हें पू. मुनि श्री महाभद्रविजयजी

म.सा. का शिष्य बनाया गया और उनका नाम मुनि श्री जयमंगलविजयजी म.सा. रखा गया ।

गुर्वाज्ञा को अपना प्राण बनाकर पूज्य गुरुदेव पंन्यासजी म. की जो-जो आज्ञा होती, उसे शिरोधार्य कर उस अनुरूप जीवन जीने लगे ।

विनय-सेवा-वैयावच्च आदि गुणों को जीवन में आत्मसात् किया । विजातीय के परिचय से सदैव दूर रहकर निर्मल ब्रह्मचर्य की साधना में तत्पर रहते थे ।

वि.सं. 2030 में उन्होंने वर्धमान तप की 100 ओली भी खूब उत्साह-उल्लास से पूर्ण की । आयंबिल का तप उनके लिए सहज था, अतः कई बार चातुर्मास में 4-4 माह तक आयंबिल ही करते थे । उन्होंने वर्धमान तप की 100 + 20 ओलियाँ की । ओली सिवाय वे नित्य एकासना करते थे ।

पू. आचार्य भगवंत श्रीमद् विजय रामचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्य **पू.मुनि श्री प्रकाशविजयजी म.सा.** जो अहमदाबाद-ज्ञानमंदिर में स्थिरवास रहे हुए थे, उनके एक हाथ की कोहनी सड़ जाने के कारण उनका हाथ कटाना पड़ा था । ऐसे ग्लान महात्मा की **पू.मुनि श्री जयमंगलविजयजी म.सा.** ने खूब भावोल्लास पूर्वक सेवा-शुश्रूषा की और जबरदस्त पुण्योपार्जन किया व कर्मनिर्जरा की ।

उसके बाद कुछ वर्षों तक राजस्थान में **पू. मुनि श्री मल्लिषेण-विजयजी म.सा.** के सान्निध्य में रहे । फिर अस्वस्थता बढ़ने पर वे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में आ गए ।

अंतिम चार वर्ष उनके सान्निध्य में रहे । स्मरणशक्ति घटने लगी.... परंतु आराधना-जाप में पूर्ण स्थिर रहे ।

वि.सं. 2053 में वढ़वाण में चातुर्मास था तब श्वास की तकलीफ बढ गई । श्रावण सुदी-12 के दिन प्रातः 4.20 बजे **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** एवं **पू. मुनि श्री हेमप्रभविजयजी म.सा.** के मुख से नवकार श्रवण करते खूब समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए । वंदन हो सुसंयमी महात्मा को ।

ज्ञानप्रेमी पू. मुनि श्री हितविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2018
पौष सुदी-12

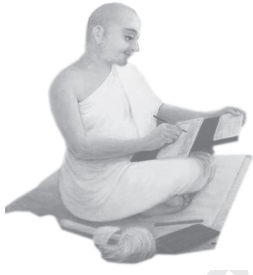

कालधर्म
वि.सं. 2072
श्रावण वदी-8

दीक्षापर्याय 54 वर्ष

सावरकुंडला निवासी दलीचंदभाई की धर्मपत्नी चंदुबेन ने वि.सं. 1989 मार्गशीर्ष शुक्ला एकम् के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया। नाम रखा गया हीरालाल !

माता-पिता खूब आराधक थे, अतः बचपन से ही धार्मिक संस्कार प्राप्त हुए। **प.पू. आ. श्री रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के प्रेरणादायी प्रवचनों से वैराग्य भाव पुष्ट हुआ। वि.सं. 2018 पौष सुदी-12 के शुभ दिन 29 वर्ष की उम्र में **पू. प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** की निश्रा में दीक्षा अंगीकार कर **पू.आ. श्री रविचंद्रसूरिजी म.सा.** के शिष्य बने।

उन्हें सम्यग्ज्ञान में विशेष रुचि थी। सूत्रों के शुद्ध उच्चारण, संयुक्ताक्षर के शुद्ध उच्चारण आदि के लिए अनेक उपयोगी पुस्तकों का आलेखन किया।

जंघाबल क्षीण होने पर ज्ञानमंदिर अहमदाबाद में स्थिरवास रहे।

वि.सं. 2070 में महोदयधाम में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में चातुर्मास में रहे फिर वि.सं. 2071 में **पू. नयवर्धनसूरिजी म.सा.** की निश्रा में, उसके बाद वि.सं. 2072 में शांतिनगर में **पू. पंन्यास श्री वज्रेसनविजयजी म.सा.** की निश्रा में चातुर्मास में रहे थे।

श्रावण वदी-8 को अचानक अस्वस्थ हुए। पाँवों में सूजन, रक्त-विकार हो गया। उपचार करने पर भी स्वस्थता नहीं आई ! श्रावण वदी-9 को रात्रि में 3.10 बजे **पू. मनमोहनसूरिजी म.सा.** व **हेमप्रभसूरिजी** के मुख से नवकार सुनते हुए समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए।

तपस्वी पू. मुनि श्री मनोबलविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2021
वैशाख सुदी-6

कालधर्म
वि.सं. 2073
भादो सुदी-11

दीक्षापर्याय 52 वर्ष

वि.सं. 1988 श्रावण वदी अमावस्या के शुभ दिन उमेटा (गुज.) में खेमचंदभाई की धर्मपत्नी माणेकबेन ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया मनुसुखभाई ।

33 वर्ष की युवावस्था में **प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरिजी म.सा.** की आज्ञा व आशीर्वाद से वि.सं. 2021 वैशाख सुदी-6 के शुभ दिन भावनगर में भागवती दीक्षा अंगीकार की और पू. तपस्वी सम्राट् **आ.श्री राजतिलकसूरिजी म.** के शिष्य **मु.श्री मनोबलविजयजी** बने ।

वर्षों तक तपस्वी सम्राट् की खूब सेवा भक्ति की । अपने गुरुदेव के कालधर्म के बाद गुरुबंधु **मु.श्री विनयबलविजयजी** के साथ रहे ।

पालीताणा में गिर जाने से पांव में फेक्चर हो गया, श्रवण शक्ति भी क्षीण हो गई । उस स्थिति में वे **पू.पं.श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के साथ में रहे । **पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.** के शिष्यों ने उनकी खूब सेवा की ।

वि.सं 2073 में उनका चातुर्मास **पू.मु.श्री कमलसेनविजयजी** तथा **पं.श्री जयधर्मविजयजी** के साथ बोरसद (गु.) में था । पर्वाधिराज की आराधना सानंद संपन्न हुई ।

भादो सुदी-8 से बुखार-सर्दी-खांसी चालू हुई, वैद्य का उपचार किया ।

भादो सुदी-11 को अस्वस्थता बढ गई । नवकार की धून चालू की और ठीक 6.25 बजे अत्यंत समाधि पूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।

52 वर्ष के दीर्घ संयम पालन द्वारा जीवन को सफल व सार्थक बनानेवाले महात्मा को भावभरी वंदना ।

विशुद्ध संयमी पू. मुनि श्री तपोधनविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2023
जेठ सुदी-13

कालधर्म
वि.सं. 2056
माघ शुक्ला-14

दीक्षापर्याय 33 वर्ष

खंभात (गुज.) निवासी नगीनदासभाई की धर्मपत्नी चंदनबेन ने वि.सं. 1986 मार्गशीर्ष कृष्णा 8 के शुभदिन एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया बाबुभाई। यौवन वय में लग्न ग्रंथि से जुडने पर भी उनका मन तो भागवती दीक्षा के लिए ही उत्कंठित था, इसी के फल स्वरुप **पू.आ. श्री रामचन्द्रसूरिजी म.सा.** के प्रवचन श्रवण के बाद दीक्षा के लिए दृढ निश्चयी बने और वि.सं. 2023 जेठ सुदी-13 के शुभदिन लालबाग–मुंबई में भागवती दीक्षा स्वीकार कर **पू.आ.श्री रामचन्द्रसूरिजी म.सा.** के शिष्य **मु.श्री तपोधनविजयजी** बने। अपने नाम के अनुरुप ही उनमें गुण भी थे। तप में उन्हें विशेष रुचि थी।

निर्दोष भिक्षाचर्या में वे खूब प्रयत्नशील रहते थे। वर्षों तक गुरु निश्रा में रहकर आराधना–साधना की। अपने गुरुदेवश्री के कालधर्म के कुछ वर्षों बाद **पू.पं.श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में आ गए।

निर्दोष भिक्षा के लिए वे 1-1½ कि.मी. दूर भी जाते थे। भयंकर ठंडी आदि में भी वे प्रातः प्रतिक्रमण–पडिलेहन आदि क्रियाएं मूल विधि अनुसार ही करते थे। संस्कृत भाषा पर भी उनका अच्छा प्रभुत्व था। शास्त्रों के अभ्यास के साथ वे शास्त्र पाठों का संग्रह भी करते थे। सुंदर व बारीक अक्षरों में उन्होंने दो नोटे तैयार की थी। अंतिम संयम में 1½ मास पूर्व न्युमोनिया हो गया, परंतु उपचार आदि के लिए भी उन्होंने अपवाद रुप में भी वाहन आदि का उपयोग नहीं किया। धीरे धीरे स्वास्थ्य बिगड रहा था, परंतु उनकी समाधि अपूर्व कोटि की थी। खूब समाधिपूर्वक वि.सं. 2056, माघ शुक्ला चतुर्दशी के दिन प्रातः 9.27 बजे हालार तीर्थ में चतुर्विध संघ की उपस्थिति में देह का त्याग कर परलोक के पंथ पर प्रयाण कर दिया।

निश्रावर्ती

सुसंयमी पू. मुनि श्री सुव्रतविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2024
वैशाख सुदी-6

कालधर्म
वि.सं. 2071
मार्गशीर्ष
कृष्णा-5

दीक्षापर्याय 47 वर्ष

भावनगर (गुज.) जिले के महुवा गाँव के पास तरेड नाम के गाँव में गोरधनभाई की धर्मपत्नी अजवालीबेन ने वि.सं. 1982 मार्गशीर्ष शुक्ला-8 के शुभ दिन एक पुत्ररत्न को जन्म दिया । बालक का नाम रखा गया जग-जीवनदास !

प्रारंभिक अभ्यास के बाद जगजीवनदास ने अपने गाँव में छोटा सा व्यापार प्रारंभ किया ।

जगजीवन को व्यापार में नीतिमत्ता खूब पसंद थी, अन्याय-अनीति का धन उनके लिए धूल बराबर था ।

महुवा में प्रतिवर्ष चातुर्मास हेतु आनेवाले **पू. नेमिसूरिजी** समुदाय के महात्माओं के संपर्क से जगजीवन की धर्मभावना वेगवती हुई । जिसके फलस्वरूप वि. सं. 2024 वैशाख सुदी-6 के शुभ दिन **पू. मानतुंगसूरिजी म.सा.** के वरद हस्तों से पालीताणा में दीक्षित हुए । जगजीवन का नाम **मुनि श्री सुव्रतविजयजी म.सा.** रखा गया और वे **पू. श्री सुधांशुविजयजी म.सा.** के शिष्य बने ।

अपने गुरुदेव के कालधर्म बाद **पू. रविप्रभसूरिजी म.सा.** की निश्रा में रहे ।

वि.सं. 2056 में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के पालीताणा चातुर्मास दरम्यान **मुनि श्री सुव्रतविजयजी म.सा.** उनकी निश्रा में आ गए और जीवन पर्यंत उनकी निश्रा में ही रहे ।

वे दीक्षा के बाद नियमित एकासना करते थे । महीने में दो चतुर्दशी व सुद पंचमी को उपवास व अष्टमी को आयंबिल करते थे ।

जीवन के अंतिम वर्ष तक प्रतिवर्ष नवपद की ओली में आयंबिल करते थे ।

वि.सं. 2070 में शांतिभुवन-जामनगर चातुर्मास बाद उन्हें पेरालिसिस का हमला हुआ, ट्रीटमेंट से पुनः स्वस्थ हुए ।

वि.सं. 2071 में बोटाद में उपधान तप बाद पुनः पेरालिसिस का हमला हुआ । अहमदाबाद में योग्य उपचार करने पर भी पुनः स्वस्थता प्राप्त न हो सकी, फिर भी आत्मजागृति अच्छी थी । वे कहते थे- `मुझे अंतिम नवकार **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के मुख से सुनना है । उनकी यह भावना साकार बनी ।

वि.सं. 2071 मार्गशीर्ष कृष्णा-5 की शाम को 4.21 बजे **पू.पं. वज्रसेनविजयजी म.सा.** के श्रीमुख से नवकार सुनते हुए चतुर्विध संघ की उपस्थिति में नवकार श्रवण करते हुए उन्होंने सदा के लिए अपनी आँखें मूँद लीं । अत्यंत समाधिपूर्वक परलोक के पथ पर प्रयाण कर लिया ।

जीवन के अंतिम 17 वर्षों तक **पू. पंन्यास श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में रहकर उन्होंने अपने जीवन के साथ मृत्यु को भी धन्य बना दिया ।

कृतज्ञता के धनी पू.मुनि श्री पंकजरत्नविजयजी म.

दीक्षा
वि.सं. 2031
आसाढ सुदी-9

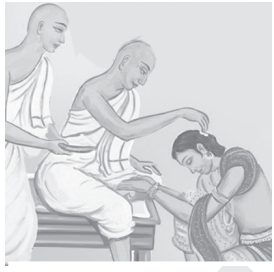

कालधर्म
वि.सं. 2065
जेठ सुदी-8

दीक्षापर्याय 34 वर्ष

गोड़वाड़ के सुप्रसिद्ध राणकपुर तीर्थ के समीप सादड़ी शहर में वरदीचंदजी की धर्मपत्नी प्यारीबेन ने वि.सं 1975 जेठ सुदी-8 के शुभदिन पुत्र को जन्म दिया । नाम रखा गया-पुखराज !

यौवन वय प्राप्त होने पर लग्न ग्रंथि से जुडे । दो पुत्रियों तथा पुत्र के पिता बने ।

मुंबई में **पू.आ. श्री रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के वैराग्यपोषक प्रवचन-श्रवण एवं मेवाड़ में विचरते हुए **पू.मुनि श्री जितेन्द्रविजयजी म.सा.** के संपर्क से वैराग्यवासित हुए ।

वि.सं. 2031 आषाढ़ सुदी-9 के शुभदिन माधवबाग-भूलेश्वर मुंबई में अपनी धर्मपत्नी व दोनों पुत्रियों के साथ **पू.आ.श्री रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** के वरद हस्तों से भागवती दीक्षा अंगीकार की । उनका नाम **मुनि श्री पंकजरत्नविजयजी म.सा.** रखा गया और वे **पू. मुनि श्री जितेन्द्रविजयजी म.सा.** के शिष्य बने । उनकी श्राविका **पू. जयाश्रीजी** के परिवार में **सा. श्री जयलताश्रीजी** बनी और दोनों पुत्रियाँ **सा. श्री मदनरेखाश्रीजी म.** एवं **सा. श्री ललितरेखाश्रीजी म.** बनी ।

कुछ वर्षों तक गुरुसान्निध्य में रहकर फिर स्वभावदोष व कर्मसंयोग से एकाकी हो गए । वर्षों तक उन्होंने अनाज का त्याग कर सिर्फ दूध और

फ्रुट पर रहने लगे । शत्रुंजयदादा के प्रति उन्हें अपूर्व भक्ति थी । अट्ठम के साथ छ गाउ की यात्रा, व चंदन तलावडी की यात्रा करते थे ।

वि.सं. 2058 में स्मृति मंदिर साबरमती की पावन प्रतिष्ठा के प्रसंग पर **पू.सा. श्री मदनरेखा-ललितरेखाश्रीजी म.सा.** ने **पूज्य पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** एवं **पू.मु. हेमप्रभविजयजी म.सा.** को विनती की कि **'पूज्य पिताजी महाराज को आप सँभाल लो तो बहुत बडा उपकार होगा ।'**

उदारहृदयी पू. पंन्यासजी ने उनकी विनती स्वीकार की और **पूज्य गच्छाधिपति आ. श्री महोदयसूरिजी म.सा.** की सहमति से **पू.मुनि श्री पंकजरत्नविजयजी म.सा., पू. पंन्यासजी वज्रसेनविजयजी म.सा.** की निश्रा में आ गए, तब से जीवन पर्यंत उन्हीं की निश्रा में रहकर संयम जीवन को सफल बनाया ।

वयोवृद्ध उम्र में जब छोटे मुनि उनकी खूब सेवा-भक्ति करते तब वे हृदय से उनकी खूब खूब अनुमोदना करते...और वे मुनि जब उनके जाप आदि की अनुमोदना करते तो वे कहते `यह सब आपकी कृपा से हो रहा है ।'

उनमें उपकारी के प्रति कृतज्ञता का भाव गजब का था । उन्होंने 8-6-15-3 आदि उपवास भी किए । संथारावश होने पर भी उन्होंने एक बार मांडली में पूरा प्रतिक्रमण पढ़ाया ।

वि.सं. 2064 के पाटण चातुर्मास बाद विहार करते करते जामजोधपुर पधारे । वहाँ उनका स्वास्थ्य खराब हो गया ।

वि.सं. 2065 जेठ सुदी-8 के दिन रात्रि में 2 बजे श्वास बढ गया । **पू. पं. हेमप्रभविजयजी म.सा.** के मुख से नवकार सुनते हुए संघ की उपस्थिति में उन्होंने समाधिपूर्वक अपने देह का त्यागकर परलोक के पथ की ओर प्रयाण कर दिया ।

धन्य महात्मा ! धन्य साधना !!

निश्रावर्ती

पू. मुनि श्री विमलरक्षितविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं. 2043
वैशाख वदी-5

कालधर्म
वि.सं. 2073
कार्तिक
सुदी-12

दीक्षापर्याय 30 वर्ष

अहमदाबाद वरसोडा की चाल में श्रेष्ठिवर्य केशवलाल की धर्मपत्नी मंगुबेन ने वि.सं. 1980 फा.सुदी-8 के दिन एक पुत्र को जन्म दिया। नाम रखा गया विट्ठलभाई।

पू. प्रभाकरसूरिजी म.सा. के संपर्क से वैराग्यवासित बने विट्ठलभाई ने वि.सं. 2043 वैशाख वदी-5 के दिन दीक्षा स्वीकार की और वे **मुनि श्री धर्मज्ञविजयजी म.सा.** (बाद में उपाध्याय **श्री धर्मदासविजयजी म.सा.**) के शिष्य बने।

दीक्षा बाद तप-त्याग की आराधना करने लगे। बड़ी उम्र में साबरमती और ज्ञानमंदिर में स्थिरवास रहे। कुछ वर्ष मुंबई में रहे।

80 वर्ष की उम्र में जुबान बंद हो गई। सहवर्ती महात्माओं का अभाव होने से 90 वर्ष की उम्र में **पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.** के सान्निध्य में आ गए। सभी महात्माओं ने उनकी खूब सेवा-शुश्रूषा की।

वि.सं. 2073 में **पू.पं. श्री जयधर्मविजयजी म.सा.** के साथ कामदार कॉलोनी जामनगर में चातुर्मास कर रहे थे, तभी कार्तिक सुदी-12 के दिन श्वास की तकलीफ बढ़ गई। परिस्थिति का ख्याल आने पर **पू. जयधर्मविजयी म.सा.** तथा **हेमधर्मविजयजी म.सा.** के मुख से नवकार श्रवण करते हुए रात्रि में 1.33 बजे कालधर्म को प्राप्त हुए।

पू. मुनि श्री मेघरत्नविजयजी म.सा.

दीक्षा
वि.सं.2055
फाल्गुण वदी-1

कालधर्म
वि.सं.2062
भादो सुदी-12

दीक्षापर्याय 7 वर्ष

बनासकांठा गुजरात के छोटे से वापी गाँव मे रिखबचंदभाई की धर्मपत्नी रामुबेन ने वि.सं. 1987 आसो सुद के शुभ दिन पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक का नाम मानचंद रखा गया।

पू. आचार्यदेव मित्रानंदसूरिजी म.सा. के शिष्य **पू. उपाध्याय श्री तीर्थरत्नविजयजी म.सा.** के संपर्क से मानचंदभाई की वैराग्यभावना दृढ बनी।

परिवार की अनुमति नहीं मिलने पर 68 वर्ष की उम्र में वि.सं. 2055 फागुण कृष्णा एकम् के शुभ दिन अहमदाबाद में **पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय मित्रानंदसूरिजी म.सा.** के वरद हस्तों से दीक्षा लेकर **पू. मुनि श्री तीर्थरत्नविजयजी म.सा.** के शिष्य बन गए।

दीक्षा के समाचार बाद परिवारजनों ने धामधूम से बड़ी दीक्षा की।

गुरुनिश्रा में रहकर नित्य एकासना, पाँच तिथि आयंबिल व चातुर्मास में वर्धमान तप की ओलियाँ करते थे।

वि.सं. 2062 में **पू.उपा. श्री महायशविजयजी म.सा.** एवं **पू. मुनि श्री तीर्थरत्नविजयजी म.सा.** के साथ डीसा में चातुर्मासरत थे, तभी स्वास्थ्य बिगड़ने पर कैंसर का निदान आया। योग्य उपचार करने पर भी सुधार नहीं हुआ और भादों सुदी-12 के दिन डीसा में अत्यंत ही समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए।

शासन प्रभावक, सुविशाल गच्छाधिपति प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा के शिष्यरत्न अध्यात्मयोगी, नि:स्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य श्री का शिष्य परिवार

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
1.	पू.पं. श्री हर्षविजयजी म. • गृहस्थ नाम : हीराचंद साकलचंद	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	सुरत	वि.सं.-1959 पोष सुदी-15	वि.सं.-1988 जेठ सुद-7	100 ओली सं. 2007, पंन्यास पद 2022 गुर्वाज्ञा समर्पित
2.	पू.मु. श्री पद्मप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : प्राणलाल अमृतलाल	**पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.**	वढ़वाण	वि.सं.-1970 मगसर वद-8	वि.सं.-1987 असाढ़ सुद-10	कालधर्म वि.सं. 2031 ज्ञानमंदिर अहमदाबाद,
3.	पू.मु. श्री चरणविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चंदुभाई तलकचंद	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	सुरत	वि.सं.-1956 चैत्र वद-14	वि.सं.-1990 मग. वदी-11	महा तपस्वी, गुरु समर्पित कालधर्म वि.सं. 2005 चैत्र वद-5
4.	पू.मु. श्री महानंदविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मगनभाई	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	मोरबी	वि.सं.-1961 आसो वद-11	वि.सं.-1996 का. वद-10	वर्धमान तप की 100 + 52 ओली समाधिमग्न
5.	पू.मु. श्री चंद्राननविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मगनभाई	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	अहमदा-बाद	वि.सं.-1944 महा सुदी-12	वि.सं.-1996 माग. सुद-6	कालधर्म वि.सं. 2018 का. सुद-13 समता साधक
6.	पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म. • गृहस्थ नाम : केशवजी	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	मोटा-मांढा	वि.सं.-1975 फा.सुद-11	वि.सं.-1998 वैशाख सुद-5	आचार्यपद सं.2038, नवरंगपुरा अहमदाबाद अद्भुत समाधि साधक
7.	पू.मु. श्री कनकप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : कल्याणजीभाई	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	वेरावल		वि.सं.-1999 जेठ सुद-	कालधर्म 2004, जामनगर

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
8.	पू.मु. श्री चंद्रयशविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चुन्नीलाल प्रतापजी	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	बिसलपुर (राज.)	सं.-1980 श्रावण सुद-5	सं.-2000 जेठ सुद-5	वर्धमान तप 100+52 ओली, 1008 संलग्न आयंबिल
9.	पू.मु. श्री कैलासप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : छोटालाल पूनमचंद	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	कोसेलाव (राज.)	सं.-1947 मा. सुद-10	सं.-2001 मा. सुद-10	कालधर्म 2031, आसो वदी-12 प्रशांतमूर्ति
10.	पू.मु. श्री कल्याणप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : कांतिलाल केशवलाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	अहमदा-बाद	सं.-1965 श्रावण वद-3	सं.-2001 माग.सुद-14	वर्धमान तप 100 वीं ओली में कालधर्म रत्नत्रयी साधक
11.	पू.मु. श्री धर्मरत्नविजयजी म. • गृहस्थ नाम : धरमचंद नरशीभाई	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	भावनगर	सं.-1952 श्रावण सुद-11	सं.-2003 महावद-6	वर्धमान तप की लगभग 80 ओली कालधर्म महावद-14, सं-2035, पाटण
12.	पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म. गृहस्थ नाम : जेसिंगभाई चिमनलाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	जूना डीसा	सं.-1985 वै.वद-6	सं.-2006	वर्धमान तप की प्राय: 75 ओली, आचार्य पद सं.2043, पोष वदी-6, डीसा शासन प्रभावक, विशुद्ध संयमी
13.	पू.पं. श्री पुंडरीकविजयजी म. • गृहस्थ नाम : पन्नालाल पोपटलाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	सुरेन्द्र-नगर	सं.-1991 भादो सुद-4	सं.-2007 महा सुद-12	वर्धमान तप की 70 ओली, पन्यास पद 2037 सदानंदी
14.	पू.उपाध्याय श्री महायशविजयजी म.• गृहस्थ नाम : मोतीलाल नाथालाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	जूना डीसा	सं.-1999 सं.-1979 भादो सुद-13	सं.-2008 महा सुद-8	वर्धमान तप की 70 ओली, उपाध्याय पद-2052 मार्ग. सुद-3 नवकार साधक

हार्दिक श्रद्धांजलि

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
15.	पू.मु. श्री कीर्तिकांतविजयजी म. • गृहस्थ नाम : कांतिलाल कालिदास	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	आसेड़ा	सं.-1981 आसो सुद-7	सं.-2008 महा सुद-10	वर्धमान तप की 85 ओली, जयणा प्रेमी
16.	पू.मु. श्री भद्रविजयजी म. • गृहस्थ नाम : भोगीलाल हरजीवनदास	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	राधनपूर	सं.-1958 जेठ सुद-1	सं.-2010 कार्तिक वद-10	कालधर्म सं. 2011 मुंबई
17.	पू.मु. श्री वारिषेणविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चिमनलाल मगनलाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	जूना डीसा	सं.-1966 जेठ सुद-14	सं.-2012 वैशाख सुद-11	कालधर्म सं. 2051 विशुद्ध संयमी
18.	पू.मु. श्री महासेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : माणेकभाई पुंजालाल	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	मोटा मांढा (हालार)	सं.-1971 कार्तिक सुद-1	सं.-2013 वैशाख सुद-3	कालधर्म सं. 2044, जेठ वदी-6 आराधनाधाम (हालार)
19.	पू.मु. श्री चारित्रभूषणविजयजी म. गृहस्थ नाम : वसंत	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	जिथरी	सं.-2002 जेठ सुद-2	सं.-2033 कार्तिक वद-5	यतनाप्रेमी
20.	पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म. गृहस्थ नाम : राजमल छगनराजजी	**पू.पं. श्री भद्रंकरविजयजी म.**	बाली (राज.)	सं.-2014 भादो सुद-3	सं.-2033 महा सुद-13	प्रभावक प्रवचनकार एवं हिन्दी साहित्यकार आचार्य पद, सं.2067, पोष वद-1, थाणा
अध्यात्मयोगी नि:स्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य श्री के प्रशिष्य–प्रप्रशिष्य आदि						
1.	पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म. • गृहस्थ नाम : प्रेमचंद	**पू.मु. श्री चरणविजयजी म.**	बिसलपूर	सं.-1971 जेठ सुदी-11	सं.-1998 वैशाख सुद-5	वर्धमान तप 100 + 8 ओली, आ.पद ढोढर(MP) वि.सं.-2038, सौजन्यमूर्ति

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
2.	पू.मु. श्री हीरविजयजी म. • गृहस्थ नाम : हंसराज पुंजाभाई	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	नवागाम (हालार)	सं.-1966 असाढ़	सं.-2005 वैशाख वद-6	कालधर्म सं.2012
3.	पू.मु. श्री खांतिविजयजी म. • गृहस्थ नाम : खेराजभाई उमरशी	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	गोधरा (कच्छ)	सं.-1962 का.सुद-7	सं.-2006 वैशाख वद-6	वर्धमान तप की लगभग 82, ओली गुर्वाज्ञा पालक
4.	पू.मु. श्री धुरंधरविजयजी म. गृहस्थ नाम : धीरज मोतीलाल	**उपा. श्री महायशविजयजी म.**	जुना डीसा	सं.-2000 फा. सुद-10	सं.-2008 महा सुद-8	प्रभावक प्रवचनकार, आशु कवि
5.	पू.मु. श्री चंद्राशुविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चुन्निलाल हंसराज	**पू.आ. श्री प्रद्योतनसूरिजी म.**	लुणावा	सं.-1964 फागुण सुद-2	सं.-2007 महा सुद-11	वर्धमान तप की 100 ओली+15 वर्षीतप समतामूर्ति
6.	पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म. गृहस्थ नाम : केशवजी माणेकलाल	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	मोटा मांढा (हालार)	सं.-1998 जेठ सुद-2	सं.-2011 वैशाख सुद-7	समाधि मग्न समतामूर्ति, कुशल संचालन
7.	पू.पं. श्री जिनसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : जेठमल प्रेमचंद	**पू.मु.श्री कल्याणप्रविजयजी म.**	उथमण (राज)	सं.-1985 वै. सुद-6	सं.-2014 महा सुद-13	वर्धमान तप 100 + 100 + 48 ओली पंन्यास पद वि.सं. 2055 स्वाध्यायप्रेमी
8.	पू.आ. श्री मल्लिषेणसूरिजी म. • गृहस्थ नाम : मगनभाई भीखमचंद	**पू.पं. श्री हर्षविजयजी म.**	लास (राज.)	सं.-1990 असाढ़ वद-11	सं.-2016 महा सुद-10	आ.पद वि.सं.2055 मार्ग.सुद-3 जामनगर 6 मासक्षमण, 400 अट्ठम महातपस्वी

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
9.	पू.मु. श्री कमलसेनविजयजी म. गृहस्थ नाम : केशवजी जेसिंगभाई	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	कजुरडा	सं.-1990 का. सुद-15	सं.-2019 फागण सुद-3	नवकार मंत्र का 25 करोड का जाप
10.	पू.मु. श्री अजितसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : लवजीभाई धीरजभाई	**पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	मालवाडा (राज.)	सं.-1964	सं.-2021 फागण सुद-7	नित्य एकासना कालधर्म सं. 2046, नवाडीसा
11.	पू.मु. श्री कलाभूषणविजयजी म. • गृहस्थ नाम : कपूरचंद चिमनाजी	**पू.मु.श्री कैलासप्रभविजयजी म.**	गोहिली (राज.)	सं.-1962 आ.वद-5	सं.-2022 जेठ वद-2	कालधर्म सं.2025
12.	पू.मु. श्री सोमप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : शांतिलाल मंगलदास	**पू.आ.श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	पालडी	सं.-1985 आसो वद-10	सं.-2029 वैशाख वद-6	वर्धमान तप की 90 ओली वैयावच्चप्रेमी
13.	पू.मु. श्री चारित्रप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चैसरलाल वरधीचंद	**पू.आ.श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	उदयपूर (राज.)	सं.-1976 जेठ वद-13	सं.-2030 जेठ सुद-10	कालधर्म सं.2057 प्रशांतमूर्ति
14.	पू.आ. श्री मनमोहनसूरिजी म. गृहस्थ नाम : मगनभाई वीरचंद	**पू.आ.श्री प्रद्योतनसूरिजी म.**	लास (राज.)	सं.-2003 चैत्र सुद-11	सं.-2031 वैशाख सुद-13	शांत स्वभाव, सेवाभावी, आचार्य–पदवी पोष वदी-1, 2067, कैलाश नगर
15.	पू.मु. श्री प्रेमप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : प्रमोदकुमार	**पू. चारित्रप्रभविजयजी म.**	उदयपूर (राज.)	सं.-2018 वद-1	सं.-2032 पोष वद-13	कालधर्म सं.2057
16.	पू.मु. श्री मेरुप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मांगीलाल छगनलाल	**पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	जालोर (राज.)	सं.-1965 मागसर वद-5	सं.-2033 मागसर सुद-6	कालधर्म सं.2041, फा. सुद-7, डीसा

हार्दिक-श्रद्धांजलि

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
17.	पू.मु. श्री वीरसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : वेलजीभाई	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	सिंगच (हालार)	सं.-1978 श्रावण	सं.-2036 वैशाख सुद-13	वर्धमान तप 70 ओली
18.	पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म. गृहस्थ नाम : अशोक प्रेमजीभाई	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	वांकी- (कच्छ)	सं.-2015 मा.सुद-12	सं.-2037 वैशाख सुद-6	आचार्य पदवी संवत-2067, वैशाख वद-6, पालीताणा, कुशल संचालक
19.	पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म. गृहस्थ नाम : राजेश रमणलाल	**पू.आ. श्री कुंदकुंदसूरिजी म.**	अहमदा- बाद	सं.-2017 आ. सुद-10	सं.-2038 वैशाख सुद-13	वर्धमान तप की 100+100 +28 ओली आचार्य पदवी सं.2074 फा.सुद-4 बोरीवली
20.	पू.आ. श्री युगप्रभसूरिजी म. गृहस्थ नाम : शैलेश रणीकलाल	**पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	जूनाडीसा	सं.-2017 मा. वद-5	सं.-2039 कार्तिक वद-11	आ.पद 2075 महा सुद-5 प्रशांतमूर्ति
21.	पू.आ. श्री ह्रींकारप्रभसूरिजी म. गृहस्थ नाम : कमलेश बाबुलाल	**पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	आसेडा	सं.-2016 म. सुद-13	सं.-2040 पोष वदी-6	वर्धमान तप की 100 + 56 वी ओली आचार्य पदवी माघ शुक्ला 4, 2077, सुरत
22.	पू.पं. श्री जयधर्मविजयजी म. गृहस्थ नाम : सुभाष खेतशीभाई	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	वडालिया सिंहण (हालार)	सं.-2017 म. वद-6	सं.-2041 वै. सुद-12	वर्धमान तप की 100+22 ओली, सेवाभावी पंन्यास पदवी सं.2074, म.वद-7
23.	पू.मु. श्री पुण्यसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : प्रेमजीभाई देवशी	**पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.**	वाँकी (कच्छ)	सं.-1974 भादों सुद-7	सं.-2043 जेठ सुद-2	कालधर्म सं. 2049 आराधना धाम शासनप्रेमी
24.	पू.पं. श्री हार्दश्रमणविजयजी म. गृहस्थ नाम : रमेश चिमनलाल	**पू.आ. श्री जिनप्रभसूरिजी म.**	पालड़ी	सं.-2021 भादों वद-4	सं.-2043 जेठ सुद-10	प्रभावक प्रवचनकार पंन्यास पदवी सं. 2073, वै.सु. 13 अमदावाद

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
25.	पू.मु. श्री अमितप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : मोतीलाल ताराचंद	**पू.पं. श्री युगप्रभविजयजी म.**	जूना डीसा	सं.-1995 पौष वद-5	सं.-2045 वैशाख सुद-5	वर्धमान तप की 100 ओली
26.	पू.पं. श्री अर्हंप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : अतुल रतिलाल	**पू.आ. श्री युगप्रभसूरिजी म.**	जूना डीसा	सं.-2019 माग. वद-8	सं.-2045 वैशाख सुद-5	पंन्यास पदवी, सं.2073, जेठ सुद-4, प्रभावक प्रवचनकार
27.	पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : विपुल रमणीकलाल	**पू.आ. श्री युगप्रभसूरिजी म.**	जूना डीसा	सं.-2020 चैत्र वद-4	सं.-2045 वैशाख सुद-5	पंन्यास पदवी, सं.2073, जेठ सुद-4, वैराग्य पोषक वाचनादाता
28.	पू.मु. श्री पूर्णप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : रमणीकभाई चिमनलाल	**पू.आ. श्री ह्रींकारप्रभसूरिजी म.**	भीलड़ि- याजी	सं.-1992 मागसर वद-5	सं.-2047 फा. वदी-3	काळधर्म 2076, अ.सुद-2
29.	पू.मु. श्री नंदिप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : तेजपाल रमणीकलाल	**पू.मु. श्री पूर्णप्रभविजयजी म.**	भीलड़ि- याजी	सं.-2024 वै. वद-1	सं.-2047 फागुण वदी-3	वर्धमान तप 75 ओली स्वाध्याय प्रेमी
30.	पू.मु. श्री निर्मलयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : नीलेश सुमतिलाल	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	वढवाण	सं.-2021 आषाढ़ सुद-12	सं.-2047 जेठ वद-6	वर्धमान तप 100+75 ओली प्रसन्नमूर्ति
31.	पू.मु. श्री धन्यसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : फूलचंद भीकमचंद	**पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.**	लास (राज.)	सं.-1997 आसो सुद-11	सं.-2050 मग. सुद-8	कालधर्म सं.2066 पालीताणा महातपस्वी
32.	पू.मु. श्री दिव्यसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चंद्रकांत हिंमतलाल	**पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.**	पाटण	सं.-2012 जेठ वद-8	सं.-2050 वै सुद-5	कालधर्म सं.2055 मगसर वदी-30 पालीताणा

हार्दिक-श्रद्धांजलि

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
33.	पू.गणि श्री जिनधर्मविजयजी म. गृहस्थ नाम : जिज्ञेस वसनजी सोनी	**पू.पं.श्री जयधर्मविजयजी म.**	लुणी (कच्छ)	सं.-2032 पौष सुद-4	सं.-2051 वै वदी-11	वर्धमान तप 64 ओली, सेवा भावी गणि पदवी सं.2074
34.	पू. मुनि श्री हर्षसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : हरिभाई देवसीभाई	**पू.पं. श्री जिनसेनविजयजी म.**	मांडवी (कच्छ)	सं.-1992 मु. सुद-13	सं.-2053 वै सुद-6	वर्धमान तप 100 + 25 ओली तप साधक
35.	पू. मुनि श्री उदयरत्नविजयजी म. • गृहस्थ नाम : उमेदमल रतनचंद	**पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.**	बीजापुर (राज.)	सं.-1991 आ. वद-12	सं.-2053 जेठ सुद-10	वर्धमान तप 100 ओली समतामूर्ति
36.	पू. मुनि श्री मुक्तिसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मोहनभाई सवचंद	**पू.आ. श्री मल्लिषेणसूरिजी म.**	डीसा (सूरत)	सं.-1989 का. वद-	सं.-2054 महा सुद-13	कालधर्म सं. 2060 जामनगर
37.	पू. मुनि श्री हर्षकीर्तिविजयजी म. गृहस्थ नाम : पीयूष रमणीकलाल	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	राधनपुर	सं.-2030 वै. सुद-8	सं.-2054 महा सुद-13	प्रभावक प्रवचनकार
38.	पू. मुनि श्री हेमतिलकविजयजी म. गृहस्थ नाम : मितुल शांतिलाल	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	रावलसर (हालार)	सं.-2039 जेठ वद-8	सं.-2054 महा सुद-13	मधुर प्रवचनकार
39.	पू. मुनि श्री अजितयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : अमित हसमुखलाल	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	वढवाण	सं.-2024 पौष सुद-8	सं.-2054 पौष वद-6	वर्धमान तप 100 + 37 ओली
40.	पू. मुनि श्री नयप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : रसिकलाल अमृतलाल	**पू.पं. श्री अर्हंप्रभविजयजी म.**	कोल्हापुर डीसा	सं.-2000 मग. सुद-1	सं.-2054 महा सुद-13	वर्धमान तप 55 ओली, 5 मासक्षमण

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
41.	पू. गणि श्री प्रशमप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : पुनीत नरेशभाई शाह	**पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	राजपुर डीसा	सं.-2035 भा. सुद-3	सं.-2054 माघ शु-13	प्रवचनकार एवं वाचना दाता
42.	पू. मुनि श्री जिनभद्रविजयजी म. गृहस्थ नाम : जिनेश प्रेमजीभाई	**पू.गणि. श्री जिनधर्मविजयजी म.**	पत्री (कच्छ)	सं.-2042 भादों सुद-11	सं.-2055 वै. सु-7	सेवाभावी, स्वाध्याय रसिक
43.	पू. मुनि श्री प्रशांतयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : प्रकाश नेमिचंदजी	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	सिरोडी (राज.)	सं.-2028, भा. वदी अमावस्या	सं.-2056 महा सुदी-13	वर्धमान तपकी 94 ओली सेवाभावी
44.	पू.मुनि श्री इन्द्रसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : लालचंद भीकमचंद	**पू.आ. श्री मल्लिषेण सू. म.**	लुणावा (राज.)	सं.-1995 चैत्र सुद-13	सं.-2055 पै. सुद-13	कालधर्म सं. 2073 पालीताणा
45.	पू.मुनि श्री कनकसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : कांतिलाल राजमल	**पू.आ. श्री मल्लिषेण सू. म.**	लास (राज.)	सं.-1996 चैत्र सुद-14	सं.-2056 वै. सुद-14	कालधर्म सं. 2070 जामनगर अद्‌भुत समाधि साधक
46.	पू.मु. श्री श्रमणयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : श्रेणिक जीतमलजी	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	वडगाँव (राज.)	सं.-2032 जेठ वद-8	सं.-2057 वैशाख वद-2	वर्धमान तप की 98 ओली न्याय व आगमवेत्ता
47.	पू.मु. श्री निर्वाणयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : निहालचंद चिमनाजी	**पू.गणी श्री अजितयश वि.म.**	बाली (राज.)	सं.-2001 चैत्रवदी-4	सं.-2058 कार्तिक वद-9	वर्धमान तप की 99 ओली सरलहृदयी
48.	पू.मु. श्री जयंतयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : जयेशभाई जीतुभाई	**पू.मु. श्री श्रमणयशविजयजी म.**	खंभात	सं.-2038 वै. वदी-8	सं.-2058 का. वद-9	वर्धमान तप 100 + 30 ओली तप प्रेमी

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
49.	पू.मु. श्री पुण्यभद्रविजयजी म. • गृहस्थ नाम : प्रेमजीभाई आशुभाई	**पू.आ. श्री मनमोहनसूरिजी म.**	पत्री (कच्छ)	सं.-2004 फागुण सुद-4	सं.-2058 कार्तिक वद-14	कालधर्म सं.2067 चैत्र सुदी-1 पालीताणा
50.	पू.मु. श्री संयमयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : संगमकुमार हसमुखभाई	**पू.मु. श्री जयंतयशविजयजी म.**	वढवाण	सं.-2020 वै. सुद-5	सं.-2058 मगसर सुद-2	वर्धमान तप 100 + 46 ओली जयणाप्रेमी
51.	पू. मुनि श्री मुक्तिधरविजयजी म. गृहस्थ नाम : मगनभाई जेतमलजी	**पू.मु. श्री धुरंधरविजयजी म.**	रोहिड़ा	सं.-1990 मागसर वदी-7	सं.-2058 महा. वद-5	वर्धमान तप की 100 ओली नवकार साधक
52.	पू. मुनि श्री हेमवर्धनविजयजी म. गृहस्थ नाम : ज्ञान्तिलाल चंदणीया	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	रावलसर (हालार)	सं.-2007 असाढ सुदी-10	सं.-2058 वैशाख वद-6	गुणानुरागी
53.	पू. मुनि श्री केवलरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : संदीप अमरचंदजी	**पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.**	लाठाड़ा (राज.)	सं.-2028 अ.वदी अमा.	सं.-2058, वै. वद-10, भायंदर	वर्धमान तप 85 ओली
54.	पू. मुनि श्री हेमरतिविजयजी म. गृहस्थ नाम : गौतम अशोकभाई	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	तलवाणा (कच्छ)	सं.-2039 मगसर सुद-2	सं.-2059 महा सुद-5	वैयावच्चप्रेमी, मधुरकंठी
55.	पू. मुनि श्री कीर्तिरत्नविजयजी म. • गृहस्थ नाम : केसरीमल खेमचंदजी	**पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.**	मेरमंडवा-रा देहुरोड	सं.-2017 महा सुदी-4	सं.-2059 महा सुद-6	कालधर्म सं.2074 मग. वद-9, सादडी महा तपस्वी
56.	पू. मुनि श्री प्रशांतरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : प्रफुल्ल केसरीमलजी	**पू.मु. श्री कीर्तिरत्नविजयजी म.**	देहुरोड	सं.-2044 मगसर वद-10	सं.-2059 महा सुदी-6	मधुर प्रवचनकार

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
57.	पू. मुनि श्री जिनतत्त्वविजयजी म. गृहस्थ नाम : जयंतिभाई गंगाराम पटेल	**पू. पं. श्री हार्दश्रमण वि.म.**	सुरेन्द्र-नगर		सं.-2057 का.वदी-5	वर्धमान तप की 62 ओली नित्य एकासना
58.	पू. मुनि श्री तपोयशविजयजी म. • गृहस्थ नाम : रमणभाई चिमनलाल	**पू. पं. श्री हार्दश्रमण वि.म.**	देवडा	सं.-1989	सं.-2057 चैत्र वद-9	20 वर्षीतप, नित्य एकासना कालधर्म सं.2077 का.सु.5 सुरत
59.	पू. मुनि श्री जयंतप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : जयेशकुमार नवीनभाई	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	नंदुरबार	सं.-2021 श्रा. सुद-3	सं.-2060 माघ सुद-6	वर्धमान तप 100 + 84 ओली
60.	पू. मुनि श्री हेमहर्षविजयजी म. गृहस्थ नाम : रमणीकलाल भीखाभाई	**पू.पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.**	बेणप	सं.-2008 का. वद-1	सं.-2061,माघ वद-7, राधनपुर	नवकारप्रेमी
61.	पू. मुनि श्री हेमकीर्तिविजयजी म. गृहस्थ नाम : भाविनभाई रमणीकलाल	**पू.मु. श्री हर्षकीर्तिविजयजी म.**	बेणप	सं.-2046, माघ वद-10	सं.-2061, माघ वद-7, राधनपुर	श्रुत अभ्यासी
62.	पू. मुनि श्री निर्ममयशविजयजी म. • गृहस्थ नाम : नवीनभाई हीराचंद	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	नंदुरबार	सं.-1991, भादो सुद-7	सं.-2062, वै. सुद-4, मलाड	कालधर्म सं.2065, बोरीज तीर्थ वै.सु. 8
63.	पू. मुनि श्री संवेगप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : गौतमबाबूलाल वारिया	**पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	पालड़ी दीओदर	सं.-2043, का. सुद-8	सं.-2062, वै. सुद-5,	संयमप्रेमी
64.	पू. मुनि श्री जिनांगयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : जीतमलजी कपूरचंदजी	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	वडगाँव (शिवगंज)	सं.-2000, अ.सु.-12,	सं.-2064, वै. सुद-14, कुर्ला	वर्धमान तप की 43 ओली

हार्दिक-श्रद्धांजलि

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
65.	पू. मुनि श्री अमितयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : अशोकभाई भीखाभाई	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	पसुंज	सं.-2006, आ.सोसु.-6,	सं.-2064, वै. वद-6	वर्धमान तप 100 + 46 ओली संलग्न 4612 आयंबिल (13 वर्ष से)
66.	पू. मुनि श्री जिनाज्ञायशविजयजी म. गृहस्थ नाम : जितेन्द्रकुमार शांतिलाल	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	खंभात	सं.-2010 मा.सु.-4	सं.-2065, का. वद-11	वर्धमान तप 52 ओली
67.	पू. मुनि श्री मोक्षांगयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : मिलन पारसमलजी	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	चारभुजा (मेवाड)	सं.-2038 का. वद-12	सं.-2065, वै. सुद-12	वर्धमान तप 46 ओली सरल स्वभावी
68.	पू. मुनि श्री मोक्षप्रभविजयजी म. • गृहस्थ नाम : शैलेषभाई शाह	**पू.आ. श्री युगप्रभसूरिजी म.**	पाटण	सं.-2011 फा. वद-14	सं.-2067 पौष वद-3	कालधर्म सं. 2074, मा.सुद-6 दहीसर, मुंबई
69.	पू. मुनि श्री जिनांगप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : जयंतिभाई	**पू. पं.श्री संयमप्रभविजयजी म.**	तखतगढ	सं.-2005 पो.वद-))	सं.-2067 वैशाख सुद-2	संयमप्रेमी
70.	पू. मुनि श्री परमार्थप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : जयेशभाई कोठारी	**पू.पं.श्री संयमप्रभविजयजी म.**	रीछेड (मेवाड)	सं.-2041 वैशाख वद-5	सं.-2067 वैशाख सुद-3	श्रुतरसिक
71.	पू. मुनि श्री नयविजयजी म. • गृहस्थ नाम : गोकुलभाई	**पू.आ. श्री मनमोहनसूरिजी म.**	सूरत	सं.-1993 आ.वद-8	सं.-2067, जेठ वद-5	कालधर्म सं. 2061 मोटा मांढ़ा
72.	पू. मुनि श्री हेमांगयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : रूपेश पुखराजजी	**पू.आ. श्री नयभद्रसूरिजी म.**	और (राज.)	सं.-2043 अषाढ सुद-2	सं.-2068, फा. सुद-4	वर्धमान तप 52 ओली सेवाभावी

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
73.	पू. मुनि श्री शालिभद्रविजयजी म. गृहस्थ नाम : विनोद पुखराजजी	**पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.**	खिमेल	सं.-2014, मगसर वदी-2	सं.-2068, जेठ सुदी-13	प्राय: नित्य एकासना
74.	पू. मुनि श्री हेमप्रितविजयजी म. गृहस्थ नाम : नीरव हेमेन्द्रभाई	**पू.आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	पोरबंदर	सं.-2044 चैत्र वद-4	सं.-2068 जेठ सुदी-13	वैयावच्चप्रेमी
75.	पू. मुनि श्री हितार्थप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : दर्शिल विजयकुमार	**पू.मु.श्री प्रशमप्रभविजयजी गणि**	आसेडा	सं.-2041 आ. वद-5	सं.-2069, पौष सुदी-6	श्रुतरसिक
76.	पू. मुनि श्री पावनप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : पीयूष हुकमीचंद	**पू.पं.श्री संयमप्रभविजयजी म.**	शिवगंज	सं.-2042, भा. वद-30	सं.-2069, पौष सुदी-6	स्वाध्यायप्रेमी
77.	पू. मुनि श्री निसर्गप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : प्रेम रमेशभाई शाह	**पू.पं.श्री संयमप्रभविजयजी म.**	बीजापुर (राज.)	सं.-2053, भा. सुद-7	सं.-2069, पौष सुदी-6	संयमप्रेमी
78.	पू. मुनि श्री सिद्धप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम:मुक्तिभाई अमृतलाल वारिया	**पू.पं.श्री हार्दश्रमणविजयजी म.**	पालड़ी (दीओदर)	सं.-2013, वै. सुद-14	सं.-2069, महा सुदी-3	प्रभुभक्ति रसिक
79.	पू. मुनि श्री कल्पप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम:कौशिक मुक्तिलाल वारिया	**पू. मु. श्री सिद्धप्रभविजयजी म.**	पालड़ी (दीओदर)	सं.-2047, जेठ वदी अमा.	सं.-2069, महा सुदी-3	वैयावच्च रसिक
80.	पू. मुनि श्री राजप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : अक्षय मुक्तिलाल वारिया	**पू. मु. श्री कल्पप्रभविजयजी म.**	पालड़ी (दीओदर)	सं.-2053, महा सुदी-3	सं.-2069, महा सुदी-9	श्रुतप्रेमी

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
81.	पू. मुनि श्री श्रुतप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : सुजल परेशभाई	**पू. पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	डीसा	सं.-2046, आ. वद-8	सं.-2070, माग. सुद-10	संयमप्रेमी
82.	पू. मुनि श्री हेमधर्मविजयजी म. गृहस्थ नाम : निकुंज सनतभाई	**पू. आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.**	बोटाद	सं.-2052, का. सुद-1	सं.-2070, म. सुद-9	सेवाभावी
83.	पू. मुनि श्री निस्वार्थप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : कौशल संजयभाई	**पू.मु. श्री संवेगप्रभविजयजी म.**	वेरावल	सं.-2052, वै. सुद-5	सं.-2070, वै. वद-12	स्वाध्याय रसिक
84.	पू. मुनि श्री हेमरुचिविजयजी म. गृहस्थ नाम : गौरव दिनकरभाई	**पू.मु. श्री हेमतिलकविजयजी म.**	बोटाद	सं.-2040, अ. वदी-5	सं.-2071, वै. सुद-7	सेवाभावी
85.	पू. मुनि श्री स्थूलभद्रविजयजी म. गृहस्थ नाम : नीलेश हसमुखजी महेता	**पू.आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.**	मुंडारा	सं.-2045, का. वदी-14	सं.-2071, वै. सुद-7	स्वाध्यायप्रेमी
86.	पू. मुनि श्री नव्यप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : नरेशभाई हसमुखलाल	**पू.आ. श्री ह्रींकारप्रभसूरिजी म.**	जूनागढ़	सं.-2019, अ. सुद-6	सं.-2071, जेठ सुदी-13	सेवाभावी
87.	पू. मुनि श्री यशोभद्रविजयजी म. गृहस्थ नाम : योगेश पोपटलाल	**पू.मु. श्री स्थूलभद्रविजयजी म.**	खोड़ (राज.)	सं.-2052, मग. वदी-30	सं.-2073, महा सुद-10	कालधर्म सं.2073, महा वदी-30
88.	पू. मुनि श्री मृगांकयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : किरणभाई रायचंद	**पू.मु.श्री प्रशांतयशविजयजी म.**	नांदिया	सं.-2037, भा. वदी-30	सं.-2074, का. वद-12	तपप्रेमी

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
89.	पू. मुनि श्री हेमभद्रविजयजी म. गृहस्थ नाम : श्रेयांस	**पू.मुनि श्री जिनभद्रविजयजी म.**	खंभात	सं.-2056, फा.वदी-14	सं.-2074, माघ शुक्ला-10	
90.	पू. मुनि श्री धर्मांगयशविजयजी म. गृहस्थ नाम : भरतभाई	**पू.आ.श्री नयभद्रसूरिजी म.**	खंभात	सं.-2009, पौ. सुद-14	सं.-2074, वै. सुद-3	
91.	पू. मुनि श्री वरध्यानप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : विरागकुमार निलेशभाई शाह	**पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	जुनाडीसा	सं.-2056, आसो वद-3 दि.16-10-00	सं.-2075, म.वद.-6	
92.	पू. मुनि श्री योगाशयप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : जैनमकुमार चंद्रकांतभाई दोशी	**पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	जेसर	सं.-2064, दि.9-5-96	सं.-2076, म.सु.द्वि-12	
93.	पू. मुनि श्री योगर्षिप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : अक्षयकुमार	**पू.पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.**	—	—	सं.-2076, म.सु.द्वि-12	
94.	पू. मुनि श्री विधानप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : विश्वकुमार दर्शनकुमारजी दोशी	**पू.मु. श्री योगशयप्रभ वि.म.**	जेसर	दि.15-8-09	सं.-2076, म.सु.द्वि-12	
95.	पू. मुनि श्री प्राज्ञप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : प्रथमकुमार अल्केशकुमारजी दोशी	**पू.मु. श्री श्रुतप्रभविजयजी म.**	—	सं.-2061 दि.29-8-03	सं.-2076, म.सु.-7	
96.	पू. मुनि श्री सोहप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : आर्यकुमार दिल्पेशकुमारजी	**पू.मु. श्री प्रशमप्रभविजयजी म.** गणि	बिजापुर (राज.)	दि.24-11-04	सं.-2076, फा.सुद.-11	

हार्दिक-श्रद्धांजलि

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
97.	पू. मुनि श्री शुभाशयप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम:मितकुमार संजयभाई शाह	**पू.मु. श्री निस्वार्थप्रभविजयजी म.**	बोरीवली मुंबई	सं.-2057	महा सुद-12	
98.	पू. मुनि श्री भावार्थप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम:शुभकुमार निलेशभाई शाह	**पू.पं. प्रवर श्री संयमप्रभविजयजी म.**	सायन मुंबई	सं.-2062	महा सुद-12	
99.	पू. मुनि श्री भवतीतप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम:विदितकुमार प्रवेशभाई शाह	**पू.पं. प्रवर श्री संयमप्रभविजयजी म.**	माटुंगा मुंबई	सं.-2063	महा सुद-12	
100.	पू. मुनि श्री सम्यग्रत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : सुरेशभाई हीरालाल शाह	**पू.मु. श्री नयनरत्नविजयजी म.**	जामनगर	सं.-1997 फागण वद-30	सं.-2072 महा सुद-12	
101.	पू. मुनि श्री योगसागरप्रभविजयजी म. गृहस्थ नाम : आशीष महिपालजी	**पू.पं. प्रवर श्री संयमप्रभविजयजी म.**	ढालोप (राज.)	सं.-2061	सं.-2077 चैत्र सुदी-13	
अध्यात्मयोगी नि:स्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य श्री के निश्रावर्ती						
1.	पू. मुनि श्री भावविजयजी म. • गृहस्थ नाम : ओटरमलजी अंबाजी	**पू.मु. श्री अमीविजयजी म.**	नाणा	सं.-1955,	सं.-1983, मगसर सुदी-5	100 ओली सं. 2013, पौष वदी-13 कालधर्म सं. 2053
2.	पू. मुनि श्री रोहितविजयजी म. • गृहस्थ नाम : रसीकलाल चंदुलाल	**पू. आ.श्री रामचंद्रसूरिजी म.**	राधनपुर	सं.-1971, महावदी-1	सं.-1988, चैत्र सुद-5	कालधर्म वि.सं. 2016 भोपणी
3.	पू. मुनि श्री महाभद्रविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मोहनलाल तल्लुभाई	**पू.आ.श्री रामचंद्रसूरिजी म.**	चाणस्मा	सं.-1954, माग.सुद-7	सं.-1998, सं.2028	कालधर्म कार्तिक वद-13

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
4.	पू. मुनि श्री विभाकरविजयजी म. • गृहस्थ नाम : विजयलाल लीलाधर	**पू.उपा. श्री चारित्रविजयजी म.**	भुज	सं.-1971,	सं.-1999 मा. सुद-सं.-6	अंत में 28 उपवास से अनशन पूर्वक कालधर्म, समतामूर्ति
5.	पू. मुनि श्री मित्रविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मिश्रीमाल झूठानी	**पू.मुनि श्री सौभाग्यविजयजी म.**	आहोर	सं.-1982, भादो वदी-14	सं.-2010 महा सुद--10	वर्धमान तप की 100 ओली सेवाभावी
6.	पू. मुनि श्री तत्त्वज्ञविजयजी म. • गृहस्थ नाम : तलकचंद लालचंद	**पू.पं. श्री रोहितविजयजी म.**	ध्रांगध्रा	सं.-1975,	सं.-2011 जेठ सुद--10	कालधर्म सं. 2045, फा.वद-1, अहमदाबाद
7.	पू.मु. श्री जयंतभद्रविजयजी म. • गृहस्थ नाम : जयंतिलाल मणिलाल	**पू.मु.श्री महाभद्रविजयजी म.**	राधनपूर	सं.-1975 कार्तिक सुद-3	सं.-2025 मागसर सुद-6	100 + 82 ओली, गुणानुरागी कालधर्म सं.2044, जालोर
8.	पू.मु. श्री जयमंगलविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मोहनभाई अमरशी	**पू.मु.श्री महाभद्रविजयजी म.**	जुनागढ	सं.-1973 फा. वद-11	सं.-2026 वैशाख सुद-6	वर्धमान 100 ओली आयंबिल प्रेमी
पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. के प्रशिष्यरत्न पू.पं.श्री वज्रसेनविजयजी म.सा. के निश्रावर्ती						
9.	पू. मुनि श्री चंद्रसेनविजयजी म. • गृहस्थ नाम : चंपक छगनलाल	**पू.पं. श्री चंद्रशेखरविजयजी म.**	तलाजा	सं.-1981, का.संद-11	सं.-2001 महा सुद--11	कालधर्म सं. 2065, पालीताणा सेवाभावी
10.	पू.मु. श्री हितविजयजी म. • गृहस्थ नाम : हीरालाल दलीचंदजी	**पू.आ.रविचंद्रसूरिजी म.**	सिरोह	वि.सं.-1989 मग.सुद-1	वि.सं.-2018 पोष सुदी-12	ज्ञान व साहित्य प्रेमी कालधर्म सं.2072, श्रावण वदी-8
11.	पू.मु. श्री मनोबलविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मनसुखभाई खेमचंदभाई	**पू.आ.श्री राजतिलकसूरिजी म.**	उमेटा	वि.सं.-1988 श्रा.वदी-30	वि.सं.-2021 वै. सुदी-6	गुरू भक्ति स्वाध्याय प्रेमी कालधर्म सं.2073, भादो सुदी-11

क्र.	नाम	गुरु का नाम	जन्मभूमि	जन्मदिन	दीक्षा दिन	अन्य-विशेषताएँ
12.	पू.मु. श्री तपोधनविजयजी म. गृहस्थ नाम : बाबुभाई नगीनदासभाई	**पू.आ.श्री रामचंद्रसूरिजी म.**	खंभात	वि.सं.-1986 मगसिर वदी-8	वि.सं.-2023 जेठ. सुदी-13	निर्दोष भिक्षा प्रेमी कालधर्म सं.2056, माघ सुद-14
13.	पू.मु. श्री सुव्रतविजयजी म. • गृहस्थ नाम : जगजीवन गोरधनदास	**पू.आ.श्री सुधांशुसूरिजी म.**	तरेड़	सं.-1982 मा.सुद-8	सं.-2024 वै. सुद-6	कालधर्म सं.2072 मगसर वदी-5
14.	पू.मु. श्री पंकजरत्नविजयजी म.• गृहस्थ नाम : पुखराजजी वृद्धिचंदजी	**पू.आ.श्री जितेन्द्रसूरिजी म.**	सादडी	सं.-1975 जेठ सुद-8	सं.-2031 अ.सुद-9	कालधर्म सं.2064, जाम जोधपुर नवकार प्रेमी
15.	पू.उपा. श्री तीर्थरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : रमेश ताराचंद	**पू.आ. श्री मित्रानंदसूरिजी म.**	डीसा	सं.-2007 म. वद-5	सं.-2039 जेठ सुद-13	वर्धमान तप की 100 + 15 वी ओली उपाध्याय पदवी, अहमदाबाद, सेवाभावी
16.	पू. मुनि श्री नयनरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : नयन मनसुखलाल	**पू.आ. श्री हिमांशुसूरिजी म.**	जामजो- धपुर	सं.-2020 पो. वद-11	सं.-2046 म. सुद-5	प्रसन्नतामूर्ति
17.	पू. मुनि श्री मेघरत्नविजयजी म. • गृहस्थ नाम : मानचंद रिखबचंद बोहरा	**पू.पं. श्री तीर्थरत्नविजयजी म.**	वामी (ब.कां.)	सं.-1987 आ.सु. 13	सं.-2055 वै.सुद-7	वर्धमान तप की 58 ओली कालधर्म सं.2068, भा.सुद-12, डीसा
18.	पू. मुनि श्री देवरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : अंबालाल चुन्निलाल शाह	**पू.आ. श्री मित्रानंदसूरिजी म.**	हीरापुर	सं.-1986 जेठ वद-10	सं.-2033 माघ शुक्ला-13	सहायवृत्ति
19.	पू. मुनि श्री श्रमणरत्नविजयजी म. गृहस्थ नाम : शशिकांत भगवानदास जवेरी	**पू.आ. श्री भव्यदर्शनसूरिजी म.**	पाटण	सं.-1990 फा.वद 14	सं.-2056 मग.सुद-6	एकासना, जाप में अप्रमत्त

स्वाति नक्षत्र में बारीश की एक बूंद

आग में गिरे तो नष्ट हो जाती है,
पहाड पर गिरे तो व्यर्थ जाती है
और
छीप के मुंह में गिरे तो
मोती बन जाती है, संग जैसा रंग !
अध्यात्मयोगी पूज्यपाद पंन्यास प्रवर
श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य रुपी
पारसमणि के संग को पाकर
साधनामय जीवन और समाधिमय
मरण को प्राप्त कर अपने जीवन को
सफल व सार्थक बनानेवाले
अध्यात्मयोगी के शिष्य आदि परिवार को

हार्दिक श्रद्धांजलि

अपने जीवन भी सार्थक बनाना
हो तो कम से कम एक बार
इस पुस्तक का अवश्य
स्वाध्याय करें !